दादा भगवान कथित

निजदोष दर्शन से... निर्दोष!

दादा भगवान कथित

निजदोष दर्शन से... निर्दोष!

मूल गुजराती पुस्तक 'निजदोष दर्शन से... निर्दोष' का
हिन्दी अनुवाद

मूल गुजराती संकलन : डॉ. नीरूबहन अमीन
अनुवाद : महात्मागण

प्रकाशक : अजीत सी. पटेल
महाविदेह फाउन्डेशन
'दादा दर्शन', 5, ममतापार्क सोसाइटी,
नवगुजरात कॉलेज के पीछे, उस्मानपुरा,
अहमदाबाद - ३८००१४, गुजरात
फोन - (०७९) २७५४०४०८, २७५४३९७९

©
All Rights reserved - Shri Deepakbhai Desai
Trimandir, Simandhar City,
Ahmedabad-Kalol Highway, Post - Adalaj,
Dist.-Gandhinagar-382421, Gujarat, India.

प्रथम संस्करण : ३००० प्रतियाँ, जून २०१०

भाव मूल्य : 'परम विनय' और
'मैं कुछ भी जानता नहीं', यह भाव!

द्रव्य मूल्य : २५ रुपये

लेसर कम्पोज़ : दादा भगवान फाउन्डेशन, अहमदाबाद

मुद्रक : महाविदेह फाउन्डेशन (प्रिन्टिंग डिवीज़न),
पार्श्वनाथ चैम्बर्स, नई रिज़र्व बैंक के पास,
उस्मानपुरा, अहमदाबाद-३८० ०१४.
फोन : (०७९) २७५४२९६४, ३०००४८२३

समर्पण

निजदोष दर्शन बिन, बंधन भवोभव का;
खुले दृष्टि स्वदोष दर्शन की, तरे भवसागर कितना।

मैं 'चंदू' माना तब से, मूल भूल की हुई शुरूआत;
'मैं शुद्धात्मा' का भान होते, होने लगे भूलों का अंत।

भगवान ऊपरी, कर्त्ता जग का, फिर लिपटीं अनंत भ्रांतियाँ;
बजे रिकॉर्ड पर माने बोला, उससे चोट देतीं, वाणियाँ।

भूलें लिपटी रही हैं किससे? किया उनका रक्षण सदा;
भूलों को मिल जाती खुराक, कषायों का पेट भरा।

जब तक रहेंगी निज भूलें, तब तक ही है भुगतना;
दिखें स्वदोष जब खुद के, तब पूर्ण निष्पक्षपाती हुआ।

देह-आत्मा के भेदांकन बिन, पक्ष रहे सदा खुद का;
ज्ञानी के भेदांकन द्वारा, रेखांकन आंके स्व-पर का।

फिर दोषों को देखते ही ठाँय, 'सेट' हुआ भीतर मशीनगन;
दोष धोने की मास्टर की, दिखे तब से कर प्रतिक्रमण।

भूल मिटाए वह भगवान, न रहा किसीका ऊपरीपन;
ज्ञानी का अद्‌भुत ज्ञान, प्रकटे निज परमात्मपन।

शुद्धात्मा होकर देखे, अंत:करण का हरएक अणु;
'बावा' के दोष धुलें, सूक्ष्मत्व तक का शुद्धिकरण।

निजदोष दर्शन दृष्टि का, 'दादावाणी' आज प्रमाण;
निजदोष छेदन के लिए अर्पण, ग्रंथ जगत् के चरण।

त्रिमंत्र

दादा भगवान कौन ?

जून १९५८ की एक संध्या का करीब छः बजे का समय, भीड़ से भरा सूरत शहर का रेल्वे स्टेशन, प्लेटफार्म नं. 3 की बेंच पर बैठे श्री अंबालाल मूलजीभाई पटेल रूपी देहमंदिर में कुदरती रूप से, अक्रम रूप में, कई जन्मों से व्यक्त होने के लिए आतुर 'दादा भगवान' पूर्ण रूप से प्रकट हुए। और कुदरत ने सर्जित किया अध्यात्म का अद्‌भुत आश्चर्य। एक घंटे में उन्हें विश्वदर्शन हुआ। 'मैं कौन? भगवान कौन? जगत् कौन चलाता है? कर्म क्या? मुक्ति क्या?' इत्यादि जगत् के सारे आध्यात्मिक प्रश्नों के संपूर्ण रहस्य प्रकट हुए। इस तरह कुदरत ने विश्व के सम्मुख एक अद्वितीय पूर्ण दर्शन प्रस्तुत किया और उसके माध्यम बने श्री अंबालाल मूलजीभाई पटेल, गुजरात के चरोतर क्षेत्र के भादरण गाँव के पाटीदार, कान्ट्रेक्ट का व्यवसाय करनेवाले, फिर भी पूर्णतया वीतराग पुरुष!

उन्हें प्राप्ति हुई, उसी प्रकार केवल दो ही घंटों में अन्य मुमुक्षु जनों को भी वे आत्मज्ञान की प्राप्ति करवाते थे, उनके अद्‌भुत सिद्ध हुए ज्ञानप्रयोग से। उसे अक्रम मार्ग कहा। अक्रम, अर्थात् बिना क्रम के, और क्रम अर्थात् सीढ़ी दर सीढ़ी, क्रमानुसार ऊपर चढ़ना। अक्रम अर्थात् लिफ्ट मार्ग, शॉर्ट कट!

वे स्वयं प्रत्येक को 'दादा भगवान कौन?' का रहस्य बताते हुए कहते थे कि ''यह जो आपको दिखते है वे दादा भगवान नहीं है, वे तो 'ए.एम.पटेल' है। हम ज्ञानी पुरुष हैं और भीतर प्रकट हुए हैं, वे 'दादा भगवान' हैं। दादा भगवान तो चौदह लोक के नाथ हैं। वे आप में भी हैं, सभी में हैं। आपमें अव्यक्त रूप में रहे हुए हैं और 'यहाँ' हमारे भीतर संपूर्ण रूप से व्यक्त हुए हैं। दादा भगवान को मैं भी नमस्कार करता हूँ।''

'व्यापार में धर्म होना चाहिए, धर्म में व्यापार नहीं', इस सिद्धांत से उन्होंने पूरा जीवन बिताया। जीवन में कभी भी उन्होंने किसीके पास से पैसा नहीं लिया बल्कि अपनी कमाई से भक्तों को यात्रा करवाते थे।

आत्मज्ञान प्राप्ति की प्रत्यक्ष लिंक

'मैं तो कुछ लोगों को अपने हाथों सिद्धि प्रदान करनेवाला हूँ। पीछे अनुगामी चाहिए कि नहीं चाहिए? पीछे लोगों को मार्ग तो चाहिए न?''

– दादाश्री

परम पूज्य दादाश्री गाँव-गाँव, देश-विदेश परिभ्रमण करके मुमुक्षु जनों को सत्संग और आत्मज्ञान की प्राप्ति करवाते थे। आपश्री ने अपने जीवनकाल में ही पूज्य डॉ. नीरूबहन अमीन (नीरूमाँ) को आत्मज्ञान प्राप्त करवाने की ज्ञानसिद्धि प्रदान की थीं। दादाश्री के देहविलय पश्चात् नीरूमाँ वैसे ही मुमुक्षुजनों को सत्संग और आत्मज्ञान की प्राप्ति, निमित्त भाव से करवा रही थी। पूज्य दीपकभाई देसाई को दादाश्री ने सत्संग करने की सिद्धि प्रदान की थी। नीरूमाँ की उपस्थिति में ही उनके आशीर्वाद से पूज्य दीपकभाई देश-विदेशो में कईं जगहों पर जाकर मुमुक्षुओं को आत्मज्ञान करवा रहे थे, जो नीरूमाँ के देहविलय पश्चात् आज भी जारी है। इस आत्मज्ञानप्राप्ति के बाद हज़ारों मुमुक्षु संसार में रहते हुए, जिम्मेदारियाँ निभाते हुए भी मुक्त रहकर आत्मरमणता का अनुभव करते हैं।

ग्रंथ में मुद्रित वाणी मोक्षार्थी को मार्गदर्शन में अत्यंत उपयोगी सिद्ध होगी, लेकिन मोक्षप्राप्ति हेतु आत्मज्ञान प्राप्त करना ज़रूरी है। अक्रम मार्ग के द्वारा आत्मज्ञान की प्राप्ति का मार्ग आज भी खुला है। जैसे प्रज्वलित दीपक ही दूसरा दीपक प्रज्वलित कर सकता है, उसी प्रकार प्रत्यक्ष आत्मज्ञानी से आत्मज्ञान प्राप्त कर के ही स्वयं का आत्मा जागृत हो सकता है।

निवेदन

परम पूज्य 'दादा भगवान' के प्रश्नोत्तरी सत्संग में पूछे गये प्रश्न के उत्तर में उनके श्रीमुख से अध्यात्म तथा व्यवहार ज्ञान संबंधी जो वाणी निकली, उसको रिकॉर्ड करके, संकलन तथा संपादन करके पुस्तकों के रूप में प्रकाशित किया जाता हैं। उसी साक्षात सरस्वती का अद्भुत संकलन इस पुस्तक में हुआ है, जो हम सबके लिए वरदानरूप साबित होगी।

प्रस्तुत अनुवाद की वाक्य रचना हिन्दी व्याकरण के मापदण्ड पर शायद पूरी न उतरे, परन्तु पूज्य दादाश्री की गुजराती वाणी का शब्दश: हिन्दी अनुवाद करने का प्रयत्न किया गया है, ताकि वाचक को ऐसा अनुभव हो कि दादाजी की ही वाणी सुनी जा रही है। फिर भी दादाश्री के आत्मज्ञान का सही आशय, ज्यों का त्यों तो, आपको गुजराती भाषा में ही अवगत होगा। जिन्हें ज्ञान की गहराई में जाना हो, ज्ञान का सही मर्म समझना हो, वे इस हेतु गुजराती भाषा सीखें, ऐसा हमारा अनुरोध है।

अनुवाद संबंधी कमियों के लिए आपसे क्षमाप्रार्थी हैं।

पाठकों से...

❖ इस पुस्तक में मुद्रित पाठ्यसामग्री मूलत: गुजराती 'निजदोष दर्शन से... निर्दोष' का हिन्दी रुपांतर है।

❖ इस पुस्तक में 'आत्मा' शब्द का प्रयोग संस्कृत और गुजराती भाषा की तरह पुल्लिंग में किया गया है।

❖ जहाँ-जहाँ पर चंदूलाल नाम का प्रयोग किया गया है, वहाँ-वहाँ पाठक स्वयं का नाम समझकर पठन करें।

❖ पुस्तक में अगर कोई बात आप समझ न पाएँ तो प्रत्यक्ष सत्संग में पधारकर समाधान प्राप्त करें।

❖ दादाश्री के श्रीमुख से निकले कुछ गुजराती शब्द ज्यों के त्यों '*इटालिक्स*' में रखे गये हैं, क्योंकि उन शब्दों के लिए हिन्दी में ऐसा कोई शब्द नहीं है, जो उसका पूर्ण अर्थ दे सके। हालाँकि उन शब्दों के समानार्थी शब्द ( ) में अर्थ के रूप में दिये गये हैं। ऐसे सभी शब्द और शब्दार्थ पुस्तक के अंत में भी दिए गए हैं।

संपादकीय

इस जगत् में खुद बँधा है किससे? दु:ख क्यों भोगने पड़ते हैं? शांति किस तरह मिल सकती है? मुक्ति किस तरह प्राप्त हो सकती है? तो इस जगत् में बंधन खुद को खुद की भूलों से ही है। खुद को जगत् में किसी चीज़ ने बाँधा नहीं है। न तो घर बाँधता है, न ही बीवी-बच्चे बाँधते हैं। न ही धंधे-लक्ष्मी बाँधते हैं और न ही देह बाँध सकता है। खुद के ब्लंडर्स और मिस्टेक से बंधे हैं। अर्थात् निज स्वरूप की अज्ञानता वह सर्व भूलों का मूल है और फिर परिणामस्वरूप अनंत भूलें, सूक्ष्मतम से लेकर स्थूलतम रूप में भूलों का सर्जन होता रहता है।

अज्ञानता से दृष्टि दोषित हुई है और राग-द्वेष होते हैं और नये कर्म बँधते रहते हैं। स्वरूप 'ज्ञान' की प्राप्ति होने से निर्दोष दृष्टि प्राप्त होती है। परिणामस्वरूप राग-द्वेष का क्षय कर, कर्म बंधन से मुक्त होकर वीतराग हो सकते हैं। भूलों का स्वरूप क्या है? खुद अपने आपको समझने में मूल भूल हुई है, फिर खुद निर्दोष है, करेक्ट ही है ऐसा मानने में आता है और सामनेवाले को दोषित मानने में आता है। निमित्त को काटने तक के गुनाह हुआ करते हैं।

यहाँ प्रस्तुत संकलन में ज्ञानी पुरुष ऐसी ही समझ देते हैं कि जिससे खुद की भूलभरी दृष्टि छूटती है और निर्दोष दृष्टि प्रकट होती है। परम पूज्य दादाश्री बार-बार कहते थे कि, 'यह जगत् किस प्रकार निर्दोष है, उसके हमें हज़ारों प्रमाण हाज़िर रहकर, जागृति रहती है।' पर जो प्रमाण आपश्री के ज्ञान में अवलोकित हुए, वे कौन-से होंगे? वे यहाँ सुज्ञ पाठकों को एक के बाद एक प्राप्त होते रहते हैं। प्रस्तुत संकलन यदि बारीकी से 'स्टडी' किया जाए तो पाठक को निर्दोष दृष्टि के अनेक दृष्टिकोण संप्राप्त हों ऐसा है। जो परिणाम स्वरूप निर्दोष दृष्टि के पथ पर खुद को भी ले जाएगा। क्योंकि जिनकी संपूर्ण दृष्टि निर्दोष हो चुकी है, उनकी यह वाणी पाठक को अवश्य उस दृष्टि की समझ प्राप्त करवाएगी ही!

दूसरों के दोष देखने से, दोषित दृष्टि से, संसार खड़ा है और निर्दोष

दृष्टि से संसार विराम पाता है। वह खुद संपूर्ण निर्दोष होता है। निर्दोष स्थिति पानी किस तरह? दूसरों के नहीं पर खुद के ही दोष देखने से। खुद के दोष कैसे-कैसे होते हैं, उसकी सूक्ष्म समझ यहाँ अगोपित होती है। बहुत ही बारीक-बारीक दोष दृष्टि को खुला करके निर्दोष दृष्टि बनाने की परम पूज्य दादाश्री की कला यहाँ सुज्ञ पाठक को जीवन में बहुत ही उपयोगी हो सके, वैसा है।

निमित्त के अधीन, संयोग, क्षेत्र, काल के अधीन निकली हुई वाणी के प्रस्तुत संकलन में भासित क्षति रूपी दोष को क्षम्य मानकर, उसके प्रति भी निर्दोष दृष्टि रखकर मुक्तिमार्ग का पुरुषार्थ का प्रारंभ करके संपूर्ण निर्दोष दृष्टि प्राप्त हो सके वही अभ्यर्थना।

- डॉ. नीरुबहन अमीन के जय सच्चिदानंद

उपोद्घात

निजदोष दर्शन से... निर्दोष!

'दूसरों के दोष देखने से कर्म बँधते हैं, खुद के दोष देखने से कर्म में से छूटते हैं।' यह है कर्म का सिद्धांत।

'हुं तो दोष अनंत नुं भाजन छुं करुणाळ।'

('मैं तो दोष अनंत का भाजन हूँ करुणामय।')

– श्रीमद् राजचंद्र।

अनंत जन्मों से अनंत दोषों का इस जीव ने सेवन किया है। इन अनंत दोषों का मूल, एक ही दोष, एक ही भूल है, जिसके आधार पर अनंत दोषों की जकड़न अनुभव में आती है। वह कौन-सी भूल होगी?

सबसे बड़ा मूल दोष 'खुद के स्वरूप का अज्ञान' वही है! 'मैं कौन हूँ?' इतना ही नहीं समझने के कारण तरह-तरह की रोंग बिलीफ़ खड़ी हो गई हैं और उनमें ही रचे-बसे हुए हैं अनंत जन्मों से। कभी किसी जन्म में ज्ञानी पुरुष से भेंट हो जाए, तब 'वह' भूल खतम होती है, फिर सारी भूलें खतम होने लगती हैं। क्योंकि 'देखनेवाला' जाग्रत हो जाता है। इसलिए सभी भूलें दिखने लगती हैं और जो भूल दिखाई दी वह अवश्य जाती है। इसीलिए तो कृपालुदेव ने आगे कहा,

'दीठा नहीं निज दोष तो तरीये कोण उपाय?'

('दिखे नहीं निज दोष तो तरें कौन उपाय?')

खुद के दोष दिखें नहीं तो पार किस तरह उतरेंगे? वह तो 'देखनेवाला' जाग्रत हो जाए तब हो पाता है।

जगत् की वास्तविकता का पता नहीं होने से भ्रांत मान्यताओं में, कि जो पग-पग पर विरोधाभासी होती हैं, उनमें मनुष्य उलझा करता है। जिसे इस संसार में निरंतर बोझा लगता रहता है, बंधन पसंद नहीं है, मुक्ति के जो चाहक

हैं, उन्हें तो जगत् की वास्तविकताएँ, जैसे कि यह जगत् कौन चलाता है? किस तरह चलाता है? बंधन क्या है? मोक्ष क्या है? कर्म क्या है? इत्यादि जानना अत्यावश्यक है!

अपना ऊपरी वर्ल्ड में कोई है ही नहीं! खुद ही परमात्मा है या फिर उसका *ऊपरी* अन्य कौन हो सकता है? और यह *भोगवटा*वाला व्यवहार आ पड़ा है। उसके मूल में खुद के ही 'ब्लंडर्स' और 'मिस्टेक्स' हैं! 'खुद कौन है' वह नहीं जाना और लोगों ने ही कहा कि 'तू चंदूभाई है।' वैसा खुद ने मान लिया कि 'मैं चंदूभाई हूँ', वह उलटी मान्यता ही मूल भूल और उसमें से आगे भूलों की परंपरा का सर्जन होता है।

इस जगत् में कोई स्वतंत्र कर्त्ता ही नहीं है, नैमित्तिक कर्त्ता है। अनेक निमित्त इकट्ठे हों, तब एक कार्य होता है। जब कि अपने लोग एकाध दिखाई देनेवाले निमित्त को अपने ही राग-द्वेष के नंबरवाले चश्मे में से देखकर, पकड़कर, उसे ही काटते हैं। उसे ही दोषित देखते हैं। परिणामस्वरूप खुद के ही चश्मे का काँच मोटा होता जाता है। (नंबर बढ़ते जाते हैं।)

इस जगत् में कोई किसीका बिगाड़ नहीं सकता। कोई किसीको परेशान नहीं कर सकता। जो कुछ परेशानी हमें होती है, उसमें मूलत: हमारी ही दी हुई परेशानी के परिणाम होते हैं। जहाँ मूल में 'खुद' की ही भूल है, वहाँ सारा जगत् निर्दोष प्रमाणित नहीं ठहरता है? खुद की भूल मिटे, तो फिर वर्ल्ड में कौन हमारा नाम देनेवाला है?

यह तो हमने ही निमंत्रित्त किए, वे ही सामने आए हैं! जितने आग्रह से निमंत्रित किया उतने ही लगाव के साथ हमसे चिपके हैं!

जो भूल बिना के हैं, उनका तो लुटेरों के गाँव मे भी कोई नाम देनेवाला नहीं है! उतना अधिक प्रताप है शील का ।

खुद से किसीको दु:ख पहुँचे, उसका कारण खुद ही है! ज्ञानियों से किसीको किंचित् मात्र दु:ख नहीं होता है। उलटे अनेकों को परमसुखी बना देते हैं। ज्ञानी सभी भूलों को मिटाकर बैठे हैं, इसलिए! खुद की एक भूल

मिटाए, वह परमात्मा हो सकता है!

ये भूलें किस आधार पर टिकी हुई हैं? भूलों का पक्ष लिया इसलिए। उनका रक्षण किया, इसलिए! क्रोध हो गया, फिर खुद उसका ऐसे पक्ष लेता है, 'यदि उस पर ऐसे क्रोध नहीं किया होता तो वह सीधा होता ही नहीं!' यह बीस साल के आयुष्य का एक्सटेन्शन कर दिया क्रोध का! भूलों का पक्ष लेना बंद हो, तब वे भूलें जाती हैं। भूलों को खुराक देते हैं, इसलिए वे हटती नहीं हैं! घर कर जाती हैं।

ये भूलें किस तरह मिटाएँ? प्रतिक्रमण से-पश्चाताप से!

कषायों का अंधापन दोष देखने नहीं देता है।

जगत् सारा भावनिद्रा में सो रहा है, इसलिए ही खुद, खुद का ही अहित कर रहा है! 'मैं शुद्धात्मा हूँ' ऐसा भान होने पर भावनिद्रा उड़ती है और जाग्रत होता है।

भूलों का रक्षण कौन करता है? बुद्धि! वकील की तरह भूल के फेवर की वकालत करके बुद्धि चढ़ बैठती है, 'अपने' ऊपर! इसलिए चलन चलता है फिर बुद्धि का। खुद की भूलों का इकरार कर ले, वहाँ भूलों का रक्षण उड़ जाता है और फिर उसे बिदाई लेनी ही पड़ती है!

हमें जो भूलें दिखाएँ वे तो महान उपकारी! जिन भूलों को देखने के लिए पुरुषार्थ करना पड़ता है, वे सामने से कोई हमें दिखा दे, उससे सरल और क्या है?

ज्ञानी पुरुष ओपन टु स्काय होते हैं। बच्चों जैसे होते हैं। छोटा बच्चा भी उन्हें बिना संकोच भूल बता सकता है! खुद भूल का स्वीकार भी करते हैं।

कोई भी बुरी आदत पड़ गई हो तो उससे छूटें किस तरह? हमेशा के लिए 'यह आदत गलत है' ऐसा अंदर और बाहर सबके सामने रहना चाहिए। उसका खूब पछतावा हर समय रखना चाहिए और उसका पक्ष एक बार भी नहीं लें, तब वह भूल जाती है। बुरी आदतें निकालने की यह परम पूज्य

दादाजी की *आगवी* (मौलिक) खोज है!

वीतराग के पास खुद के सारे दोषों की आलोचना करने पर वे दोष तत्क्षण चले जाते हैं।

'जैसे भूल मिटती है, वैसे सूझ खुलती जाती है' परम पूज्य दादाजी का यह सिद्धांत सीख लेने जैसा है।

'जो फरियाद करता है, वही गुनहगार है!' तुझे सामनेवाला गुनहगार क्यों दिखा? फरियाद किसलिए करनी पड़ी?

टीका करनी यानी दस का करना एक! शक्तियाँ व्यर्थ होती हैं और नुकसान होता है! सामनेवाले की भूल दिखे उतनी नालायकी अंदर रहती है। बुरे आशय ही भूलें दिखाते हैं। हमें किसने न्यायाधीश (नियुक्त किया)? खुद की प्रकृति के अनुसार काम करते हैं सभी। परम पूज्य दादाश्री कहते हैं, 'मैं भी मेरी प्रकृति के अनुसार कार्य करता हूँ। प्रकृति तो होती ही है न! पर हम मुँह पर कह देते हैं कि मुझे तेरी यह भूल दिखती है। तुझे ज़रूरत हो तो स्वीकार लेना, नहीं तो एक तरफ रख देना!' प्रथम घर में और फिर बाहरवाले सभी निर्दोष दिखेंगे तब समझना कि मुक्ति के सोपान चढ़े हैं।

दूसरों के नहीं, पर खुद के ही दोष दिखने लगें तब समझना कि अब हुआ समकित! और जितने भी दोष दिखते हैं वे हुए बिदा, हमेशा के लिए!

सामनेवाले के अवगुण या गुण दोनों ही देखने नहीं चाहिए। अंत में तो दोनों ही प्राकृत गुण ही हैं न! विनाशी ही हैं न! उसके शुद्धात्मा ही देखने चाहिए।

परम पूज्य दादाश्री कहते हैं, 'जेबकतरा हो या चारित्रहीन हो, उसे भी हम निर्दोष ही देखते हैं! हम सत् वस्तु को ही देखते हैं। वह तात्त्विक दृष्टि है। हम पैकिंग को नहीं देखते!' जगत् को निर्दोष देखने की यह एक मात्र 'मास्टर की' है।

खुद की भूलों का पता कब चलता है? ज्ञानी पुरुष दिखाएँ तब। सिर पर ज्ञानी पुरुष नहीं हों, तो सब स्वच्छंद ही माना जाएगा।

उजाले की भूलों का तो कभी हल निकलता है, पर अंधेरे की भूलें जाती ही नहीं हैं। अंधेरे की भूलें यानी 'मैं जानता हूँ!!!'

अक्रम ज्ञान की प्राप्ति के बाद मात्र अंदर का ही देखने में आए तो आप 'केवलज्ञान' सत्ता में होंगे। अंश केवलज्ञान होता है, सर्वांश नहीं। भीतर मन-बुद्धि-चित्त-अहंकार को देखते रहना है। परसत्ता के पर्यायों को देखते रहना है।

'वस्तु, वस्तु का स्वभाव चूके वह प्रमत्त कहलाता है। वस्तु उसके मूल धर्म में रहे, वह अप्रमत भाव।'

मोक्ष कब होता है? 'तेरा ज्ञान और तेरी समझ भूल बिना की होगी तब।' भूल से ही रुका हुआ है। जप-तप की ज़रूरत नहीं है, भूल बिना के होने की ज़रूरत है। मूल भूल कौन-सी? 'मैं कौन हूँ?' का अज्ञान। वह भूल कौन मिटाएँ? ज्ञानी पुरुष ही।

दोष निकलें किस तरह? दोष पैठे किस तरह, वह पता चले तो निकालने का रास्ता मिले। दोष श्रद्धा से, प्रतीति से पैठते हैं और श्रद्धा से प्रतीति से वे निकलेंगे। सौ प्रतिशत मेरी ही भूल है ऐसी प्रतीति हो, फिर उस भूल का एक प्रतिशत भी रक्षण नहीं हो तब वह भूल जाती है!

जो-जो भगवान हुए, वे अपनी-अपनी भूलें मिटाकर भगवान हुए थे! परम पूज्य दादाश्री कहते हैं, 'भूल किसे दिखती है? भूल बिना का चारित्र संपूर्ण दर्शन में हो और भूलवाला वर्तन उसके वर्तन में हो तो उसे 'हम' मुक्त हुआ कहते हैं' हमें हमारी सूक्ष्म से सूक्ष्म, वैसे ही सूक्ष्मतर और सूक्ष्मतम सभी भूलें दिखती हैं।'

दोष होता है, उसका दंड नहीं है पर दोष दिखता है, उसका इनाम है। इनाम में दोष जाता है। वह आत्मज्ञान के बाद खुद, खुद के लिए निष्पक्षपाती होता है, इसलिए खुद की सभी भूलें देख सकता है!

शुद्ध उपयोगी को कोई कर्म छूता नहीं है।

बुद्धि हमेशा समाधान खोजती है, स्थिरता खोजती है। बुद्धि स्थिर कब होती है? दूसरों के दोष देखे, तब बुद्धि स्थिर होती है, या फिर खुद के दोष देखे, तब भी बुद्धि स्थिर होती है।

अज्ञानता में दूसरों के ही दोष देखती है, खुद के दिखते ही नहीं। बुद्धि स्थिर नहीं होती इसलिए डाँवाडोल होती रहती है। फिर सारा अंतःकरण हिला देती है, हुल्लड़ मचा देती है।

फिर बुद्धि, दूसरों के दोष दिखाए, तब खुद सच्ची सिद्ध होकर स्थिर होती है! फिर हुल्लड़ शांत हो जाता है! नहीं तो विचारों का घमासान चलता ही रहता है और इस प्रकार संसार में *डखा* (घोटाला, बखेड़ा, गड़बड़) हो रहा है।

ऐसी बारीक बात कौन-से शास्त्र में मिले?! जगत् का लेखा-जोखा किसी शास्त्र में मिले ऐसा नहीं है, वह तो ज्ञानी के पास ही मिलता है।

सामनेवाले के दोष दिखें, वही संसार की अधिकरण क्रिया है! मोक्ष में जानेवाला खुद की भूलें देखता रहता है और संसार में भटकनेवाले दूसरों की भूलें देखते रहते हैं!

अभिप्राय रखने से दृष्टि दोषित हो जाती है। प्रतिक्रमण से अभिप्राय टूटते हैं और नया मन बनता नहीं है।

आत्मदृष्टि होने के बाद...

देहाध्यास छूटे और आत्मा का अध्यास बैठे, उसके बाद निजदोष ही दिखते हैं।

कुछ दोष बर्फ के रूप में जमे हुए होते हैं, वे जल्दी किस तरह जाएँ? अनेकों परतवाले होते हैं, इसलिए धीरे-धीरे जाते हैं। जैसे-जैसे दोष दिखाई दें, वैसे-वैसे परतें उखड़ती जाती हैं। जैसे प्याज़ की परतें होती हैं, वैसे बहुत चिकने दोषों के बहुत प्रतिक्रमण करने पड़ते हैं।

'चंदूभाई' से दोष होते हैं और खुद को नहीं अच्छे लगते तो वह 'दोष देखा' कहलाता है और दिखा वह चला जाता है।

जीवन खुद के ही पाप-पुण्य की गुनहगारी का परिणाम है। फूल बरसे वह पुण्य का और पत्थर पड़े, वह पाप का परिणाम है! क़ीमत है समता भाव से भुगत लेने की।

अधिकतर उलझनें वाणी से पड़ती हैं। वहाँ जागृति रखकर मौन रखकर हल ला सकते हैं। सम्यक् दृष्टिवाले को नये दोष भरते नहीं हैं और पुराने खाली होते हैं। ज्ञान प्राप्ति के बाद भी कषाय हो जाते हैं, पर उसका तुरन्त पता चलता है और खुद उससे अलग रहता है।

अक्रमविज्ञानी ने तो ज्ञान देकर पच्चीसों प्रकार के मोह का नाश कर दिया है। अच्छी आदतें-बुरी आदतें, दोनों को भ्रांति कहकर छुड़वाया है सभी से।

सामनेवाले की कौन-सी भूल निकाल सकते हैं? जो भूल उसे दिखती नहीं हो, वह। और किस प्रकार निकालनी चाहिए? सामनेवाले को भूल निकालनेवाला उपकारी दिखे तब निकालनी चाहिए। 'कढ़ी खारी है' कहकर क्लेश नहीं करना चाहिए।

घरवाले सभी निर्दोष दिखें और खुद के ही दोष दिखें तब सच्चे प्रतिक्रमण होते हैं।

प्रतिक्रमण कब तक करने चाहिए? जिसके प्रति मन बिगड़ता रहता हो, याद आती रहती हो, तब तक। जब तक हमारा अटेकिंग नेचर होगा, तब तक मार पड़ेगी।

हमसे चाहे कैसा भी व्यक्ति टकराने आए, तब भी हमें टकराव टालना चाहिए, हमें खिसक जाना चाहिए।

खुद कर्त्ता नहीं है पर सामनेवाले को कर्त्ता देखता है, वह खुद ही कर्त्ता होने के बराबर है! सामनेवाले को किंचित् मात्र कर्त्ता देखा कि खुद

कर्त्ता हो ही गया। प्रकृति भले ही लड़ाई-झगड़े करे, पर उसे कर्त्ता नहीं देखना चाहिए। क्योंकि वह नहीं करता है। 'व्यवस्थित' करता है!

दोष करनेवाला अहंकार और दोष देखनेवाला भी अहंकार। दोष देखनेवाला *एकांत* रूप से अहंकारी होता ही है।

सारा दिन माफ़ी माँगते रहना चाहिए। सारा दिन माफ़ी माँगने की आदत ही बना देनी। ज्ञानी की कृपा से ही काम होता है, कोई दौड़-धूप करनी नहीं है। कृपा कब मिलती है? ज्ञानी की आज्ञा में रहने से। आज्ञा में रहने से समाधि होती है।

आत्मा भी वीतराग है और प्रकृति भी वीतराग है। पर प्रकृति के दोष निकालने पर उसका 'रिएक्शन' आता है। किसीका दोष दिखाई दे वह अपना ही दोष है।

दादाजी का यह सत्संग, वहाँ मार पड़े तब भी छोड़ना नहीं। सत्संग में मर जाना, पर बाहर कहीं जाने जैसा नहीं है, सत्संग में किसीके दोष देखने नहीं। नहीं तो '*वज्रलेपो भविष्यति!*' इसलिए यहाँ तुरंत ही प्रतिक्रमण करके धो डालना, नहीं तो निकाचित कर्म हो जाता है! ज्ञानी पुरुष के कभी भी दोष देखने ही नहीं चाहिए। ज्ञानी पुरुष के सामने बुद्धि का उपयोग करे, तो वह गिर जाता है, नर्क में जाता है। कोई विरला ही ज्ञानी के नज़दीक रहकर उनका एक भी दोष नहीं देखे! वही ज्ञानी की सेवा में नज़दीक रह सकता है!

दूसरों के दोष देखने से खुद के दोष देखने की शक्ति रुँध गई है। किसीकी भूल होती ही नहीं है, भूल माननी ही हो तो 'व्यवस्थित' की मानना और 'व्यवस्थित' यानी खुद का ही हिसाब खुद के हिस्से में आता है। खुद ने भूल की है उसका दंड कुदरती निमित्तों द्वारा खुद को मिलता है।

ज्ञानी के प्रत्येक कर्म दिव्य कर्म होते हैं। बाह्य कर्म तो सभी के जैसे ही होते हैं पर उस समय उन्हें बरतती वीतरागता ही निहारने जैसी

है! प्रत्यक्ष की वीतरागता देखने से वीतराग हो सकते हैं!

मोक्षार्थी की लाक्षणिकताएँ कौन-सी? सरलता! ओपन टु स्काइ! खुद के सारे ही दोष खुले कर देता है वह!

दोष में एकाग्रता होने से दोष दिखा नहीं। अंधापन आया, इसलिए दोष चिपट गया। वह दोष देखने से जाता है। हम खुद शुद्धात्मा हो गए, अब पुद्‌गल को शुद्ध करना बाकी रहा। वह देखने से ही शुद्ध हो जाता है।

अतिक्रमण जो करे, उसे प्रतिक्रमण करना है। शुद्धात्मा अतिक्रमण करता नहीं है, इसलिए प्रतिक्रमण करने का उसे रहता नहीं है। यह सिद्धांत लक्ष्य में रखना।

दादाश्री कहते कि, 'हमारे प्रतिक्रमण, दोष होने से पहले ही शुरू हो जाते हैं, अपने आप! वह जागृति का फल है!

आगे की जागृति तो दोषों को दोष की तरह भी देखता नहीं। वह 'ज्ञेय' और 'खुद' 'ज्ञाता'। ज्ञेय है तो ज्ञातापन है!

किसीको न तो दोषित मानो न ही तो निर्दोष मानो, निर्दोष जानो!

खुद की प्रकृति को देखना, चंदूभाई क्या कर रहे हैं, उसे देखना, वह शुद्ध उपयोग है। प्रकृति को क्यों देख नहीं पाते हैं? आवरण के कारण। वे आवरण किस तरह टूटें? ज्ञानी पुरुष 'विधियाँ' (चरणविधि) करवाते हैं, उससे आवरण टूटते हैं।

ज्ञानी के भी सूक्ष्मतर और सूक्ष्मतम दोष होते हैं, जो प्रतिक्रमण से शुद्ध करते हैं।

प्रकृति के गुण-दोष देखनेवाला कौन? प्रकृति को प्रकृति देखती है, वह देखनेवाला है प्रकृति का, बुद्धि और अहंकारवाला भाग! इसमें आत्मा निर्लेप होता है। आत्मा को अच्छा-बुरा होता ही नहीं है! प्रकृति के दोष दिखानेवाली ऊँची प्रकृति कहलाती है कि जो आत्मा प्राप्त करवानेवाली है।

प्रकृति को जो निर्दोष देखता है वह परमात्मा! देखने में मुक्तानंद! पर आत्मा को आनंद की भी पड़ी नहीं है। उसे तो केवल जैसा है वैसा देखने में सर्वस्व है!

दोष से अंतराय और अंतराय से संपूर्ण आनंद का अनुभव रुकता है!

परम पूज्य दादाश्री, अपनी अनुभव दशा का वर्णन करते हुए कहते हैं कि हमें तो बाल जितनी भी भूल हो तो तुरन्त पता चल जाता है!' वह अंदर कैसी कोर्ट होगी?! कैसा जजमैन्ट होगा? किसीके साथ मतभेद ही नहीं। गुनहगार दिखे, फिर भी उसके साथ कोई मतभेद नहीं! बाह्य रूप से गुनहगार, अंदर तो कोई भी गुनाह नहीं है।

इसीलिए दादाश्री संपूर्ण निर्दोष हुए और सारे जगत् को निर्दोष देखा!

ज्ञानी पुरुष की एक भी स्थूल या सूक्ष्म भूल नहीं होती! सूक्ष्मतर और सूक्ष्मतम भूलें ही होती हैं, जिनके खुद संपूर्ण ज्ञाता-दृष्टा होते हैं और वे भूलें किसीको नुकसानदायक नहीं होती हैं। सिर्फ खुद के 'केवलज्ञान' को ही वे रोकती हैं!

अंतिम प्रकार की जागृति कौन-सी? इस जगत् में कोई दोषित ही नहीं दिखे!

जिसने सारी भूलें खतम की, उसका इस जगत् में कोई ऊपरी ही नहीं रहा! इसीलिए ज्ञानी पुरुष देहधारी परमात्मा ही कहलाते हैं।

दादाश्री कहते हैं, 'हम' दोनों अलग हैं। भीतर प्रकट हुए हैं वे 'दादा भगवान' हैं। वे संपूर्ण प्रकट हो गए हैं, परम ज्योति स्वरूप! जो हमें हमारी भी अंदरवाली भूलें दिखाते हैं और वे ही चौदह लोक के नाथ हैं। वही दादा भगवान हैं! ३६० डिग्री के पूर्ण भगवान!'

जगत् निर्दोष

जगत् निर्दोष किस तरह देखा जा सकता है?! आत्म दृष्टि से ही,

पुद्गल दृष्टि से नहीं! तत्त्व दृष्टि से, अवस्था दृष्टि से नहीं!

सामनेवाले को दोषित देखता है, वह अहंकार है देखनेवाले का!

दुश्मन के प्रति भी भाव नहीं बिगड़े, बिगड़े, तो तुरंत ही प्रतिक्रमण से सुधार लिया जाए, तभी आगे प्रगति होती है और अंत में शीलवान हो पाते हैं।

शुरूआत में बुद्धि सामनेवाले को निर्दोष नहीं देखने देगी पर निर्दोष देखने की शुरूआत करनी है। फिर जैसे-जैसे अनुभव होता जाएगा वैसे-वैसे बुद्धि ठंडी होती जाएगी।

जैसे गणित का सवाल करते समय जवाब पाने के लिए एक संख्या माननी पड़ती है, 'माना कि १०० (सपोज़ हंड्रेड) फिर सही जवाब सही मिलता है न?! वैसे दादाश्री भी एक संख्या 'मानने' को कहते हैं कि, 'इस जगत् में कोई दोषित ही नहीं है। समस्त जगत् निर्दोष है!' सच्चा जवाब अंत में मिल जाएगा।

दृष्टि, वैसी सृष्टि। दोषित दृष्टि से सामनेवाला दोषित दिखता है और निर्दोष दृष्टि से सामनेवाला निर्दोष दिखता है।

ज्ञान मिलने के बाद भी जगत् निर्दोष है, वह अनुभव में नहीं आता। वहाँ तो दादाश्री ने कहा है इसलिए, ऐसा हमें निश्चित कर देना चाहिए कि जिससे कोई दोषित दिखे ही नहीं। जहाँ ऐसा निश्चित नहीं हुआ होगा, उस हिस्से में फिर मान ही लेना कि जगत् निर्दोष ही है! जवाब जानते हैं, इसलिए सवाल हल करना आसान हो जाएगा न! प्रतीति में तो सौ प्रतिशत रखना कि जगत् निर्दोष ही है। दोषित दिखता है, वह भ्रांति है और उससे संसार खड़ा है!

जान लिया उसका नाम कि ठोकर नहीं लगे। कषाय, (क्रोध-मान-माया-लोभ) ठोकरें ही हैं! और तब तक भटकना ही है! कषायों का पर्दा दूसरों के दोष दिखाता है! कषाय प्रतिक्रमण से जाते हैं।

मोक्ष के लिए कर्मकांड या क्रियाएँ करने की ज़रूरत नहीं है, आत्मा

जानने की ज़रूरत है, जगत् निर्दोष देखने की ज़रूरत है!

फिर भी जिसे जो अनुकूल हो, वह करे। किसीकी टीका करने की ज़रूरत नहीं है, नहीं तो उसके साथ नये करार से बँधेंगे।

स्वकर्म के अधीन ही *भोगवटा* खुद को आता है, फिर दूसरे किसका गुनाह?

महावीर का सच्चा शिष्य कौन? जिसे लोगों के दोष दिखने कम होने लगे हैं! संपूर्ण दशा में नहीं, तो भी शुरूआत तो हुई!

धर्म में एक-दूसरे के दोष दिखते हैं, वह मेरा-तेरा की भेदबुद्धि से और उसके लिए श्रीमद् राजचंद्रजी ने कहा है,

'गच्छ-मतनी जे कल्पना, ते नहीं सद्व्यवहार।'

(गच्छ-मत की जो कल्पना, वह नहीं सद्व्यवहार!')

दादाश्री कहते हैं कि, 'आज हमसे जो कुछ बोला जाता है वह गतभव में रिकॉर्ड हुआ था, वही बोला जाता है। पिछले भव की भूलवाली रिकॉर्ड बनी थी। इसलिए किसी धर्म में 'यह भूल है' ऐसा बोला जाता है। पर आज का ज्ञान-दर्शन उसे संपूर्ण निर्दोष देखता है और जो बोला गया, उसका तुरन्त प्रतिक्रमण होकर शुद्ध हो जाता है!'

अक्रम मार्ग का दादाश्री का गज़ब का ज्ञानीपद प्रकट हुआ है इस काल में! किसीकी कल्पना में नहीं आए ऐसी यह आश्चर्यजनक कुदरत की भेंट है जगत् को। निर्दोष दृष्टि हुई, तब से खुद प्रेम स्वरूप हुए और उनके शुद्ध प्रेम ने कितनों को संसारमार्ग में से मोक्षमार्ग की ओर मोड़ा! उस अघट-अबढ़ परमात्म प्रेम को कोटि-कोटि नमस्कार!! निर्दोष जगत् दिखे, तब मुक्त हास्य प्रकट होता है। मुक्त हास्य देखकर ही कितने रोग जाते हैं। ज्ञानी पुरुष का चारित्रबल सारे ब्रह्मांड को एक उँगली पर उठा ले ऐसा होता है! और वह चारित्रबल कहाँ से प्रकट होता है? निर्दोष दृष्टि से!

- डॉ. नीरूबहन अमीन

अनुक्रमणिका

निजदोष दर्शन से... निर्दोष !

विश्व की वास्तविकताएँ	१	आलोचना ज्ञानी के पास	२३
हमारा ऊपरी कौन?	१	वैसे-वैसे खिलती...	२४
मूल भूल कौन-सी?	२	थी ही नहीं तो...	२४
भूलें कब पता चलती हैं?	३	दस के किए एक!	२५
कौन जगत् का मालिक?	३	सारे दु:खो का...	२५
नासमझी ने सर्जित किए दु:ख	४	नहीं कोई दोषित जगत् में	२६
सामनेवाला तो है मात्र निमित्त	५	तब से हुआ समकित!	२७
नहीं लगते बोल, बगैर...	६	अंत में तो वे प्राकृत गुण	२८
काटना निमित्त को?	६	सबसे बड़ा दोष	२९
अनुमोदन का फल	७	दीठा नहीं निजदोष तो...	३०
नहीं चुनौती, तो पूर्णता...	८	नहीं देखना दोष किसीके	३१
एक में से अनंत, अज्ञानता से	९	तब आया महावीर के...	३३
दो ही वस्तुएँ विश्व में	९	नहीं देखे खुद के ही दोष	३४
निमंत्रण धौल को...	१०	वह कहलाए जैन	३७
लुटेरा भी दूर रहे शीलवान से	११	दोष,उतने ही चाहिए प्रतिक्रमण	३७
नहीं रहा भुगतना ज्ञानी को	१२	आत्मा खुद ही थर्मामीटर जैसा	३८
भूल मिटाए वह परमात्मा	१२	वह है भूलों का स्वरूप	३९
दिए आधार भूलों को...	१३	ज्ञानी की तत्त्वदृष्टि	४०
चाबी भूलें मिटाने की	१३	तर गया वही तारे	४०
बंद करो कषाय का पोषण	१४	तब भूल मिटाई कहलाती है	४२
अंधापन नहीं देखने देता...	१५	भूल निकाले, अंदर कौन?	४२
बुद्धि की वकालत से...	१६	अंधेरे की भूलें	४३
करें ज्ञानी इकरार...	१६	नहीं उसका ऊपरी कोई	४४
दोष स्वीकारो,उपकार...	१८	दृष्टि निजदोषों के प्रति...	४४
‘यह’ प्रपंच करनेवाला...	२०	प्रमत्त भाव से दिखें परदोष...	४५
अरे, ले बोधपाठ इस से	२०	वीतरागों ने कहा मुक्ति हेतु	४५
भूल मिटाने की रीति...	२०	ज़रूरत है भूल बिना के ज्ञान...	४६

भूल बिना का ज्ञान और समझ ४९
काफी है बैठनी प्रतीति भूल की ४९
भूल मिटा दे, वह भगवान ५१
भूल बिना का दर्शन... ५२
अलौकिक सामायिक वह... ५३
नहीं छूता कुछ... ५४
आरोप लगाने से, अटके... ५४
बुद्धि एक्सपर्ट, दोष देखने में ५५
दोष देखना, खुद के ही सदा ५५
दोष देखे, वहाँ बुद्धि स्थिर ५६
पाने को मुक्ति, देखे निजदोष ५८
आ जाओ, एक बात पर ५९
पड़ा ही होता है भीतर... ५९
खुद का गटर... ५९
दृष्टि, अभिप्राय रहित ६१
ऐसे अंत आए उलझनों का ६२
जहाँ छूटा मालिकीपन सर्वस्व... ६३

आत्मदृष्टि होने के बाद...

गरुड़ आते ही, भागें साँप ६४
निष्पक्षपाती दृष्टि ६४
वैसे-वैसे प्रकटे आतम उजियारा ६५
गुह्यतम विज्ञान ६६
दोष होते हैं परतोंवाले ६७
गुनहगारी पाप-पुण्य की ६८
स्वरूप प्राप्ति के बाद... ६९
इसलिए हो गए ज्ञानी ७१
दिखें प्रपात दोष के... ७१
घर में टोका जाए... ७३
ऐसे होते हैं कर्म चोखे ७४
देखो सामनेवाले को... ७५
वह है एकांतिक रूप से... ७६
महत्व है, भूल के भान का ७७
वहाँ पुरुषार्थ या कृपा? ७९
वीतरागभाव से विनम्रता... ७९
'ज्ञान' प्राप्ति के बाद.. ८१
तब दोष हों, वे... ८४
श्रद्धा से शुरू, वर्तन से... ८५
नहीं छोड़ना कभी... ८६
मोड़नी, दोष देखने की.. ८६
'व्यवस्थित' कर्त्ता, वहाँ... ८७
वज्रलेपो भविष्यति... ८७
देखे दोष ज्ञानी के, उसे... ८८
सरल को ज्ञानी कृपा अपार ९१
गुण देखने से गुण प्रकटें ९२
निजकर्म यानी निजदोष ९२
शुद्ध उपयोग, आत्मा का ९२
भूलें, उजाले की.. ९३
प्रकटे केवलज्ञान, अंतिम.. ९४
अँधेरे की भूलें... ९४
दादा 'डॉक्टर' दोषों के ९५
दोष निकालने का कॉलेज ९५
आवरण टूटने से दोष दिखें ९७
वीतरागों की निर्दोष दृष्टि ९९
दोषित दृष्टि को... १००
करना नहीं है,मात्र देखना है १०१
गेहूँ खुद के ही बीनो न १०३
यह तो इन्द्रियगम्य ज्ञान... १०४
और यह ज्ञानगम्य... १०५

खुद की भूलों को खुद..	१०६	संपूर्ण दोष रहित दशा...	१११
तब संपूर्ण हुआ निकाल	१०७	जागृति भूलों के सामने...	११२
कहाँ तक मन चोखा हुआ	१०७	इसलिए 'हमारा' नहीं ऊपरी..	११२
तब तक ऊपरी भीतरवाले..	१०८	इसलिए 'ज्ञानी' देहधारी...	११२
भिन्नता उन दोनों के...	१०९	भीतरवाले भगवान दिखाएँ...	११३

जगत् निर्दोष

भगवान ने देखा जग निर्दोष	११५	दोष दिखाएँ, कषाय भाव	१२६
कौन-सी दृष्टि से जग दिखे..	११५	वहाँ किसे डाँटोगे?	१२७
तत्त्व दृष्टि से जगत् निर्दोष	११६	नहीं कोई दुश्मन अब...	१२८
जगत् निर्दोष, प्रमाण सहित	११८	साँप, बिच्छू भी हैं निर्दोष...	१२९
शीलवान के दो गुण	११८	महावीर ने भी देखे स्वदोष	१३०
यह है ज्ञान का थर्मामीटर	११९	अभेद दृष्टि होने से बने...	१३१
एक रकम आप मानोगे?	१२०	गच्छ-मत की जो कल्पना...	१३१
दृष्टि के अनुसार सृष्टि	१२०	आज का दर्शन और...	१३२
जग निर्दोष अनुभव में...	१२२	आश्चर्यकारी, अद्भुत...	१३४
अंतिम दृष्टि से जग निर्दोष	१२४	नहीं देखते दादा दोष...	१३५
जान लिया तो उसका नाम....	१२६	तब प्रकट हो, मुक्त हास्य	१३६

निजदोष दर्शन से... निर्दोष!

विश्व की वास्तविकताएँ!

प्रश्नकर्ता : जगत् की वास्तविकता के विषय में कुछ कहिए।

दादाश्री : जगत् के लोग व्यवहार में दो तरह से रहते हैं, एक लौकिक भाव से और एक अलौकिक भाव से। इसमें जगत् का काफी कुछ भाग लौकिक भाव से ही रहता है, कि भगवान ऊपर हैं और भगवान सब करते हैं। और वापस खुद भी करता जाता है, भगवान भी करते जाते हैं। उसे कुछ विरोधाभास का ख्याल नहीं है और उसे भगवान सिर पर रहें तो डर रहा करता है कि खुदा ये करेगा और ये करेगा। ऐसा करके गाड़ी चलती रहती है।

पर जो अत्यंत विचारशील हुआ है, जिसे सिर पर भाररूप बोझा किसीका चाहिए ही नहीं, तो उसके लिए असल हक़ीक़त अलौकिक होनी ही चाहिए न? अलौकिक में कोई *ऊपरी* (बॉस, वरिष्ठ मालिक) है ही नहीं। जगत् में आपकी भूलें ही ऊपरी हैं, आपके ब्लंडर्स (मूलभूत भूल) और मिस्टेक्स (सामान्य भूलें) वे दो ही ऊपरी हैं। दूसरा कोई ऊपरी है ही नहीं।

हमारा ऊपरी कौन ?

ऐसा कौन कह सकता है? तब ओहोहो! ये कितने निडर होंगे? और डर किसका रखना है? मेरी खोज है कि आपका ऊपरी ही कोई नहीं है, इस वर्ल्ड में। और जिसे आप ऊपरी मानते हो, भगवान को, वह तो आपका स्वरूप है। भगवान का स्वरूप ऊपरी हो नहीं सकता, कभी भी। उससे अनजान हैं इसलिए वे ऊपरी हो नहीं सकते। तब ऊपरी

कौन? आपके ब्लंडर्स और मिस्टेक्स। ये दो ही यदि नहीं हों, तो आपका कोई ऊपरी है ही नहीं। मेरे ब्लंडर्स और मिस्टेक्स निकल गए हैं, इसलिए मेरा ऊपरी कोई भी नहीं है। आप जब ब्लंडर्स और मिस्टेक्स निकाल दोगे, तब आपका ऊपरी कोई नहीं रहेगा। अभी पुलिसवाले के साथ वहाँ टकराव करके आओ, यहाँ जल्दी आने के लिए, निबटाए बिना आओ, पुलिसवाला कहे, 'गाड़ी खड़ी रखो', और आपने खड़ी नहीं रखी तो फिर यहाँ पुलिसवाला आएगा। तब आप तुरन्त समझ जाओगे कि यह मेरे लिए आया है। क्योंकि भूल की, वह हमें तुरन्त पता चल जाता है कि यह भूल की है। वह भूल मिटाओ। मेरा क्या कहना है? निरी भूलें ही हुई हैं। उन्हें मिटाओ। अब तक दूसरों की ही भूलें दिखी हैं, खुद की भूलें दिखीं नहीं हैं। खुद की भूलें देखें, उन्हें मिटाएँ, वे भगवान हो जाएँ!

मूल भूल कौन-सी?

और इस तरफ साधु-सन्यासी इच्छाओं को धकेलते रहते हैं। वे इच्छाएँ तो कुछ हटें ऐसी नहीं हैं। डबल होकर आएँ ऐसी हैं। मूल भूल कहाँ हुई है, वह खबर नहीं है लोगों को। वे इच्छाएँ होती हैं, वह भूल नहीं है। उसकी मूल भूल दबाएँ न हम, बटन दबाएँ न हम, तब पंखा बंद हो जाता है। यों ही पंखा पकड़ने जाएँ तो कुछ होता नहीं है? उसकी मूल भूल दबाएँ।

'मैं चंदूभाई हूँ' वही मूल भूल है। मूल भूल ही यह है। वह आरोपित भाव है। सच्चा भाव नहीं है वह। जैसे यहाँ कोई इन्दिरा गांधी जैसे कपड़े पहनकर और सबसे कहे, 'मैं इन्दिरा गांधी हूँ' और ऐसा कहकर उसका लाभ उठाए, तो उसका गुनाह लागू होता है या नहीं होता है? उसी तरह 'मैं चंदूभाई हूँ', उसका निरंतर लाभ उठाता है। वह आरोपित भाव कहलाता है, उसका गुनाह!

इसलिए, आपकी भूलें और आपके ब्लंडर्स, ये दो ही आपके ऊपरी हैं। आपके ब्लंडर्स क्या होंगे? 'मैं चंदूभाई हूँ' वह पहला ब्लंडर। 'मैं इनका

बेटा हूँ', वह दूसरा ब्लंडर। 'मैं इसका पति हूँ', वह तीसरा ब्लंडर। 'मैं इस लड़के का बाप हूँ', वह चौथा ब्लंडर। ऐसे कितने ब्लंडर्स किए हैं?

प्रश्नकर्ता : अनेकों हुए होंगे।

दादाश्री : हाँ, ये जो ब्लंडर्स हैं वे आपसे टूटेंगे नहीं। हम ब्लंडर्स तोड़ देते हैं और फिर मिस्टेक्स हों वे आपको निकालनी हैं। वैसा कोई ऊपरी है नहीं। बिना काम के बेचैनी!! आपको समझ में आता है न, ऊपरी नहीं है ऐसा? पक्का विश्वास हो गया?

भूलें कब पता चलती हैं?

लोग मानते हैं कि भगवान ऊपरी हैं, इसलिए उनकी भक्ति करेंगे तो छूट जाएँगे। पर नहीं, कोई बाप भी ऊपरी नहीं है। तू ही तेरा ऊपरी, तेरा रक्षक भी तू और तेरा भक्षक भी तू ही। यू आर होल एन्ड सोल रिस्पोन्सिबल फॉर योर सेल्फ (आप ही अपने खुद के लिए संपूर्ण जिम्मेदार हो।) खुद ही खुद का ऊपरी है। इसमें दूसरा कोई बाप भी हस्तक्षेप नहीं करता है। हमारा बॉस है, वह भी हमारी भूल से है और अन्डरहैन्ड (मातहत) है, वह भी हमारी भूल से ही है। इसलिए भूल तो मिटानी ही पड़ेगी न!

खुद की संपूर्ण स्वतंत्रता-आज़ादी चाहिए तो खुद की सभी भूलें मिट जाएँ तब मिलेगी। भूल तो कब पता चलती है कि 'खुद कौन है?' उसका भान हो, परमात्मा का साक्षात्कार हो, तब!

कौन जगत् का मालिक?

इस ब्रह्मांड का हर एक जीव ब्रह्मांड का मालिक है। केवल खुद का भान नहीं है इसलिए ही जीव की तरह रहता है। खुद के देह की मालिकी का जिसे दावा नहीं है, वह पूरे ब्रह्मांड का मालिक हो गया! यह जगत् अपनी मालिकी का है, ऐसा समझ में आए, वही मोक्ष! अभी ऐसा क्यों समझ में नहीं आया है? क्योंकि हमारी ही भूलों ने बाँधा है, इसलिए। सारा जगत् अपनी ही मालिकी का है।

हमारा ऊपरी कोई बाप भी नहीं है। यह ऊपर बॉस है या बाप ऊपर बैठा है, ऐसा नहीं है। जो हो, वह आप ही हो, और आपको दंड देनेवाला भी कोई नहीं है और आपको जन्म देनेवाला भी कोई नहीं है। आप खुद जन्म लेते हो और देह धारण करते हो और फिर वापस जाते हो और आते हो। जाते हो और आते हो। आपकी मर्ज़ी मुताबिक के सौदे हैं। हिन्दुस्तान में आने तक तो मानो कि कुदरती, साहजिक रूप से है, पर हिन्दुस्तान में आने के बाद थोड़ा-बहुत समझ में आता है कि हमारी कुछ भूल हो रही है।

समझदार आदमी यदि इतना ही समझे कि क्या मुझे कोई भी मनुष्य परेशान कर सके ऐसा नहीं है? तो हम कहें कि नहीं है, नहीं है, नहीं है!!! और कहे कि, मेरा कोई ऊपरी नहीं है क्या? तब कहें, नहीं है, नहीं है, नहीं है!!! तेरे ऊपरी तेरे ब्लंडर्स और मिस्टेक्स हैं। ब्लंडर्स कैसे तोड़ने? तो हम कहेंगे कि, यहाँ पर आ जाना भाई, और मिस्टेक्स कैसे मिटानी? वह हमें आपको समझाना पड़ेगा। फिर तुझे मिटानी हैं। हम रास्ता दिखाएँगे। मिस्टेक्स तुझे मिटानी हैं और ब्लंडर्स हमें तोड़ देने हैं।

नासमझी ने सर्जित किए दु:ख

दु:ख सब नासमझी का ही है इस जगत् में। दूसरा कोई भी दु:ख है, वह सब नासमझी का ही है। खुद ने खड़ा किया हुआ है सब, नहीं दिखने के कारण! जले तब कहें न, कि भाई! कैसे आप जल गए? तब कहता है, 'भूल से जल गया, कोई जान-बूझकर जलूँगा?' ऐसे ये सारे दु:ख भूल से हैं। सब दु:ख अपनी भूल का परिणाम है। भूल चली जाएगी तो हो गया।

प्रश्नकर्ता : कर्म चिकने होते हैं, उसके कारण हमें दु:ख भुगतना पड़ता है?

दादाश्री : अपने ही कर्म किए हुए हैं, अपनी ही भूल है। किसी अन्य का दोष इस जगत् में है ही नहीं। दूसरे तो निमित्त मात्र हैं। दु:ख आपका है और सामनेवाले निमित्त के हाथों दिया जाता है। ससुर की मृत्यु

का पत्र पोस्टमेन दे जाए, उसमें पोस्टमेन का क्या दोष?

सामनेवाला तो है मात्र निमित्त

हमें मकान की अड़चन हो और कोई मनुष्य हमें मदद करे और मकान हमें रहने के लिए दे, तो जगत् के मनुष्यों को उस पर राग होता है, और जब वह मकान वापस लेना चाहे तो उसके प्रति द्वेष होता है। ये राग-द्वेष हैं। अब असल में तो राग-द्वेष करने की ज़रूरत नहीं है, वह निमित्त ही है। वह देनेवाला और लेनेवाला, दोनों निमित्त हैं। आपके पुण्य का उदय हो, तब वह देने के लिए आ मिलता है, पाप का उदय हो तब वापस लेने के लिए आ मिलता है। उसमें उसका कोई दोष नहीं है। आपके उदय का आधार है। सामनेवाले का किंचित् मात्र दोष नहीं है। वह निमित्त मात्र है, ऐसा अपना ज्ञान कहता है। कैसी सुंदर बात करता है!!

अज्ञानी को तो कोई मीठा-मीठा बोले, वहाँ पर राग होता है और कड़वा बोले तब द्वेष होता है। सामनेवाला मीठा बोलता है, वह खुद का पुण्य प्रकाशित है और सामनेवाला कड़वा बोलता है, वह खुद का पाप प्रकाशित है। इसलिए मूल बात में, दोनों सामनेवाले मनुष्यों को कुछ लेना-देना नहीं है। बोलनेवाले को कुछ लेना-देना नहीं है। सामनेवाला मनुष्य तो निमित्त ही बनता है। जो यश का निमित्त होता है, उससे यश मिलता रहता है और अपयश का निमित्त हो, उससे अपयश मिलता रहता है। वह निमित्त ही है खाली। उसमें किसीका दोष नहीं है!

प्रश्नकर्ता : सभी निमित्त ही माने जाते हैं न?

दादाश्री : निमित्त के अलावा इस जगत् में दूसरी कोई चीज़ है ही नहीं। वह भी निमित्त ही है।

प्रश्नकर्ता : बाज़ार में से यहाँ सत्संग में आया वह कौन-सा निमित्त?

दादाश्री : वह तो कर्म का उदय। निमित्त का कोई सवाल ही नहीं है। उदयकर्म, बाज़ार के कर्म का उदय पूरा हुआ, इसलिए इस कर्म का

उदय यहाँ शुरू हुआ। इसलिए अपने आप विचार आता है कि चलो वहाँ जाते हैं। निमित्त कब कहलाता है? यहाँ आने के लिए निकले, दादर स्टेशन पर उतरे, थोड़ी दूर पहुँचे और कोई आकर मिला कि, 'भई, वापस चलो, मुझे ऐसा है और मुझे खास काम है।' तब हम जानें कि यह निमित्त आया। नहीं तो चलती हुई गाड़ी, वह तो कर्म के उदय के अनुसार चलती रहती है।

नहीं लगते बोल, बगैर दोष के

प्रश्नकर्ता : कोई हमें कुछ कह जाए वह भी नैमित्तिक ही न? अपना दोष नहीं हो, फिर भी बोले तो?

दादाश्री : अपना दोष नहीं हो और वह बोले, तो किसीको ऐसा अधिकार नहीं है बोलने का। जगत् में किसी मनुष्य को, यदि आपका दोष नहीं हो, तो बोलने का अधिकार नहीं है। इसलिए, ये जो बोलता है वह आपकी भूल है, उसका बदला देता है यह। हाँ, वह आपकी पिछले जन्म की जो भूल है, उस भूल का बदला यह मनुष्य आपको दे रहा है। वह निमित्त है और भूल आपकी है। इसलिए ही वह बोल रहा है।

अब वह अपनी भूल है, इसलिए यह बोल रहा है। तो वह मनुष्य हमें उस भूल में से मुक्त करवाता है। उसके प्रति भाव नहीं बिगाड़ना चाहिए। और हमें क्या कहना चाहिए कि प्रभु उसे सद्बुद्धि देना। इतना ही कहना चाहिए, क्योंकि वह निमित्त है।

काटना निमित्त को?

हमें तो किसी मनुष्य के लिए खराब विचार तक भी नहीं आता है। उल्टा-सीधा कर जाए, तब भी खराब विचार नहीं! क्योंकि उसकी दृष्टि, बेचारे को जैसा दिखता है वैसा करता है। उसमें उसका क्या दोष? और वास्तव में, एक्ज़ेक्टली क्या है यह जगत् कि इस जगत् में कोई दोषित है ही नहीं। आपको दोष दिखता है, वह आपकी देखने की दृष्टि में अंतर है। मुझे कोई दोषित दिखा नहीं आज तक। इसलिए कोई दोषित है नहीं,

ऐसा मानकर आप चलना न? अपना अंतिम स्टेशन है, वह सेन्ट्रल है, ऐसा मानकर हम चलें तो फायदा होता है या नहीं होता? आपको क्या लगता है?

प्रश्नकर्ता : हाँ, होता है फायदा।

दादाश्री : कोई दोषित है नहीं, ऐसा जानोगे, तभी अन्य सब निर्दोष लगेंगे हमें! क्योंकि हम निमित्त हैं और वे बेचारे भी निमित्त हैं। और हमारे लोग निमित्त को काटते हैं। निमित्त को काटना, ऐसा करते हैं क्या कभी? नहीं काटते, नहीं? निमित्त को काटते हैं?

प्रश्नकर्ता : हम निमित्त को काटते हैं, पर काटना नहीं चाहिए न?

दादाश्री : पराये दोष देखना, उसे हम निमित्त को काटने की स्थिति कहते हैं। अरे! निमित्त को काटा तूने? वह तुझे गालियाँ देता है, वह तेरे कर्म का उदय है। यह उदय तुझे भुगतना है। बीच में वह निमित्त है। निमित्त तो उपकारी है कि भई, तुझे कर्मों में से छुड़वाने आया है। उपकारी है, उसके बदले तू गालियाँ देता है? तू उसे काट खाता है? इसलिए वह, निमित्त को काटा, ऐसा कहलाता है। इसलिए, ये महात्मा डर गए हैं कि नहीं, हम काटेंगे नहीं अब कभी भी!!

'यह मुझे ठग गया' ऐसा बोला वह भयंकर कर्म बाँधता है। उसके बजाय दो धौल मार ले तो कम कर्म बँधते हैं। वह तो जब ठगे जाने का काल उत्पन्न होता है, हमारे कर्म का उदय होता है, तभी हम ठगे जाते हैं। उसमें सामनेवाले का क्या दोष? उसने तो उल्टे हमारा कर्म खपा दिया, वह तो निमित्त है।

अनुमोदन का फल

प्रश्नकर्ता : दूसरों के दोष का खुद को दंड मिलता है?

दादाश्री : नहीं, उसमें किसीका भी दोष नहीं है। खुद के दोष से ही सामनेवाले निमित्त बनते हैं। यह तो भुगते उसकी भूल। करना, करवाना

और अनुमोदन करना। उस अनुमोदन का भी फल आता है। किए बिना फल नहीं आता।

प्रश्नकर्ता : अनुमोदन किसे कहते हैं?

दादाश्री : यदि कोई कुछ करते हुए हिचकिचाता हो तो आप कहो कि, 'तू तेरे कर, मैं हूँ ना।' वह अनुमोदन कहलाता है। और अनुमोदन करनेवाले की अधिक जिम्मेदारी कहलाती है। किए हुए का फल किसे ज्यादा मिलता है? तब कहे, जिसने अधिक बुद्धि इस्तेमाल की, उसके आधार पर वह बँट जाता है।

नहीं चुनौती, तो पूर्णता की प्राप्ति

इस जगत् में कोई भी मनुष्य आपका कुछ भी नुकसान करता है, उसमें वह निमित्त है। नुकसान आपका है, इसलिए 'रिस्पोन्सिबल' (जिम्मेवार) आप हो। कोई मनुष्य किसीका कुछ कर सकता ही नहीं है, ऐसा यह स्वतंत्र जगत् है। और यदि कोई कुछ भी कर सकता होता तो 'फीयर' (डर) का कोई पार ही नहीं रहता! तब तो फिर कोई किसीको मोक्ष में ही जाने नहीं देता। तब तो फिर भगवान महावीर को भी मोक्ष में जाने नहीं देते। भगवान महावीर तो कहते हैं कि आपको जो अनुकूल हो, वैसा भाव मुझ पर करना, आपको मुझ पर विषय के भाव आएँ, तो विषय के करो, निर्विषय के भाव आते हैं तो निर्विषय के करो, धर्म के भाव आते हैं तो धर्म के करो, पूज्यपद के आते हैं तो पूज्यपद दो, गालियाँ देनी हों तो गालियाँ दो। मेरी उसके सामने कोई चुनौती नहीं है। जिन्हें चुनौती नहीं है, वे मोक्ष में जाते हैं और चुनौती देनेवाले का यहीं मुकाम रहता है!

नहीं तो यह जगत् तो ऐसा है न कि आपके ऊपर उल्टा या सुल्टा भाव करता ही रहता है। जेब में आप रुपये रख रहे हों और वह किसी जेबकतरे ने देख लिया तो जेब काटने का भाव करता है या नहीं करता? कि रुपये हैं, काट लेने जैसा है। पर उतने में गाड़ी आई और आप बैठ गए और आप चले गए और वह रह गया। पर ऐसा भाव तो करता ही

है जगत्! पर उसमें आपकी चुनौती नहीं है तो कोई आपका नाम देनेवाला नहीं है। किसीके भी भाव में आपका भाव नहीं है तो कोई आपको बाँधनेवाला नहीं है। ऐसे बाँधे तो पार ही नहीं आए न! आप स्वतंत्र हो, कोई आपको बाँध सके ऐसा नहीं है।

एक में से अनंत, अज्ञानता से

यह आँख हाथ से दब जाए तो चीज़ एक हो, तो दो दिखाई देती हैं। आँख, वह आत्मा का रियल स्वरूप नहीं है। वह तो रिलेटीव स्वरूप है। फिर भी, एक भूल होने से एक के बदले दो दिखती हैं न? ये काँच के टुकड़े ज़मीन पर पड़े हों तो कितनी आँखें दिखती हैं? यह ज़रा-सी भूल से कितनी सारी आँखें दिखती हैं? वैसे ही यह आत्मा खुद दबता नहीं है, पर संयोगों के प्रेशर (दबाव) से एक के अनंत रूप दिखते हैं। यह जगत् सारा भगवत् स्वरूप है। इस पेड़ को काटने का केवल भाव ही करें तो भी कर्म चिपके ऐसा है। सामनेवाले का ज़रा-भी खराब सोचा तो पाप लगता है और अच्छा भाव करे, तो पुण्य बँधता है।

हम यहाँ सत्संग में आएँ और यहाँ लोग खड़े हों, तो होता है कि ये सब क्यों खड़े हैं? तब मन में भाव बिगड़ता है। उस भूल के लिए, उसका इसलिए तुरन्त ही प्रतिक्रमण करना पड़ता है।

दो ही वस्तुएँ विश्व में

संयोग और शुद्धात्मा दो ही हैं। संयोग खड़े क्यों हुए? संयोग सभी को अलग-अलग आते हैं। हाँ, किसीको सारी ज़िन्दगी कोई मारनेवाला नहीं मिलता और किसीको सारी ज़िन्दगी में कितनी ही बार मार खानी पड़ती है। उसे ऐसा संयोग क्यों आता है और इसे ऐसा क्यों? क्योंकि उसने किसीको मारने का भाव ही नहीं किया था, इसलिए उसे ऐसा संयोग और इसने मारने के ही भाव किए थे, इसलिए इसे ऐसा संयोग। मतलब ऐसे संयोग किसलिए आए, उसके भी कारण मिलें ऐसा है। ऐसा संयोग किस कारण से मिला, वह भी पता चले ऐसा है।

रास्ते में कोई गरीब मनुष्य मिला और बहुत रो रहा हो तो आप उसे ग्यारह रुपये दे रहे हों, तो यह भाई कहेगा कि रहने दो न! उसे एक ही रुपया दो न! ग्यारह रुपये उसे किसलिए देते हैं?' अब वह लेनेवाला, देनेवाले आप और इसने मना किया यानी अंतराय पड़ा। उसको मिल रहा था उसमें अंतराय पड़ा। उस अंतराय कर्म से रुपये उसके पास जमा नहीं होंगे।

अब यह जो-जो सब किया, ये उसके ही सारे संयोग इकट्ठे हुए हैं। कोई नया संयोग नहीं है। आपका कोई ऊपरी है नहीं, वैसे ही आपका कोई अंडरहैन्ड भी नहीं है। जगत् सारा स्वतंत्र है। आपकी भूलें ही आपकी ऊपरी हैं बस, हमारी भूलें होती हैं वे ही! भूलें और ब्लंडर्स!!!

यानी आपकी भूल नहीं हो तो कोई आपका नाम देनेवाला भी नहीं है वर्ल्ड में। देखो, रास्ते में कोई नाम देता है? पुलिसवाले, चेकिंगवाले कोई कुछ परेशान करता है कहीं? तंग करता है? क्योंकि यदि आपकी भूल नहीं होगी तो कोई नाम ही नहीं लेगा।

निमंत्रण धौल को, मुआवज़े के साथ

कोई हमें गालियाँ दे, हमें बुरा सुनने को मिला, वह तो बहुत पुण्यवान कहलाता है, नहीं तो वह मिलता ही नहीं न! मैं पहले ऐसा कहता था, आज से दस-पंद्रह साल पहले, कि भाई, कोई भी मनुष्य पैसों की अड़चनवाला हो, तो मैं कहता हूँ कि मुझे एक धौल मारना, मैं पाँच सौ रुपये दूँगा। एक आदमी मिला था, मैंने उससे कहा कि 'तुझे पैसों की कमी है न? सौ-दो सौ की? तो तेरी कमी तो आज से ही पूरी हो जाएगी। मैं तुझे पाँच सौ रुपये दूँगा, तू मुझे एक धौल मार।' तब बोला, 'नहीं दादा, ऐसा नहीं हो सकता।' मतलब धौल मारनेवाले भी कहाँ से लाएँ? मोल लाएँ तो भी ठिकाना पड़े, ऐसा नहीं है और गालियाँ देनेवाले का भी ठिकाना पड़े ऐसा नहीं है। तब जिसे घर बैठे ऐसा फ्री ऑफ कॉस्ट (मुफ्त में) मिलता हो तो वह भाग्यशाली ही कहलाएगा न! क्योंकि मुझे तो पाँच सौ रुपये देकर भी कोई मिलता नहीं था।

यह ज्ञान होने से पहले तो मैं खुद अपने को गालियाँ देता था, क्योंकि मुझे कोई गालियाँ देता नहीं था न! तब मोल कहाँ से लाएँ हम? और मोल कौन दे? हम कहें कि तू मुझे गाली दे, तो भी कहेगा कि नहीं आपको गाली नहीं दे सकता। यानी पैसे दें फिर भी कोई गाली नहीं देता है। इसलिए फिर मुझे खुद गालियाँ देनी पड़ती थीं, 'आपमें अक़्ल नहीं है, मूरख हो आप, गधे हो, ऐसे हो, किस तरह के मनुष्य हो? मोक्ष धर्म कोई कठिन है कि अपने इतना सब ऊधम मचाया है?' ऐसी गालियाँ खुद देता था। कोई गालियाँ देनेवाला नहीं हो तब फिर क्या करें? आपको तो घर बैठे कोई गालियाँ देनेवाला मिलता है, फ्री ऑफ कॉस्ट मिलता है, तब क्या उसका लाभ नहीं उठाना चाहिए?!

लुटेरा भी दूर रहे शीलवान से

शील का प्रभाव ऐसा है, जगत् में कोई नाम नहीं ले उसका। लुटेरों के बीच रहता हो, सभी उँगलियों में सोने की अँगूठियाँ पहनी हों। यहाँ पूरे शरीर पर सोने के आभूषण पहने हों और लुटेरे मिल जाएँ। लुटेरे देखते ज़रूर हैं, पर छू नहीं सकते, छू ही नहीं सकते। बिलकुल घबराने जैसा जगत् ही नहीं है। जो कुछ घबराहट है वह आपकी ही भूल का फल है, ऐसा हम कहने आए हैं। लोग तो ऐसा ही समझते हैं कि जगत् अनियमवाला है।

प्रश्नकर्ता : समझदारी की इतनी कमी!

दादाश्री : उस समझ की कमी की वज़ह से ही जगत् खड़ा रहा है। हम ऐसा कहना चाहते हैं कि जगत् में भय रखने जैसा है ही नहीं। जो भय आता है, वह आपका हिसाब है। चुक जाने दो। यहाँ से फिर नये सिरे से उधार मत देना।

आपको कोई उल्टा कहे, तब आपको है तो मन में ऐसा होता है कि यह मुझे क्यों उल्टा बोलता है? इसलिए आप उसे फिर पाँच गालियाँ दे देते हो। इसका मतलब, जो आपका हिसाब था, उसे चुकाते समय आपने फिर नया हिसाब का बहीखाता शुरू किया। अर्थात् एक

गाली उधार दी थी, वह लौटाने आया था, वह हमें जमा कर लेनी थी, उसके बजाय पाँच आपने उधार दीं। और फिर एक तो सहन होती नहीं, तब फिर दूसरी पाँच उधार दीं। अब इसमें मनुष्यों की किस तरह बुद्धि पहुँचे! इसलिए उधार दे-देकर और गुत्थियाँ उलझाते रहते हैं। उलझनें सब खड़ी करते हैं।

यह हम पंद्रह बरस से उधार देते नहीं है, इसलिए कितने हिसाब साफ हो गए हैं सभी! उधार देना ही बंद कर दिया है न! जमा ही कर। 'इनसे' कह दिया है न, जमा कर देना। आसान है न, रास्ता आसान है न? अब यह शास्त्रों में लिखा हुआ नहीं होता है?

कोई कुछ कर सकता नहीं है। आप स्वतंत्र हो। आपका ऊपरी ही कोई नहीं है। भगवान भी ऊपरी नहीं है वहाँ पर फिर? भगवान की ओट में आप आश्वासन लेते हो कि भगवान हैं हम पर दया करेंगे! 'देखा जाएगा' ऐसा करके उल्टा करते हो, जिम्मेदारी मोल लेते हो!

नहीं रहा भुगतना ज्ञानी को

किसीको हमसे किंचित् मात्र दु:ख हो तो समझना कि अपनी भूल है। अपने भीतर परिणाम ऊपर-नीचे हों तो भूल अपनी है ऐसा समझ में आता है। सामनेवाला व्यक्ति भुगत रहा है, इसलिए उसकी भूल तो प्रत्यक्ष है, पर निमित्त हम बने, हमने उसे डाँटा, इसलिए हमारी भी भूल। क्यों दादा को भुगतना नहीं आता? क्योंकि उनकी एक भी भूल रही नहीं है। अपनी भूल से सामनेवाले को कोई भी असर हो और जो कुछ उधार हो जाए तो तुरन्त ही मन से माफ़ी माँगकर जमा कर लेना चाहिए। अपने में क्रोध-मान-माया-लोभ के कषाय हैं, वे उधार हुए बगैर रहते ही नहीं हैं। इसलिए उनके सामने जमा कर लेना चाहिए। अपनी भूल हुई हो, तब उधार होता है, पर तुरन्त ही केश-नक़द प्रतिक्रमण कर डालना चाहिए। हमारे कारण किसीको अतिक्रमण हो जाए, तो हमें जमा कर लेना चाहिए, और आगे के लिए उधार नहीं रखना चाहिए। और यदि किसीसे हमें अतिक्रमण हो तो हमें आलोचना-प्रतिक्रमण-प्रत्याख्यान कर लेना चाहिए।

भूल मिटाए वह परमात्मा

जिसने एक बार नक्की किया हो कि मुझमें जो भूलें रही हों उसे मिटा देनी है, वह परमात्मा हो सकता है! हम अपनी भूल से बँधे हैं। भूल मिटे तब तो परमात्मा ही हैं! जिसकी एक भी भूल नहीं, वह खुद ही परमात्मा है। यह भूल क्या कहती है? 'तू मुझे जान, मुझे पहचान।' यह तो ऐसा है कि भूल को खुद का अच्छा गुण मानते थे। भूल का स्वभाव कैसा है कि वह हमारे ऊपर शासन चलाती है। पर भूल को भूल जाना तो वह भाग जाती है। फिर खड़ी नहीं रहती। जाने लगती है। पर यह तो क्या करते हैं कि एक तो भूल को भूल जानते नहीं हैं और ऊपर से उसका पक्ष लेता है। मतलब भूल को घर में ही भोजन कराते हैं।

दिए आधार भूलों को, पक्ष लेकर

प्रश्नकर्ता : दादा, भूल का पक्ष किस तरह लिया जाता है?

दादाश्री : यह हम किसीको डाँटने के बाद कहें कि, 'हमने उसे नहीं डाँटा होता तो वह समझता ही नहीं। इसलिए उसे डाँटना ही चाहिए।' इससे तो वह 'भूल' समझती है कि इस भाई को मेरा अभी तक पता ही नहीं चला है और उल्टे मेरा पक्ष लेता है। इसलिए यहीं खाओ, पीओ और रहो। एक ही बार यदि अपनी भूल का पक्ष लें तो उस भूल का बीस साल का आयुष्य बढ़ जाता है। किसी भी भूल का पक्ष नहीं लेना चाहिए।

चाबी भूलें मिटाने की

मन-वचन-काया से प्रत्यक्ष दादा भगवान की साक्षी में क्षमा माँगते रहना। हर कदम पर जागृति रहनी चाहिए। अपने में क्रोध-मान-माया-लोभ के कषाय तो भूलें करवाकर उधारी करवाएँ, ऐसा माल है। वे भूलें करवाते ही हैं और उधारी खड़ी करते हैं, पर उसके सामने हमें तुरन्त ही, तत्क्षण माफ़ी माँगकर जमा करके चोखा कर लेना चाहिए। यह व्यापार पैन्डिग नहीं रखना चाहिए। यह तो दरअसल नक़द व्यापार कहलाता है।

प्रश्नकर्ता : अभी जो भूलें होती हैं, वे पिछले जन्म की हैं न?

दादाश्री : पिछले जन्म के पापों को लेकर ही ये भूलें हैं। पर इस जन्म में फिर भूलें मिटती ही नहीं हैं और बढ़ाते जाते हैं। भूल को मिटाने के लिए भूल को भूल कहना पड़ता है। उसका पक्ष नहीं लेना चाहिए। यह ज्ञानी पुरुष की चाबी कहलाती है। इससे चाहे जैसा ताला खुल जाता है।

ज्ञानी पुरुष आपकी भूल के लिए क्या कर सकते हैं? वे तो मात्र आपकी भूल बताते हैं, प्रकाश डालते हैं, रास्ता दिखाते हैं कि भूलों का पक्ष मत लेना। पर यदि भूलों का पक्ष लें कि, 'हमें तो इस दुनिया में रहना है, तो ऐसा कैसे कर सकते हैं?' अरे! यह तो भूल को पोषण देकर उसका पक्ष मत लेना। एक तो मुआ, भूल करता है और ऊपर से कल्पांत करता है, तो *कल्प* (कालचक्र) के अंत तक रहना पड़ेगा!

भूल को पहचानने लगा, तो भूल मिटती है। कुछ लोग कपड़े खींच-खींचकर नापते हैं और ऊपर से कहते हैं कि आज तो पाव गज कपड़ा कम दिया। यह तो इतना बड़ा रौद्रध्यान और फिर उसका पक्ष? भूल का पक्ष नहीं लेना होता है। घीवाला घी में किसीको पता नहीं चले ऐसे मिलावट करके पाँच सौ रुपये कमाता है। वह तो मूल के साथ वृक्ष बो देता है। अनंत जन्म खुद ही खुद के बिगाड़ देता है।

बंद करो कषायों का पोषण

किसी मनुष्य को भूल रहित होना हो तो उसे हम कहते हैं कि केवल तीन ही साल क्रोध-मान-माया-लोभ को खुराक मत देना। तो सभी बेजान हो जाएँगे। भूलों को यदि तीन ही वर्ष खुराक नहीं मिले तो वे घर बदल देती हैं। दोष, वही क्रोध-मान-माया-लोभ का पक्ष। यदि तीन वर्ष के लिए पक्ष कभी भी नहीं लिया तो वे भाग जाएँगे।

ज्ञानी पुरुष के बताए बिना मनुष्य को अपनी भूल का भान नहीं होता है। ऐसी अनंत भूलें हैं। यह एक ही भूल नहीं है। अनंत भूलों ने घेर लिया है।

प्रश्नकर्ता : पर ज़्यादा दोष दिखते नहीं हैं। थोड़े ही दिखते हैं।

दादाश्री : यहाँ सत्संग में बैठने से आवरण टूट जाते हैं, वैसे-वैसे दोष दिखते जाते हैं।

प्रश्नकर्ता : दोष अधिक दिखें, उसके लिए जागृति कैसे आती है?

दादाश्री : भीतर जागृति तो बहुत है, पर दोषों को ढूँढने की भावना हुई नहीं है। पुलिसवाले को जब चोर खोजने की इच्छा हो तब चोर मिल जाता है। पर यदि पुलिसवाला कहे कि, 'चोर को पकड़ने जैसा नहीं है। वह तो आएगा तब पकड़ेंगे।' तब फिर चोर मज़े करेगा ही न? ये भूलें तो छुपकर बैठी हैं। उन्हें ढूँढो तो तुरन्त ही पकड़ में आती हैं।

सभी कमाई का फल क्या है? आपके दोष एक के बाद एक आपको दिखें तब ही कमाई करी कहलाती है। यह सारा ही सत्संग खुद खुद के सभी दोष देखे उसके लिए है। और खुद के दोष दिखें, तभी वे दोष जाएँगे। दोष कब दिखेंगे? जब खुद 'स्वयं' होंगे, 'स्वस्वरूप' होंगे तब। जिसे खुद के दोष ज्यादा दिखें, वह ऊँचा। जब इस देह के लिए, वाणी के लिए, वर्तन के लिए संपूर्ण निष्पक्षपात उत्पन्न होता है तभी खुद, खुद के सभी दोष देख सकता है।

अंधापन नहीं देखने देता दोष को

तुझे तेरे दोष कितने दिखते हैं? और तू कितने दोष धो डालता है?

प्रश्नकर्ता : दोष तो बहुत दिखते हैं। जैसे कि क्रोध है, लोभ रहा हुआ है।

दादाश्री : वे तो चार-पाँच दोष, वे दिखें तो नहीं दिखे जैसे कहलाते हैं और किसीके दोष देखने हों तो कितने देख लेते हो?

प्रश्नकर्ता : बहुत सारे दिखते हैं।

दादाश्री : बहुत सारे देख लेता है तू?

प्रश्नकर्ता : हाँ।

दादाश्री : किसी दूसरे के तो, रास्ते चलते भी, तुझे चलना नहीं

आता, तू ऐसे चलता है, तू ऐसा है, सब बहुत तरह के दोष दिखते हैं, और खुद के मिलते नहीं। क्योंकि क्रोध-मान-माया-लोभ से अंध है। लोभ से अंध, क्रोध से अंध, माया से अंध, मान से अंधा, सब अंध स्वरूप है। खुली आँखों से अंधे होकर घूम रहे हैं, भटकते रहते हैं। कितनी उपाधी कहलाती है!

खुली आँखों से सारा जगत् सो रहा है और सभी नींद में ही कर रहे हैं, ऐसा भगवान महावीर कहते हैं। क्योंकि खुद का अहित कर रहे हैं। खुली आँखों से अहित कर रहे हैं, और भगवान ने उसे भावनिद्रा कहा है। सारा जगत् भावनिद्रा में पड़ा हुआ है। 'मैं शुद्धात्मा हूँ,' ऐसा भान होने के बाद भावनिद्रा सर्वांश गई कहलाती है, जागृत हुए कहलाते हैं।

बुद्धि की वकालत से, जीतते हैं दोष

जागृत हुए, इसलिए सब पता चलता है कि यहाँ भूल होती है, ऐसे भूल होती है। नहीं तो खुद को खुद की एक भी भूल मिले नहीं। दो-चार बड़ी भूलें होती हैं न, वे दिखती हैं। उसे खुद को दिखती है उतनी ही। कभी बोलते भी हैं कि ज़रा-सा क्रोध है और थोड़ा-सा लोभ भी है, ऐसा बोलते भी हैं, पर हम कहें कि, 'आप क्रोधी हैं', तब तुरन्त क्रोध का रक्षण करते हैं, बचाव करते हैं, वकालत करते हैं। हमारा क्रोध, वह क्रोध नहीं माना जाता, ऐसी वकालत करते हैं, और जिसकी वकालत करो वह हमेशा आप पर चढ़ बैठता है।

जगत् के सारे लोगों को क्रोध-मान-माया-लोभ निकालने हैं, किसे निकालने की इच्छा नहीं होगी? वे तो बैरी ही हैं, ऐसा सब जानते हैं, फिर भी रोज़ भोजन कराते हैं और बड़ा करते हैं। खुद की भूल ही दिखे नहीं, फिर मनुष्य भूलों को खुराक ही देगा न!

करें ज्ञानी इकरार, निजदोषों के

भूल हुई हो, पर उसका आयुष्य किस तरह बढ़ता है, वह मैं जानता था। इसलिए क्या करता था? सभी बैठे हों और कोई एक जना आकर

कहे, 'बड़े ज्ञानी बनकर बैठे हैं, हुक्का तो छूटता नहीं।' ऐसा सब बोले न, तब मैं कहूँ कि, 'महाराज, यह इतनी हमारी खुली कमज़ोरी है, वह मैं जानता हूँ। आपने तो आज जाना, मैं तो पहले से ही जानता हूँ।' यदि मैं ऐसा कहूँ कि हम ज्ञानियों को कुछ नहीं छूता, तो वह हुक्का अंदर समझ जाएगा कि यहाँ बीस वर्ष का आयुष्य अपना बढ़ गया! क्योंकि मालिक अच्छे हैं, चाहे जो करके रक्षण करते हैं। वैसा मैं कच्चा नहीं हूँ। रक्षण कभी भी नहीं किया। लोग रक्षण करते हैं या नहीं करते?

प्रश्नकर्ता : हाँ करते हैं, बहुत ज़ोरदार करते हैं।

दादाश्री : एक साहब नसवार सूँघते थे, ऐसे करके! मैंने कहा, 'साहब, यह नसवार ज़रूरी है आपके लिए?' तब उन्होंने कहा, 'नसवार में कोई हर्ज नहीं है।' मुझे हुआ, इन साहब को मालूम ही नहीं है कि इस नसवार का अंदर से आयुष्य बढ़ा रहे हैं! क्योंकि आयुष्य यानी क्या? कोई भी संयोग जो है, वह वियोग का नक्की होने के बाद ही वह संयोग मिलता है। यह तो जो नक्की हो चुका है, उसका फिर आयुष्य बढ़ाते हैं ऐसे! क्योंकि जीवित मनुष्य, चाहे उतना कम-ज़्यादा करवाए इसलिए क्या हो फिर?! ये सभी आयुष्य बढ़ा रहे हैं, हर एक बात में उसका रक्षण करते हैं कि, 'कोई हर्ज नहीं, हमें तो छूता ही नहीं।' गलत चीज़ का रक्षण करना तो भयंकर गुनाह है।

प्रश्नकर्ता : और शुष्क अध्यात्म में उतर गए हों, तो वे ऐसा कहते हैं कि आत्मा को कुछ छूता नहीं है, यह तो पुद्‌गल को है सब।

दादाश्री : ऐसे तो सब बहुत हैं यहाँ। गोल-गोल, गोल-गोल घुमाते हैं वे। उनका ही माल, वह शुष्क कहलाता है।

फिर सब सुनने के बाद मैं कहूँ कि भगवान ने कहा है कि इतने लक्षण चाहिए, मृदुता, ऋजुता, क्षमा! यह तो मृदुता दिखती नहीं, ऋजुता दिखती नहीं, ऐसी तो अकड़ है!

अकड़ और आत्मा बहुत दूर हैं।

यह तो पोल चलती जाती है। ये लोग जवाब दे नहीं सकते हैं इसलिए फिर ये सब पोल मारने जाते हैं। पर मेरे जैसे तो जवाब देते हैं न? तुरन्त जवाब देते हैं। बीरबल जैसा तुरन्त हाज़िर जवाब।

दोष स्वीकारो, उपकार मानकर

हममें आड़ाई ज़रा भी नहीं होती। कोई हमें हमारी भूल बताए तो हम तुरन्त ही एक्सेप्ट (स्वीकार) कर लेते हैं। कोई कहे कि यह आपकी भूल है, तो हम कहते हैं कि हाँ भाई, यह तूने हमें भूल बताई तो तेरा उपकार। हम तो जानें कि जो भूल उसने बता दी, उसके लिए उसका उपकार। बाक़ी दोष है या नहीं है, वह पता लगाने जाना नहीं है। उन्हें दिखता है, इसलिए दोष है ही। मेरे कोट के पीछे लिखा हो कि, 'दादा चोर हैं।' लोग फिर पीछे बोलेंगे या नहीं बोलेंगे? किसलिए 'दादा चोर हैं' ऐसा बोलते है? क्योंकि मेरे पीछे लिखा है, बोर्ड लगाया है न? फिर जब हम देखें, तब पता चले कि हाँ, पीछे बोर्ड लगाया है। भले ही दूसरा कोई लिख गया होगा, पर इन सभी को पढ़ना तो आता है न?

प्रश्नकर्ता : दादा ने आप्तवाणी में ऐसा लिखा है कि, 'दादा चोर हैं,' ऐसा कोई लिख दे तो महान उपकार मानना चाहिए। ऐसा लिखा है न?

दादाश्री : हाँ, लिखा है।

प्रश्नकर्ता : मतलब, वह किस तरह?

दादाश्री : हाँ, उपकार नहीं मानो, तो उसमें पूरा आपका अहंकार खड़ा होकर द्वेष में परिणमित होगा। उसे क्या नुकसान होनेवाला है? उसके बाप का क्या जानेवाला है? वह तो दिवालिया होकर खड़ा रहेगा और आपने दिवाला निकलवाया। इसलिए आपको कहना चाहिए, 'भाई, तेरा उपकार है!' हमारा दिवाला नहीं निकले इसलिए। वह तो दिवालिया होकर खड़ा ही रहेगा, उसे क्या? उसे दुनिया की पड़ी नहीं है। वह तो बोलेगा। गैरजिम्मेदारीवाला वाक्य कौन बोलता है? जिसे खुद की जिम्मेदारी का भान

नहीं है, वह बोलता है। तो उसके साथ हम भौंकने जाएँ तो हम भी कुत्ता कहलाएँगे। इसलिए हम कहें, 'तेरा उपकार हैं, भाई।'

प्रश्नकर्ता : अपने दोष के भाव उदय में आएँ, वे हम देखें और समझें, इसलिए उसका उपकार मानना चाहिए?

दादाश्री : हाँ, जहाँ-जहाँ दोष होता हो, वहाँ उपकार मानना भीतर में, तो वह दोष बंद हो जाएगा। पुलिसवाले के ऊपर भी अभाव होता हो, तो उसका उपकार मानना। तब अभाव बंद हो जाएगा। आज कोई भी मनुष्य खटकता हो, तो कहना वह बहुत अच्छा मनुष्य है, वह तो हमारा उपकारी है, तो खटकना बंद हो जाएगा। मतलब ये जो शब्द हम देते हैं न, एक-एक शब्द दवाईयाँ हैं। ये सब मेडिसिन हैं, दरअसल!! नहीं तो 'चोर कहे उसका उपकार मानना,' यह वाक्य किस तरह समझ में आए उसे? तब फिर आप मुझे पूछने नहीं आओ और आपके परिणाम सारे बदल जाएँ। इसलिए उसके बजाय, तुम उपकार मानना। दादा का इतना कहा मानना कि उसका उपकार है भाई, इन दादा ने कहा है इसलिए।

प्रश्नकर्ता : दादा खुद उपकार मानते हों, फिर हम उपकार मानें, उसमें क्या हर्ज है फिर?

दादाश्री : हाँ, हमें ऐसा हिसाब लगाना चाहिए कि, 'अच्छा है चोर ही कहा है। लुच्चा है, बदमाश है, नालायक है, ऐसा सब तो नहीं कहता' उतना अच्छा है न? नहीं तो उसका मुँह है, इसलिए ठीक लगे उतना बोले। उसे कुछ नहीं कहा जा सकता हमसे? हमें उपकार मानना है। उपकार मानने से अपना मन नहीं बिगड़ता। समझ में आया न?

यह बात सैद्धांतिक है। कैसे, कि आप मुझसे कहो कि ''दादा, वह आपको 'चोर' कहता है तो आप क्या करोगे?'' तब मैं कहूँ कि, 'भाई, उपकार मानना।' क्यों कहते हैं कि उपकार मानो आप? 'किसके बदले?' तब कहते हैं, 'कोई कहता नहीं ऐसा? यह प्रतिघोष है किसीका, वह मेरा खुद का ही प्रतिघोष स्वरूप है। इसलिए उपकार मानता हूँ।' यह जगत् प्रतिघोष स्वरूप है। उसकी हन्ड्रेड परसेन्ट गारन्टी लिखकर देता हूँ मैं। यानी

हम भी उपकार मानते हैं, तो आपको भी उपकार ही मानना चाहिए न! और आपका मन बहुत अच्छा रहेगा। 'चोर कहते है', उसका उपकार मानते हैं! नहीं तो फिर आपको सहज ही भाव हो जाए कि दादा के लिए ऐसा बोलता है?! महावीर के लिए इतने बड़े-बड़े शब्द बोलते थे, फिर भी लोगों ने पचा लिया। उनके भक्तों ने, सभी ने पचाए उनके शब्द। जो-जो बोलते, वह सब पचा लेते थे। भगवान ने सिखाया था ऐसा।

'यह' प्रपंच करनेवाला 'तू' ही

प्रश्नकर्ता : इसलिए जगत् निर्दोष है, यह समझने की दृष्टि अब विकसित करनी पड़ेगी न?

दादाश्री : इसलिए, इस बावड़ी में यदि हम नहीं बोले होते तो यह बखेड़ा ही नहीं होता। तब फिर हम सामनेवाले का दोष निकालते हैं कि तू मुझे ऐसा क्यों बोलता है? प्रपंच हमने खड़ा किया और फिर इसे कहते हैं कि तू मुझे ऐसी गाली क्यों देता है? इस पर कोई कहेगा, ''उसने गाली दी, पर तू ऐसा कह न, 'तू राजा है।'' तब ऐसा कहेगा, 'तू राजा है' बस यह तो सब प्रोजेक्शन हमारा ही है।

अरे, ले बोधपाठ इस से

लोग मुझे कहते हैं कि आपको अपने दोष कहने की क्या ज़रूरत है? फायदा क्या? मैंने कहा, 'आपको सीख देने के लिए कि आपको ऐसी हिम्मत आए।' मैं बोलता हूँ तो आपको हिम्मत नहीं आनी चाहिए क्या? हमेशा जो दोष हुआ हो, वह खुला करें तो मन पकड़ में आ जाता है। फिर मन डरता रहता है कि यह तो खुला कर देगा, खुला कर देगा।' उलटे हमसे डरता रहेगा। ये तो बहुत भले मनुष्य हैं। सब खुला कर देंगे। हमने तो कह दिया है कि हम सब खुला कर देंगे। ओपन टु स्काइ (पूर्ण अनावृत) कर देंगे। तब सारे दोष चले गए। तब विलय हो जाते हैं।

भूल मिटाने की रीति....

आपकी कितनी भूलें होती होंगी?

प्रश्नकर्ता : दो-चार-पाँच हो जाती हैं।

दादाश्री : कौन न्याय करनेवाला? यह भूल है, ऐसा न्याय करनेवाला कौन?

प्रश्नकर्ता : नुकसान होता है तब पता चलता है कि भूल की है।

दादाश्री : तब पता चलता है, नहीं? पर न्याय करनेवाला कौन इसमें? भूल करनेवाला मनुष्य भूल कबूल नहीं करता एकदम। न्याय करनेवाला मनुष्य कहे कि यह तुम्हारी भूल है, तब फिर समझ में आता है। तब कबूल करता है, नहीं तो कबूल नहीं करता है। अपनी भूल कोई कबूल नहीं करता इस दुनिया में। और यदि समझ में आए तो कबूल करता है। उसे शूट ऑन साइट (देखते ही ठाँय) करना चाहिए। नहीं तो भूल घटती ही नहीं। आपके गाँव में कोई भूल कबूल करते हैं क्या?

प्रश्नकर्ता : कबूल नहीं करते।

दादाश्री : हाँ, कोई कबूल नहीं करता। अगर अक्कल के बोरे, बेचने जाएँ तो चार आने भी नहीं आएँ। अक्कल के बोरों को बेचने जाएँ तो आएँगे पैसे? सभी अक़्लमंद, हिन्दुस्तान देश में सभी अक़्लमंद, फिर कौन पैसे दे? कोई भूल कबूल नहीं करता न आपके यहाँ? और तू भूल कबूल कर लेता है तुरन्त?

प्रश्नकर्ता : हाँ, तुरन्त मेरी एक भूल बताऊँ?

दादाश्री : हाँ।

प्रश्नकर्ता : मैं पत्ते खेलने का बहुत शौकीन हूँ।

दादाश्री : ऐसा?! पत्ते खेलना तो हिसाब है। भीतर हिसाब किया था खुद ने, जो डिसाइड किया हुआ है, वही हम खुद भुगतते हैं यह।

प्रश्नकर्ता : अब यह पत्ते खेलता है और खुश होता है, पर उसकी

वाइफ को अच्छा नहीं लगता है।

दादाश्री : अच्छा नहीं लगे तो वही भुगते। जो भुगते, उसकी भूल। यदि नहीं भुगतते हों तो कोई उनकी भूल नहीं है। यदि वे भुगतती हों, तो उनकी ही भूल है।

प्रश्नकर्ता : वाइफ कहती है, 'मैं भुगतती ही नहीं हूँ।' जब कि पति को ऐसा लगता है कि वह भुगतती है।

दादाश्री : पर वह खुद कहती है कि मैं नहीं भुगतती हूँ, इसलिए फिर हो गया, छूट गया! इस ज्ञान से पहले भुगतती होंगी! बाद में तो समझे न! क्योंकि कोई न कोई आदत तो होती है। तो कोई उसे और हमें लेना-देना नहीं है। वह तो माल भरकर आए हैं। खुद को छोड़ना हो, तब भी नहीं छूटे। वह आदत उसे नहीं छोड़ती फिर! अब उसे हम डाँटें तो वह अपनी भूल है। उसका बुरा मानें, वह भी भूल है। क्योंकि वह आदत उसे छोड़ती नहीं है।

प्रश्नकर्ता : पर दादा, उसका कोई रास्ता तो होता है या नहीं? उस आदत को छोड़ने का कोई रास्ता तो होना चाहिए न?

दादाश्री : रास्ता उसका एक ही है कि ये भाई पत्ते खेलते हों, तब उन्हें निरंतर अंदर रहना चाहिए कि यह गलत चीज़ है। यह गलत चीज़ है, यह गलत चीज़ है। निरंतर ऐसा रहना चाहिए। और ऐसे रोज़ गलत चीज़ है बोलें और एक दिन कोई आकर कहे कि, 'यह ताश खेलना बहुत बुरी आदत है।' वहाँ आप कहो कि, 'नहीं, अच्छी चीज़ है' कि फिर बिगड़ा। उस घड़ी आपको ऐसा कह देना चाहिए कि गलत चीज़ है। पर कोई उकसाए तब जीवित रखते हैं लोग! इसलिए लोग कहते हैं, 'हमारी आदतें क्यों छूटतीं नहीं?' पर जीवित किसलिए रखते हो? फिर से पानी मत पिलाना उस दिन। लोग तो उल्टा बोलते हैं। आपको समझ में आया न? ऐसा होता है कि नहीं होता?

प्रश्नकर्ता : होता है।

दादाश्री : इसलिए उससे जीवित रहा है।

मुझे भी ऐसा हुआ था, इसलिए फिर मैंने खोज की थी। यानी ये सभी चीज़ें होती हैं, फिर भी अंदर उसके लिए अलग। हुक्का पीता था, फिर भी अंदर अलग, चाय पीता था फिर भी अंदर अलग। परवश करनेवाली वस्तुएँ हमें नहीं होनी चाहिए। फिर भी परवश हो गए तो अब कैसे छूटना, उसका उपाय हमें जानना चाहिए। उपाय जान लिया, तब से हम अलग ही हैं। इसलिए थोड़े समय में छोड़ देना ही है, यह छूट ही जानेवाला है। अपने आप छूट जाए उसका नाम छूटा कहलाता है। अहंकार करके छोड़ें, वह कच्चा रहता है, तो अगले भव में फिर आता है। उसके बजाय समझ से छोड़ने जैसा है।

यानी जिसको जो आदत हो, तो यों पत्ते खेलें, अच्छी तरह फर्स्ट क्लास, पर मन में अंदर ऐसा होना चाहिए कि यह नहीं होना चाहिए, यह नहीं होना चाहिए। फिर हज़ार लोगों के सामने, हम उपदेश दे रहे हों, उस घड़ी कोई आकर कहे, 'अब क्या, पत्ते तो छूटते नहीं हैं और वैसे ही ये करते रहते हो?' तब कहें, 'पत्ते खेलने में हर्ज नहीं है।' ऐसा नहीं बोलते। वहाँ बोल देना कि, 'भाई, हमारी कमज़ोरी है, ये पत्ते खेलता हूँ तो बस!'

प्रश्नकर्ता : हज़ार लोगों के बीच भूल का इक़रार करना चाहिए?

दादाश्री : बस, इक़रार करना चाहिए, तो पत्ते सवार नहीं हो जाएँगे। नहीं तो आप ऐसा कहो कि उसमें कोई हर्ज नहीं है, तो पत्ते जान लेंगे कि यह बेवकूफ मनुष्य है, यहीं रहने जैसा है।' पत्ते खुद ही समझ जाते हैं। यह पोला घर है। इसलिए, हमें इक़रार किसी भी समय! आबरू जाए वहाँ भी, आबरू नहीं, नाक कटती हो तो भी इक़रार कर लेना चाहिए। इक़रार करने में पक्का रहना चाहिए।

मन वश करना हो, तो इक़रार से होता है। इक़रार करो न, हर एक बात में खुद की कमज़ोरी खुली कर दें, तो मन वश में हो जाता है। नहीं तो मन वश होता नहीं है। फिर मन निरंकुश हो जाता है। मन कहेगा, 'रास

आए ऐसा घर है यह!'

आलोचना ज्ञानी के पास

और दोष हमें कहो न, उसके साथ ही छूट जाता है और हमें कोई उसकी ज़रूरत नहीं है। आपके लिए छूटने का एक रास्ता है यह। क्योंकि वीतरागों के अलावा, दोष और किसी जगह कह ही नहीं सकते। क्योंकि सारा जगत् दोषित ही है। हमें उसमें नवीनता भी नहीं लगती कि यह दोष भारी है या यह हल्का है। ऐसा बोले भी नहीं हमारे पास, फिर भी हमें तो एक जैसा ही लगता है। भूल तो होती है मनुष्य मात्र की, उसमें घबराना क्या? भूल मिटानेवाले हैं वहाँ कहें, मेरी ऐसी भूल होती है। तो वे रास्ता बताते हैं।

वैसे-वैसे खिलती जाती है सूझ!

भूल मिटेगी, तो काम होगा। भूल मिटेगी किससे? तब कहे भीतर सूझ नाम की शक्ति है। बहुत उलझें, तब सूझ पड़ती है या नहीं पड़ती? फिर ऐसे आराम से बैठ जाएँ, फिर भीतर सूझ पड़ती है या नहीं पड़ती?

प्रश्नकर्ता : हाँ।

दादाश्री : तो कौन देने आता है? सूझ अकेली ही ऐसी शक्ति है जो मोक्ष में ले जाए। जीव मात्र में सूझ नाम की शक्ति होती है। गायें उलझन में पड़ें तब थोड़ी देर खड़ी रहती हैं, चारों तरफ निकलने का रास्ता नहीं होता, तब थोड़ी देर खड़ी रहती हैं, तब अंदर सूझ समझ में आती है और उसके बाद निकल जाती हैं। वह सूझ नाम की शक्ति है, वह विकसित किससे होती है? तब कहें, जितनी भूलें मिटती हैं, उतनी सूझ विकसित होती जाती है। और भूल कबूल की कि भाई, यह भूल मेरी हो गई है, तब से शक्ति बहुत बढ़ती जाती है।

थी ही नहीं तो जाए कहाँ से!

यह क्रोध किया है, वह गलत किया है, ऐसा समझ में आता है

या नहीं आता? अब समझ में आया हो कि अरे! यह ज़रा ज़्यादा है। मतलब, खुद की भूल समझ में आ गई है। उसके बाद सेठ आए बाहर से, और उन्होंने कहा कि, 'महाराज, इस शिष्य के साथ इतना क्रोध?' वापिस वहाँ पर नयी तरह की बात कहता है, 'क्रोध करने जैसा है, वह बहुत टेढ़ा है।' अरे! तुझे खुद को समझ में आ गया है कि यह भूल हो गई है और फिर पक्ष लेता है? किस तरह का घनचक्कर है? हमें सेठ को वहाँ पर क्या कहना चाहिए कि 'मुझे भूल समझ में आ गई है। मैं अब फिर से ऐसा नहीं करूँगा।' तब वह भूल मिटेगी।

नहीं तो हम भूल का पक्ष लेते हैं, सेठ आए तब! वह किसलिए? सेठ के आगे आबरू रखने को? अरे! यह सेठ खुद आबरू बगैर का है। इन कपड़ों के कारण लोगों की आबरू है। बाक़ी, लोगों की आबरू ही कहाँ है? इन सब जगहों पर दिखती है?

दस के किए एक!

यह जगत् 'रिलटिव' है, व्यावहारिक है। हमसे सामनेवाले को एक अक्षर भी नहीं बोला जा सकता और यदि 'परम विनय' में हों तो कमी भी नहीं निकाल सकते। इस जगत् में किसीकी कमी निकालने जैसा नहीं है। कमी निकालने से क्या दोष बैठता है, उसकी कमी निकालनेवाले को खबर नहीं है।

किसीकी भी टीका करनी मतलब अपना दस रुपये का नोट भुनाकर एक रुपया लाना वह। टीका करनेवाला हमेशा खुद का ही खोता है। जिसमें कुछ भी मिलता नहीं है। ऐसी मेहनत हमें नहीं करनी है। टीका से आपकी ही शक्तियाँ व्यर्थ होती हैं। हमें यदि दिखा कि यह तिल नहीं है रेती ही है, तो फिर उसे पीलने की मेहनत किसलिए करनी चाहिए? टाइम और एनर्जी (समय और शक्ति) दोनों 'वेस्ट' (बेकार) जाते हैं। यह तो टीका करके सामनेवाले का मैल धो दिया और तेरा खुद का कपड़ा मैला किया! वह अब कब धोएगा!

किसीके भी अवगुण नहीं देखने चाहिए। देखने ही हों, तो खुद के

देखो न! यह तो दूसरों की भूलें देखें, तो दिमाग कैसा हो जाता है। उसके बजाय दूसरों के गुण देखें, तो दिमाग कैसा खुश हो जाता है!

सारे दुःखो का मूल 'खुद' ही!

सामनेवाले का दोष किसी जगह हैं ही नहीं, सामनेवाले का क्या दोष! वे तो यही मानकर बैठे हैं, कि यह संसार, यही सुख है और यही बात सच्ची है। हम ऐसा मनवाने जाएँ कि आपकी मान्यता गलत है, तो वह अपनी ही भूल है। लोगों को दूसरों के दोष ही देखने की आदत पड़ी है। किसीके दोष होते ही नहीं हैं। बाहर तो आपको दाल-चावल, सब्ज़ी-रोटी सब बनाकर, रस-रोटी बनाकर देते हैं सभी, परोसते हैं, ऊपर से घी भी रख जाते हैं, गेहूँ बीनते हैं, आपको पता भी नहीं चलता। गेहूँ बीनकर पिसवाते हैं। यदि कभी बाहरवाले कोई दुःख देते हों तो गेहूँ किसलिए बीनेंगे? इसलिए बाहर कोई दुःख देते नहीं हैं। दुःख आपका, अंदर से ही आता है।

सामनेवाले का दोष ही नहीं देखें, दोष देखने से तो संसार बिगड़ जाता है। खुद के ही दोष देखते रहना है। अपने ही कर्मों के उदय का फल है यह। इसलिए कुछ कहने को ही नहीं रहा न! ये तो सभी अन्योन्य दोष देते हैं कि आप ऐसे हो, आप वैसे हो, और साथ में टेबल पर बैठकर खाते हैं। ऐसे अंदर बैर बँधता है। इस बैर से दुनिया खड़ी रही है। इसलिए तो हमने कहा कि 'समभाव से *निकाल* करना।' उससे बैर बंद होते हैं।

नहीं कोई दोषित जगत् में!

एक-एक कर्म से मुक्ति होनी चाहिए। सास परेशान करे, तब हर एक समय कर्म से मुक्ति मिलनी चाहिए। तो उसके लिए हमें क्या करना चाहिए? सास को निर्दोष देखना चाहिए कि सास का तो क्या दोष? मेरे कर्म का उदय, इसलिए वे मिली हैं। वे तो बेचारी निमित्त हैं। तो उस कर्म से मुक्ति हुई और यदि सास का दोष देखा, तो कर्म बढ़े। फिर उसे तो कोई क्या करे? भगवान क्या करें?

हमें, हमारा कर्म बँधे नहीं उस तरह रहना चाहिए, इस दुनिया से दूर रहना चाहिए। ये कर्म बाँधे थे, इसलिए तो ये मिले हैं। ये हमारे घर में कौन इकट्ठे हुए हैं? कर्म के हिसाब बँधे थे, वे ही सब इकट्ठे हुए हैं और फिर हमें बाँधकर मारते भी हैं। हमने नक्की किया हो कि मुझे उसके साथ बोलना नहीं है, तो भी सामनेवाला मुँह में उँगलियाँ डालकर बार-बार बुलवाता है। अरे! उँगलियाँ डालकर क्यों बुलवाता है? इसका नाम बैर! सारे पूर्व के बैर! किसी जगह देखा हुआ है क्या?

प्रश्नकर्ता : सब जगह वही दिखता है न!

दादाश्री : इसलिए कहता हूँ न कि खिसक जाओ और मेरे पास आओ। यह मैंने जो पाया है, मैं वह आपको दे दूँ, आपका काम हो जाएगा और छुटकारा हो जाएगा। बाक़ी, छुटकारा होनेवाला नहीं है।

हम किसीका दोष नहीं निकालते, पर *नोंध* (नोट) करते हैं कि देखो यह दुनिया क्या है? हर तरह से यह दुनिया मैंने देखी हुई है, बहुत तरह से देखी हुई है। कोई दोषित दिखता है, वह अभी तक अपनी भूल है। कभी न कभी तो, निर्दोष देखना पड़ेगा न? हमारे हिसाब से ही है यह सब। इतना थोड़े में समझ जाओ न, तो भी सब बहुत काम आएगा।

मुझे जगत् निर्दोष दिखता है। आपको ऐसी दृष्टि आएगी, तब यह पज़ल सॉल्व हो जाएगा। मैं आपको ऐसा उजाला दूँगा और इतने पाप धो डालूँगा कि जिससे आपका उजाला रहे और आपको निर्दोष दिखता जाए। और साथ-साथ पाँच आज्ञा दूँगा। उन पाँच आज्ञा में रहोगे तो वह जो दिया हुआ ज्ञान है, उसे ज़रा भी फ्रेक्चर नहीं होने देंगी।

तब से हुआ समकित!

खुद का दोष दिखे, तब से समकित हुआ कहलाता है। खुद का दोष दिखे, तब से समझना कि खुद जागृत हुआ है। नहीं तो सब नींद में ही चल रहा है। दोष खतम हुए या नहीं हुए, उसकी बहुत चिंता करने जैसी नहीं है, पर जागृति की मुख्य ज़रूरत है। जागृति होने के बाद फिर

नये दोष खड़े नहीं होते हैं और पुराने दोष होते हैं, वे निकलते रहते हैं। हमें उन दोषों को देखना है कि किस तरह से दोष होते हैं।

जितने दोष दिखें, उतने विदाई लेने लगते हैं। जो चिकने होते हैं, वे दो दिन, तीन दिन, पाँच दिन, महीने या साल में भी वे दिखें तो फिर जाने ही लगते हैं, अरे! भागने ही लगते हैं। घर में यदि चोर घुसा हो तो वह कब तक बैठा रहता है? मालिक जानता नहीं हो, तब तक। मालिक यदि जाने तो तुरन्त ही चोर भागने लगेगा।

अंत में तो वे प्राकृत गुण

प्रश्नकर्ता : दादा, हमें दोष नहीं देखने, पर गुण देखने हैं?

दादाश्री : नहीं। दोष भी नहीं देखने हैं और गुण भी नहीं देखने हैं। ये दिखते हैं, वे गुण तो सारे प्राकृत गुण हैं। उनमें से एक भी टिकाऊ नहीं है। दानवीर हो, वह पाँच साल से लेकर पचास साल तक, उसी गुण में रहा हो, लेकिन सन्निपात हो, तब वह गुण बदल जाता है। ये गुण तो वात, पित्त और कफ से रहे हैं और उन तीनों में बिगाड़ हो तो सन्निपात होता है! ऐसे गुण तो अनंत जन्मों से इकट्ठे किए हैं। फिर भी, ऐसे प्राकृत दोष इकट्ठे नहीं करने चाहिए। प्राकृत सद्गुण प्राप्त करे, तो कभी आत्मा प्राप्त कर सकेगा। दया, शांति, ये सब गुण हों, वहाँ भी यदि वात, पित्त और कफ बिगड़े तो वह सबको मारता रहता है। ये तो प्रकृति के लक्षण कहलाते हैं। ऐसे गुणों से पुण्यानुबंधी पुण्य बँधते हैं। उनसे किसी जन्म में 'ज्ञानी पुरुष' मिल जाएँ, तो काम हो जाए। पर ऐसे गुणों में बैठे रहना नहीं है। क्योंकि कब उनमें परिवर्तन हो जाए, वह कह नहीं सकते। वे खुद के शुद्धात्मा के गुण नहीं हैं। ये तो प्राकृत गुण हैं। उन्हें तो हम लट्टू कहते हैं।

सारा जगत् प्राकृत गुणों में ही है। सारा जगत् लट्टू छाप है। यह तो सामयिक-प्रतिक्रमण प्रकृति करवाती है और खुद के सिर पर लेता है और कहता है कि मैंने किया। तो भगवान से पूछें तो भगवान कहें कि, 'यह तो तू कुछ भी करता नहीं हैं।' किसी दिन पैर दुःखता हो तो कहेगा,

'मैं क्या करूँ?' प्रकृति जबरदस्ती करवाती है और कहता है कि 'मैंने किया!' और इसीलिए तो वह अगले जन्म के बीज डालता है। यह तो उदयकर्म से होता है और उसका खुद गर्व लेता है। यह उदयकर्म का गर्व ले, उसे साधु किस तरह कहें? साधु महाराजों की एक भूल कि वे जो उदयकर्म का गर्व लेते हैं। यदि भूल होती हो और वह एक भूल ही यदि मिटा दें तो काम ही हो जाए। उदयकर्म का गर्व महाराज को है या नहीं उतना ही देखना होता है, दूसरा बाहर का कुछ भी देखना नहीं होता। उनमें दूसरे कषाय होंगे तो चलेगा, पर उदयकर्म का गर्व नहीं होना चाहिए। बस, उतना ही देखना होता है।

हर एक जीव अनंत दोष का भाजन है। कृपालुदेव ने कहा, 'मैं तो दोष अनंत का भाजन हूँ करुणाल', ऐसा बोलना।

सबसे बड़ा दोष

भगवान ने संसारी दोष को दोष नहीं माना है। 'तेरे स्वरूप का अज्ञान' वही सबसे बड़ा दोष है। यह तो 'मैं चंदूभाई हूँ', तब तक दूसरे दोष भी खड़े हैं और एक बार 'खुद के स्वरूप का भान' हो तो फिर अन्य दोष चलते बनेंगे!

यह तो खुद की एक भूल भी दिखती नहीं है। हम कहें, 'सेठ आपमें कोई दोष तो होगा न?' तब कहे 'हाँ, थोड़ा, ज़रा-सा क्रोध है और थोड़ा सा लोभ है। दूसरा कोई दोष नहीं हैं।' यह तू वहाँ अनंत बोलता है और यहाँ फिर... 'दो' ही हैं, ऐसा मुँह से बोलता है! हम पूछें, तब वह समझता है कि आबरू चली जाएगी। अरे! आबरू थी ही कहाँ पर? आबरूदार तो किसका नाम कि मनुष्य में से फिर चार पैरवाला न बने, उसका नाम आबरूदार।

अरे! इतना ज़्यादा पक्का मनुष्य तू! भगवान के पास 'मैं अनंत दोष का भाजन हूँ' ऐसा बोलता है और यहाँ बाहर दो ही भूलें हैं, ऐसा बोलता है!! हम कहें, 'भगवान के पास बोलता था न?' तब कहे, 'वह तो वहाँ बोलना होता है, यहाँ नहीं।' इससे तो तरबूज अच्छे। उनमें इतने दोष नहीं

होते। अरे! भगवान के पास अलग बोलता है और यहाँ अलग बोलता है? अभी तो कितने चक्कर काटेगा तू?

ज़रा क्रोध है और थोड़ा लोभ है, दो भूलों का मालिक! भगवान यहाँ विचरते थे न, तब उनके पास पाँच लाख भूलें थीं और यह दो भूलों का मालिक! भगवान देहधारी थे न, तब तक दो-पाँच लाख भूलें पड़ी हुई थीं और यह भूल बिना का(!)

यदि खुद के दोष दिखें नहीं, तो कभी भी तरने की बात करनी नहीं, ऐसी आशा भी नहीं रखनी चाहिए। मनुष्य मात्र अनंत भूल का भाजन है और यदि उसे अपनी भूल नहीं दिखती तो इतना ही है कि उसे भयंकर आवरण बरतता है। यह तो भूल दिखती ही नहीं है।

अब भूलें दिखती हैं थोड़ी बहुत? भूलें दिखती हैं या नहीं दिखतीं?

प्रश्नकर्ता : अब दिखती हैं।

दादाश्री : भूल का स्वभाव कैसा है कि दिखें, वे चली जाती हैं और फिर दूसरे दिन फिर उतनी ही आती हैं। निरा भूलों का ही भंडार है। यह तो भंडार ही भूलों का है! फिर डाँट देता है और डाँटने के बाद *निकाल* करना भी नहीं आता। अरे! डाँट लेता है? अब डाँटने के बाद उसका *निकाल* तो कर! जैसे थाली हमने बिगाड़ी हो तो धोना नहीं आता फिर? लेकिन यह तो डाँट दिया, फिर उसका *निकाल* भी करना नहीं आता। फिर मुँह चढ़ाकर घूमता रहता है! अरे घनचक्कर! मुँह किसलिए चढ़ाता है फिर?

निरा भूलों का भंडार, इसलिए जीव हो जाता है न फिर? नहीं तो खुद शिव है। जीव-शिव का भेद क्यों लगता है? यह तो भूल को लेकर है। यह भूल मिटे तो हल आए।

दीठा नहीं निजदोष तो...

पहला वाक्य कहता है कि 'मैं तो दोष अनंत का भाजन हूँ

करुणाल।' और अंतिम एक पंक्ति कहती है कि, 'दीठा नहीं निजदोष तो तरिये कौन उपाय!'

'अनंत दोष का भाजन हूँ' ऐसा मुझे भी समझ में आता है, पर दिखता एक भी नहीं है। इसलिए तरने का उपाय है कोई? क्यों दिखता नहीं है? खुद के दोष कब दिखते हैं? कि जगत् को जैसे-जैसे निर्दोष देखता जाता है, वैसे-वैसे खुद के दोष दिखते जाते हैं। जगत् के दोष निकालता है, तब तक खुद का एक अक्षर भी दोष मिलता नहीं है।

जगत् के दोष निकालता है कोई? दूसरों के दोष निकालने में होशियार होते हैं बहुत? एक्सपर्ट होते हैं, नहीं?

नहीं देखना दोष किसीके

प्रश्नकर्ता : मुझे सामनेवाले मनुष्य के गुण के बजाय दोष अधिक दिखते हैं, उसका क्या कारण है?

दादाश्री : सारे जगत् के लोगों को अभी ऐसा हो गया है। दृष्टि ही बिगड़ गई है। उनके गुण देखते नहीं, दोष खोज निकालते हैं तुरन्त! और दोष मिल भी जाते हैं, और खुद के दोष मिलते नहीं न!

प्रश्नकर्ता : सामनेवाले के दोष दिखते हैं, वे दोष खुद में होते हैं?

दादाश्री : ऐसा कोई नियम नहीं है, फिर भी ऐसे दोष होते हैं। यह बुद्धि क्या करती है? खुद के दोष ढँकती रहती है और दूसरों के देखती है। यह तो उलटे मनुष्य का काम है। जिसकी भूलें मिट गई हों, वह दूसरों की भूलें नहीं देखता है। वह कुटेव ही नहीं होती। सहज में निर्दोष ही देखता है। ज्ञान ऐसा हो कि ज़रा सी भी भूल नहीं देखे।

प्रश्नकर्ता : दूसरों की भूल ही मनुष्य खोजता है न?

दादाश्री : भूल किसीकी देखनी नहीं चाहिए। किसीकी भूल देखोगे, वह भयंकर गुनाह है। तू क्या न्यायाधीश है? तुझे क्या समझ में आता है कि तू भूल देखता है। बड़े भूल देखनेवाले आए? भूल देखता है, तो फिर

तू बिना भान का है। बेभान है। भूल होती होगी? दूसरों की भूल देखी जाती होगी? भूल देखना, वह गुनाह है, भयंकर गुनाह है। भूल तो अपनी ही दिखती नहीं। दूसरों की किसलिए खोजते हो? भूल तुम्हारी खुद की देखनी है, दूसरे किसीकी देखनी नहीं है।

और ऐसे यदि भूलें देखने में आएँ तो, यह उसकी भूल देखे, वह उसकी भूल देखे, फिर क्या हो? किसीकी भूल ही नहीं देखनी चाहिए। है भी नहीं भूल। जो भूल निकालता है, वह बिलकुल नालायक होता है। सामनेवाले की थोड़ी भी भूल होती है, ऐसा मैंने ज़रा भी देखा तो वह मुझमें नालायकी होती है। उसके पीछे खराब आशय होते हैं। हाँ, भूल कहाँ से लाए? अपनी-अपनी प्रकृति के अनुसार कार्य करते हैं। उसमें भूल कहाँ से आई? यह न्यायाधीश का डिपार्टमेन्ट है? सब-सबकी प्रकृति के अनुसार काम करते हैं। मैं भी मेरी प्रकृति के अनुसार काम करता रहता हूँ, प्रकृति तो होती ही है न!

प्रश्नकर्ता : यही भूल जाते हैं कि यह सामनेवाला मनुष्य कर्त्ता नहीं है।

दादाश्री : हाँ, ऐसी उसकी जागृति रहे तो कोई हर्ज नहीं। सामनेवाले की भूल देखी, वहाँ से ही नया संसार खड़ा हुआ। इसलिए जब तक वह भूल मिटे नहीं, तब तक उसका निबेड़ा आता नहीं है। मनुष्य उलझा हुआ रहता है।

हमें तो क्षणभर के लिए भी किसीकी भूल दिखी नहीं है और दिखाई दे, तो हम उसके मुँह पर कह देते हैं। ढँकते नहीं कि भाई, ऐसी भूल हमें दिखती है। तुझे ज़रूरत हो, तो स्वीकार लेना, नहीं तो एक ओर रख देना।

प्रश्नकर्ता : वह तो उसके कल्याण के लिए ऐसा कहते हैं।

दादाश्री : वैसा कहते हैं सावधान करने के लिए तो हल निकले न! और फिर वह न माने तब भी हमें बिलकुल हर्ज नहीं है। हम कहें, यह करना, और नहीं माने तो कुछ नहीं।

प्रश्नकर्ता : आपको कुछ भी नहीं?

दादाश्री : मैं जानता हूँ कि वह किस आधार पर बोलता है! उदयकर्म के आधार पर बोलता है। कोई थोड़े ही मेरी आज्ञा रोकने की इच्छा है? इच्छा ही नहीं होती न? इसलिए उसे गुनाह नहीं लगता है। यह उदयकर्म के आधार पर बोलता है तो उसे मोड़ना पड़ता है हमें। यदि प्रकृति बिफर जाए, वहाँ हमें परहेज कर देना पड़ता है। खुद का अहित तो संपूर्ण करता है, अन्य सभी का भी कर डालता है। बाकी, सरल प्रकृति भूलें करती है, करती ही रहती है। वह तो दुनिया में सब प्रकृतियाँ ही हैं!!

तुझे तेरी भूलें पूरी-पूरी दिखती हैं?

प्रश्नकर्ता : हाँ, भूलें तो दिखती हैं।

दादाश्री : एक भी भूल दिखती नहीं तुझे और जितने बाल हैं, उनसे भी ज्यादा भूलें हैं। वह कैसे समझ में आए तुझे?!

प्रश्नकर्ता : वह भूल खानी या नहीं खानी, वह कर्माधीन है न?

दादाश्री : ओहोहो! यह अच्छी खोज करी। देखो न, बच्चे ही हैं न? सभी इतने-इतने बच्चे! बेभानपना!! देखो न, अभी भी भूल खानी या नहीं खानी, वह कर्माधीन है या क्या, अभी तो ऐसा बोलता है!! कुँए में तो गिरता नहीं। वहाँ सँभलकर चलता है। समय आए तो दौड़ता है, वहाँ क्यों कर्माधीनपन बोलता नहीं है? ट्रेन आए उस घड़ी पटरियाँ लाँघ जाता है या नहीं? वहाँ क्यों कर्माधीन कहता नहीं है?

खुद के दोष खुद को किस तरह दिखें? दिखेंगे ही नहीं न! क्योंकि जहाँ मोह का साम्राज्य हो, मोह से भरे हुए! मैं फलाँ हूँ, मैं ऐसा हूँ, उसका मोह वापिस! खुद के पद का मोह होता है न? नहीं होता?

प्रश्नकर्ता : बहुत होता है।

दादाश्री : यही है। दूसरा कुछ नहीं है। निंदा करने जैसा नहीं है, पर सब जगह ऐसा ही है।

तब आया महावीर के मार्ग में

दोष जब से दिखने लगें न, तब से कृपालुदेव का धर्म समझा कहलाता है। खुद के दोष आज जो दिखते हैं, वे कल नहीं दिखें, कल नयी तरह के दिखें, परसों उनसे भी नयी तरह के दिखें, तब हम समझें कि इसे कृपालुदेव का धर्म समझ में आया हैं और कृपालुदेव के धर्म का यह पालन करता है। खुद के दोष दिखे नहीं, तब तक कुछ भी समझा नहीं है।

क्रमिकमार्ग में तो कभी भी खुद के दोष दिखते ही नहीं। 'दोष तो अनेक हैं, पर हमें दिखते नहीं हैं।' ऐसा यदि कहे तो मैं मानूँ कि तू मोक्ष का अधिकारी है, पर जो कहे कि मुझमें दो-चार ही दिखते हैं, वह अनंत दोषों से भरा हुआ है और कहता है कि दो-चार ही हैं। मतलब, तुझे दो-चार दोष ही दिखते हैं, इसलिए इतने ही तुझमें दोष हैं, ऐसा तू मानता है?

महावीर भगवान के मार्ग को प्राप्त किया कब कहलाता है? जब रोज़ खुद के सौ-सौ दोष दिखें, रोज़ सौ-सौ प्रतिक्रमण होते हों, उसके बाद महावीर भगवान के मार्ग में आया कहलाता है। 'स्वरूप का ज्ञान' तो अभी उसके बाद कितना ही दूर है। पर यह तो चार पुस्तकें पढ़कर 'स्वरूप' पाने का कैफ लिए घूमता है। यह तो 'स्वरूप' का एक छींटा भी पाया नहीं कहलाता है। जहाँ 'ज्ञान' रुका हुआ है, वहाँ कैफ ही बढ़ता है। कैफ के कारण ज्ञानावरण और दर्शनावरण खिसकना रुक गया है। मोक्ष में जाने के लिए दूसरी एक भी वस्तु बाधक नहीं है। सबसे बड़े भयस्थान, वे स्वच्छंद और कैफ हैं।

नहीं देखे खुद के ही दोष

खुद के दोष दिखते हैं आपको?

प्रश्नकर्ता : वही खुद के दोष खोजने की ही ज़रूरत है हमें।

दादाश्री : हाँ, तो किस कारण से दिखते नहीं हैं वे?

प्रश्नकर्ता : हम संसार में उलझे पड़े हैं, यानी रोजमर्रा के कार्यों में रत हो गए हैं, इसलिए नहीं दिखते हैं।

दादाश्री : नहीं, देखने में कोई भूल हो रही है। खुद जज है, आरोपी भी खुद है। गुनाह करनेवाला भी खुद है, पर साथ में वकील खड़ा किया है। खुद ही वकील बनता है फिर।

प्रश्नकर्ता : यानी खुद का गलत ढंग से बचाव ही करता है?

दादाश्री : हाँ, सारा बचाव ही किया है। हाँ, बस दूसरा कुछ किया ही नहीं। गलत ढंग से सारे बचाव किए हैं।

जगत् खुली आँखों सो रहा है, इसलिए फिर दोष कैसे मालूम होंगे? तेरे दोष तुझे दिखते नहीं हैं। किस तरह मनुष्य दोष देख सकता है खुद के?

प्रश्नकर्ता : स्थूल थोड़े दिखते हैं, सूक्ष्म नहीं दिखते।

दादाश्री : दोष क्यों नहीं दिखते? तब कहते हैं 'भीतर आत्मा नहीं है?' तब कहते हैं, 'आत्मा है, यानी कि जज है, जज।' अहंकार आरोपी है। अहंकार और जज (आत्मा) दो ही होते न, तो सारे दोष दिखते, काफी कुछ दोष दिखते, पर यह तो भीतर वकील (बुद्धि) रखा है इसलिए वकील कहता है कि, 'ये सब भी तो ऐसा ही करते हैं न!' सारा दोष उड़ गया। आप जानते हो, वकील रखते हैं ऐसा? सभी वकील रखते हैं। खुद जज, खुद आरोपी और खुद ही वकील, बोलो, कल्याण होगा क्या?

प्रश्नकर्ता : नहीं होगा।

दादाश्री : ऐसा-वैसा करके वकील फिर सुलटा देता है। होता है या नहीं होता ऐसा?

प्रश्नकर्ता : होता हैं।

दादाश्री : सारा दिन यही का यही तूफ़ान और उसके दुःख हैं ये सारे। बोलो, अब कितनी खुद की भूलें बाहर निकलेंगी? खुद की कितनी

भूलों का स्टेटमेन्ट (विवरण) दे देगा?

प्रश्नकर्ता : फिर वह स्टेटमेन्ट क्या देगा?

दादाश्री : ये सिर के बाल हैं न, उतनी भूलें हैं। पर खुद जज और खुद वकील और खुद आरोपी, किस तरह भूलें मिलें? निष्पक्षपाती वातावरण उत्पन्न नहीं होता है न! निष्पक्षपाती वातावरण उत्पन्न हो, तो मोक्ष सरल हैं। मोक्ष कोई दूर नहीं है। यह तो पक्षपात बहुत है।

यदि दूसरों की भूलें निकालनी हों तो निकाल देगा, उनके लिए न्यायाधीश है वह, थोड़ा-बहुत, अल्पांश में, पर खुद की भूलें निकालने के लिए ज़रा-सा भी न्यायाधीश नहीं है। यानी खुद जज, खुद ही वकील और आरोपी खुद, फिर कैसा जजमेन्ट आएगा? खुद के लाभवाला ही होगा।

प्रश्नकर्ता : सहूलियातवाला, बस! खुद को जैसी सहूलियत होती है न, वैसा लाकर रख देता है!

दादाश्री : इसलिए फिर संसार छूटता नहीं न कभी भी! ऐसे आप सहूलियतवाला करते रहो और निर्दोष होना है, होगा नहीं न! वकील नहीं हो, तब ही खुद की भूलें पता चलती हैं। पर आज के लोग वकील रखे बगैर रहते नहीं न! वकील रखते हैं या नहीं रखते लोग?

यह ज्ञान प्राप्त होने के बाद तुरन्त ही पता चलता है कि यह भूल हुई। क्योंकि बीच में वकील नहीं है अब। वकील अपने घर गए, रिटायर हो गए। गुनहगार अभी रहे हैं पर वकील नहीं रहे।

ये भूलें जाएँ न तो खुद का भगवान पद प्राप्त हो ऐसा है। इन भूलों को लेकर ही जीवपद है और भूलें जाएँ तो शिवपद प्राप्त होता है।

इस जगत् के लोगों ने खुद के दोष देखे नहीं हैं, इसलिए ही वे दोष रहते हैं, मुकाम करते हैं आराम से! यों तो कहेगा कि मुझे दोष निकालने हैं, पर तब दोष हैं तो एक ओर नींव डालकर अंदर रहने के लिए मकान बनवा रहे होते हैं। नींव सीमेन्ट डालकर भर रहे होते हैं। वे

दोष जानते हैं कि यह मुआ कुछ भी करनेवाला नहीं है। मुँह से बोलता है उतना ही, किस तरह दोष निकालेगा?

जो एक दोष निकाल सके, वह भगवान हो जाए!!! एक ही दोष! एक दोष का निवारण करे वह भगवान हो जाए। यह तो दोष का निवारण होता है, पर दूसरा दोष खड़ा करके। दूसरा दोष खड़ा करके पहलेवाले का निवारण करता है। बाकी, खुद की एक भूल मिटाए, तो भगवान बनता है।

प्रश्नकर्ता : दूसरा दोष खड़ा न करे, वह किस तरह होता है?

दादाश्री : ये तो सब भूलें ही हैं, पर एक भूल मिटे, वह कब? समकित होने के बाद मिटती है, नहीं तो मिटती नहीं। तब तक एक भूल मिटती नहीं। तब तक तो पहले खोदता है और फिर भरता है। खोदता है और भरता है, खोदता है और भरता है। कोई क्रिया उसकी काम आती नहीं। सारी क्रियाएँ निष्फल जाती हैं।

वह कहलाए जैन

आपमें दो-चार दोष होंगे या नहीं होंगे?

प्रश्नकर्ता : ज़्यादा।

दादाश्री : दस-पंद्रह दोष होंगे?

प्रश्नकर्ता : वे गिनें तो गिने नहीं जाएँ।

दादाश्री : हाँ। उसका नाम जैन कहलाता है। जैन किसका नाम कहलाए कि खुद में अहंकार है, दोष हैं, ऐसा खुद को विश्वास है। भले ही दोष दिखें नहीं, पर वे हैं ऐसी जिसे श्रद्धा है, उसे जैन कहते हैं। खुद अनंत दोष का भाजन है। पर अब कब उन्हें खाली कर पाओगे?

प्रश्नकर्ता : वह तो आपकी कृपा होगी तब।

दादाश्री : बहुत बड़ी बात करी!

दोष, उतने ही चाहिए प्रतिक्रमण

'अनंत दोष का भाजन है, तब उतने ही प्रतिक्रमण करने पड़ेंगे। जितने दोष भरकर लाए हैं, वे आपको दिखेंगे। ज्ञानी पुरुष के ज्ञान देने के बाद दोष दिखने लगते हैं, नहीं तो खुद के दोष दिखते नहीं हैं, उसका नाम ही अज्ञानता। खुद का दोष एक भी दिखता नहीं है और किसीके देखने हों तो बहुत सारे देख ले, उसका नाम मिथ्यात्व।'

और ज्ञानी पुरुष के ज्ञान देने के बाद, दिव्यचक्षु देने के बाद खुद के सर्व दोष दिखते हैं। ज़रा-सा मन बदलाव हुआ हो, तो भी पता चल जाता है कि यह दोष हुआ। यह तो वीतराग मार्ग, एकअवतारी मार्ग है। यह तो बहुत जिम्मेदारीवाला मार्ग है। एक अवतार में सब चोखा ही हो जाना चाहिए। यहाँ पहले चोखा हो जाना चाहिए।

मतलब निरे दोषों का भंडार हो। यहाँ ज्ञानविधि में आओगे तो मैं सारे पाप धो दूँगा। वह धोने का मेरे हिस्से में आया है। फिर खुद के दोष दिखेंगे। और खुद के दोष दिखने लगें, तब से समझना कि अब मोक्ष में जाने की तैयारी हुई। बाकी किसीको भी खुद के दोष दिखे नहीं हैं।

आत्मा खुद ही थर्मामीटर जैसा

जो खुद करता है न, उसमें खुद को, भूल है ऐसा कभी पता नहीं चलता। खुद जो करता हो, सहज स्वभाव से जो कार्य क्रिया करता हो न, उसमें खुद की भूल है, ऐसा कभी भी दिखता नहीं, उल्टे कोई भूल दिखाए, तब भी उसे उल्टा दिखता है। वह जप करता हो या तप करता हो, त्याग करता हो, उसमें उसे खुद की भूल नहीं दिखती। भूल तो, खुद आत्मस्वरूप हो जाए, ज्ञानी पुरुष का दिया हुआ आत्मा प्राप्त हो जाए तो आत्मा अकेला ही थरमामीटर समान है कि जो भूल दिखलाता है, बाकी कोई भूल नहीं दिखलाता। खुद की भूल नहीं दिखाई देती किसीको। भूल दिखे, तब तो काम हो ही गया न!

और भूल मिटे, तब तो परमात्मा हो जाता है। परमात्मा तो है ही,

पर परमात्मा की सत्ता कब प्राप्त होती है? भूल मिटे, तब! वह भूल मिटती नहीं है और सत्ता प्राप्त होती नहीं है और लोगों के ससुर और सास बनकर खुश होते हैं। भूल मिटे तो सत्ता प्राप्त होती है, परमात्मा की सत्ता प्राप्त होती है। और यह ज्ञान प्राप्त होने के बाद 'खुद परमात्मा है' ऐसा लक्ष्य बैठा है, इसलिए अब धीरे-धीरे वह श्रेणी चढ़ता जाता है और वो सत्ता प्राप्त होती रहती है।

बाक़ी भूल दिखलाए वह सच्चा। कितनी सारी भूलें? एक भूल हमारी जो मिटाए, हमारी सबसे बड़ी भूल मिटाए, वह भगवान कहलाता है।

यह तो पहले का अभ्यास होता है कि मैं सबमें भगवान देखता हूँ, पर झगड़ते समय तो भगवान सब भूल जाता है और झगड़ा कर बैठता है कि दूध क्यों ढोला! घर का बच्चा खुद दूध ढोलता है क्या?

यह तो आदि-अनादि से चली आई है, बाप को बेटे को डाँटना चाहिए ऐसी रीति है। यह तो कोई मानवता कहलाती है? मानवता तो कैसी सुगंध देती है? पच्चीस-पच्चीस मील के एरिया में सुगंध आती रहती है। खुद की सारी भूलें दिखें तो जानना कि सुधार होगा। एक भूल लोगों को अपनी दिखती नहीं है।

वह है भूलों का स्वरूप

अहंकार विलय हो जाए तो भूल खतम हो जाए। अहंकार यों ही विलय नहीं होगा। वह चटनी की तरह पीसने जैसा नहीं है। अहंकार तो भूलें दिखें, उतना विलय होता है। अहंकार यानी भूल का स्वरूप। इगोइज़म, वह स्ट्रक्चर ही भूल का है। कहलाता क्या है कि स्वरूप का भान नहीं है, मतलब भान भूले हुए हैं। भान भूले हुओं में सारा इगोइज़म भान भूला हुआ है। तब भीतर क्या सामान है उसके पास, कि भीतर छोटी-मोटी भूलें हैं! वे भूलें मिटेंगी, तो काम होगा। निष्पक्षपाती हो जाए, तब खुद की भूलें दिखेंगी।

वाणी तो भीतर सारे शास्त्रों की वाणी पड़ी हुई है। भूल मिटेगी,

उसके बाद वाणी निकलेगी और वह वाणी फिर निष्पक्षपाती होनी चाहिए। मुसलमान बैठा हो, उसे भी सुनने का मन हो। जैन बैठा हो, उसे भी सुनने का मन हो। सभी स्टेन्डर्ड को सुनने का मन हो, वह निष्पक्षपाती वाणी कहलाती है।

खुद के दोष देखने में निष्पक्षपाती ऐसा कौन होता है? वे तो कृपालुदेव हों और उनके दो-तीन फॉलोअर्स (अनुयायी) हों न, वे होते हैं। बाक़ी खुद के दोष देखने में पक्षपात का सवाल ही कहाँ है? खुद के दोष देखने का पता ही नहीं चलता।

ज्ञानी की तत्त्वदृष्टि

हमें इस जगत् में कोई दोषित दिखता ही नहीं है। जेबकतरा हो या चारित्रहीन हो, उन्हें भी हम निर्दोष ही देखते हैं। हम 'सत् वस्तु' को ही देखते हैं। वह तात्विक दृष्टि है। पैकिंग को हम देखते नहीं हैं। वेरायटीज़ ऑफ पैकिंग हैं, उनमें हम तत्त्वदृष्टि से देखते हैं। 'हमने' संपूर्ण निर्दोष दृष्टि की और सारे जगत् को निर्दोष देखा। इसलिए ही 'ज्ञानी पुरुष' आपकी 'भूल' मिटा सकते हैं! औरों की बिसात नहीं।

तर गया वही तारे

ये सब भूलें तो हैं न? उसकी खोज भी नहीं की है न?

प्रश्नकर्ता : हमारी कोई भूल होती है, इतना समझ में आता है, पर उसमें से निकल नहीं पाते। और निकलने की कोशिश करते हैं वैसे-वैसे गहरे, और गहरे ही उतरते जाते हैं।

दादाश्री : कोशिश ही मत करना। वह कोशिश करना, यानी यहाँ गड्ढा खोदना है और वहाँ गड्ढा भरना है। उसके बजाय, वहाँ गड्ढा खोदकर यहाँ भरें, उस काम के कौन पैसे दे?

प्रश्नकर्ता : नहीं देगा।

दादाश्री : और ऊपर से दंड मिलता है कि यहाँ जमीन क्यों खोद

डाली? ऊपर से केस बनता है कि आपने यहाँ क्यों खोद डाला? इसलिए फिर से भर दो और फिर इसके ऊपर पानी डालकर और समतल करवा दो।

मतलब ये सब लोग जो करते हैं न, वे उलटी जगह पर खोदते हैं। उसके बजाय नहीं खोदते हों और किसीको कहते हों कि भाई, मेरा कुछ हल निकाल दो तो कोई हल निकाल दे। जो छूट गया है, वह छुड़वा देगा। वह बँधा हुआ मनुष्य, वही डुबकी खा रहा हो, 'बचाओ' कहता हो, 'तो मुए, तू बचाओ-बचाओ कहता है, तू क्या मुझे बचानेवाला है फिर?'

प्रश्नकर्ता : इतना समय जिसकी शरण में गए हल निकालने, वहाँ वापिस डूब गए, जिस डॉक्टर की दवाई ली उसने दर्द बढ़ाया, कम नहीं किया।

दादाश्री : वे डॉक्टर ठीक से पढ़े हुए नहीं थे। वे डुबकी खा रहे थे और जो डॉक्टर ऐसा कहे, 'नहीं, हम तर गए हैं, तू आ' तो हम समझें कि वे खुद कह रहे हैं न!

बाक़ी, कोई कहता नहीं कि तर गए हैं। नहीं तो समझता है कि किसी दिन कोई बखेड़ा होगा और लोग जान जाएँगे कि ये डुबकियाँ खाते समय चिल्ला रहे थे। यानी नाप लेते हैं न लोग? क्यों तर गए थे और अब डुबकी खाते समय चिल्ला रहे हो? कहेंगे कि नहीं कहेंगे? यानी संयोग अच्छे मिले नहीं थे। इस बार संयोग अच्छा मिला है, काम हो जाएगा।

मतलब यह सब किस तरह इसमें प्राप्ति होगी? ओहोहो! सिर के बाल तो गिने जा सकते हैं, पर ये इनकी भूलें नहीं गिनी जा सकतीं।

यदि रोज़ पच्चीस जितनी भूलें समझ में आएँ, तब तो गज़ब शक्ति उत्पन्न होगी। संसार बाधक नहीं है, खाना-पीना बाधक नहीं है। नहीं तप ने बाँधा, या नहीं त्याग ने बाँधा है। खुद की भूलों ने ही लोगों को बाँधा

है। अंदर तो अपार भूलें हैं। पर मात्र बड़ी-बड़ी पच्चीसेक जितनी भूलें मिटाए न तो छब्बीसवीं अपने आप जाने लगेगी। कुछ लोग तो भूल को जानते हैं, फिर भी खुद के अहंकार को लेकर उसे भूल नहीं कहते। यह कैसा है? एक ही भूल अनंत जन्म बिगाड़ डालती है, यह तो पुसाए ही नहीं। क्योंकि *नियाणां* (अपना सारा पुण्य लगाकर किसी एक वस्तु की कामना करना) मोक्ष का किया था, वह भी नियाणां पूरा-पूरा नहीं किया था। इसलिए तो ऐसा हुआ न! दादा के पास आना पड़ा न?

तब भूल मिटाई कहलाती है

एक-एक जन्म में एक भूल मिटाई होती तो भी मोक्ष स्वरूप हो जाते। पर यह तो एक भूल मिटाने जाते नहीं, पाँच भूले बढ़ाकर आते हैं। यह बाहर सब सुंदर और भीतर सब क्लेश का पार नहीं है! इसे भूल मिटाई कैसे कहें? आपका कोई ऊपरी ही नहीं है। पर भूल बतानेवाला चाहिए। भूलों को मिटाओ, पर खुद की भूल खुद को किस तरह मिले? और वह एक या दो ही हैं कोई? अनंत भूलें हैं! काया की अनंत भूलें तो बहुत बड़ी दिखती हैं। किसीको भोजन के लिए बुलाने गए हों, पर ऐसा कठोर बोलते हैं कि बत्तीस भोग का न्योता हो, तो भी अच्छा न लगे। इसके बजाय तो नहीं बुलाएँ तो अच्छा, ऐसा अंदर होता है। अरे, बोलें तो कर्कश वाणी निकलती है और मन के तो अपार दूषण होते हैं!

भूल निकाले, अंदर कौन?

हमारी भूलें तो कौन मिटा सकता है? 'ज्ञानी पुरुष', कि जो खुद की सारी भूलें मिटाकर बैठे हैं। जो शरीर होने पर भी अशरीर भाव से, वीतराग भाव में रहते हैं। अशरीर भाव यानी ज्ञानबीज। सारी भूलें मिटाने के बाद, खुद के अज्ञान बीज का नाश होता है और ज्ञानबीज पूर्णरूप से उगता है, वह अशरीर भाव। जिसे किंचित् मात्र-ज़रा भी देह पर ममता है, तो वह अशरीर भाव नहीं कहलाता है, और देह पर से ममता जाए किस तरह? जब तक अज्ञान है, तब तक ममता जाती नहीं।

इस जगत् में सबकुछ पता चलता है, पर खुद की भूल पता नहीं

चलती। इसलिए ही खुद की भूल दिखाने के लिए ज्ञानी की ज़रूरत है। ज्ञानी पुरुष ही ऐसे सर्व सत्ताधारी हैं कि जो खुद को खुद की भूल दिखाकर उसका भान करवा देते हैं और तब भूल मिटती है। वह कब होता है? जब ज्ञानी पुरुष से भेंट हो और खुद को निष्पक्षपाती बनाएँ। अपने खुद के लिए भी निष्पक्षता उत्पन्न हो, तब ही काम होता है। स्वरूप का भान जब तक ज्ञानी पुरुष नहीं करवा देते, तब तक निष्पक्षता उत्पन्न नहीं होती। 'ज्ञान' किसीकी भी भूल नहीं निकालता। बुद्धि सबकी भूल निकालती है, सगे भाई की भूल निकालती है।

अंधेरे की भूलें

यह तो 'ज्ञानी पुरुष' हैं इसलिए खुद को दोष का पता चलता है। नहीं तो उसे खुद को पता ही क्या चले? चला स्टीमर कोचीन की तरफ। कुतुबनुमा बिगड़ गया है, इसलिए कोचीन चला! दक्षिण को ही वह कुतुबनुमा उत्तर दिखलाए! नहीं तो कुतुबनुमा हमेशा उत्तर में ही ले जाता है, उसका स्वभाव है। कुतुबनुमा बिगड़ जाए, फिर 'क्या करे?' और खुद को ध्रुवतारा देखना आता नहीं है।

सबसे बड़ी भूल, वह स्वच्छंद है। स्वच्छंद से तो सारा लश्कर खड़ा है। स्वच्छंद, वही बड़ी भूल है। यानी ज़रा-सा ऐसा कहा कि, 'उसमें क्या हुआ?' तो हो गया। वह फिर अनंत जन्म बिगाड़ देता है।

'मैं जानता हूँ' वह अंधेरे की भूल तो बहुत भारी है। और ऊपर से 'अब कोई हर्ज नहीं है' वह तो मार ही डालता है। ऐसा तो 'ज्ञानी पुरुष' के अलावा कोई बोल ही नहीं सकता कि, 'एक भी भूल नहीं रही।' हर एक भूल को देखकर मिटानी है। सब कुछ अपने दोष से ही बँधा हुआ है। केवल खुद के दोष देखते रहने से छूट सकें ऐसा है। 'हम' हमारे दोष देखते रहे, इसलिए हम छूट गए। निजदोष समझ में आएँ, तो मुक्त होता जाता है। इसलिए 'ज्ञानी पुरुष' आपकी भूलें मिटा सकते हैं, औरों के बस की बात नहीं है।

हम तुरन्त ही भूल एक्सेप्ट करके, निकाल कर डालते हैं। यह कैसा

है कि पहले भूलें की थीं, उनका निकाल नहीं किया इसलिए वही की वही भूलें फिर से आती हैं। भूलों का निकाल करना नहीं आया इसलिए एक भूल निकालने के बदले दूसरी पाँच भूलें कीं।

नहीं उसका ऊपरी कोई

प्रश्नकर्ता : पर दादा, प्रत्यक्ष पुरुष के अलावा यह भूल समझ में नहीं आती?

दादाश्री : किस तरह समझ में आए?! उनकी ही भूल नहीं समझ में आती, फिर वह दूसरों की भूल किस तरह निकाले? जिसे ऊपरी की ज़रूरत नहीं है, जिसे कोई भूल दिखानेवाले की ज़रूरत नहीं है, वह अकेला ही भूल निकाल सकता है। बाक़ी दूसरा कोई भूल निकाल नहीं सकता है। जो खुद की तमाम प्रकार की भूलें सभी जानता हो, उसे ऊपरी की ज़रूरत नहीं है। ऊपरी की कब तक ज़रूरत होती है कि जब तक आप भूलें नहीं देख सकते और कुछ प्रकार की भूलें आपमें रहती हों तो वे आपकी ऊपरी होती ही हैं। और ऊपरीपन कब छूटता है? आपकी एक भी भूल आपको जो दिखती नहीं हो, वे सभी दिखती रहें। यह तो नियमपूर्वक की बात है न! आप सबको कम दिखती हैं, इसलिए तो मैं ऊपरी हूँ अभी। आपको दिखने लगें, तो फिर मैं किसलिए ऊपरी होऊँ? इस झमेले में मैं कहाँ पड़ूँ? मतलब कानून ही दुनिया का यह है। जिसे खुद की पूर्ण भूलें दिखेंगी, फिर उसका कोई ऊपरी नहीं रहा। इसलिए हम कहते हैं न कि हमारा कोई बाप भी ऊपरी नहीं है। उलटे भगवान हमारे वश में हो गए हैं। 'हमें' तो हर एक भूल, खुद की किंचित् मात्र भूल, केवलज्ञान में दिखनेवाली भूलें भी हमें दिखती हैं। बोलो, अब केवलज्ञान बरतता नहीं है, फिर भी केवलज्ञान में दिखाई देनेवाली भूलें दिखती हैं!

दृष्टि निजदोषों के प्रति...

यह ज्ञान लेने के बाद बाहर का तो आप देखोगे वह अलग बात है, पर आपके ही अंदर का आप सब देखा करोगे, उस समय आप

केवलज्ञान सत्ता में होओगे। पर अंश केवलज्ञान होता है, सर्वांश नहीं। अंदर खराब विचार आएँ, उन्हें देखना, अच्छे विचार आएँ उन्हें देखना। अच्छे पर राग नहीं और खराब पर द्वेष नहीं। अच्छा-बुरा देखने की हमें ज़रूरत नहीं है। क्योंकि सत्ता ही मूल अपने काबू में नहीं है। इसलिए ज्ञानी क्या देखते हैं? सारे जगत् को निर्दोष देखते हैं। क्योंकि यह सब 'डिस्चार्ज' में है, उसमें उस बेचारे का क्या दोष? आपको कोई गाली दे, वह 'डिस्चार्ज'। 'बॉस' आपको उलझन में डाले वह भी 'डिस्चार्ज' ही है। बॉस तो निमित्त है। किसीका जगत् में दोष नहीं है। जो दोष दिखते हैं, वह खुद की ही भूल है और वही 'ब्लंडर्स' हैं और उससे ही यह जगत् खड़ा है। दोष देखने से, उल्टा देखने से ही बैर बंधता है।

प्रमत्त भाव से दिखें परदोष...

इस जगत् में कोई गुनहगार नहीं है। यदि गुनहगार दिखता है, वह हमारी खुद की कमी है। कोई गुनहगार दिखता है, वही आपका प्रमत्तभाव है। वास्तव में अप्रमत्तता होनी चाहिए, तब फिर कोई गुनहगार दिखेगा ही नहीं।

प्रश्नकर्ता : प्रमत्तभाव यानी क्या?

दादाश्री : वस्तु, वस्तु का स्वभाव चूके वह प्रमत्त कहलाता है। वस्तु अपने मूल धर्म में रहे वह अप्रमत्त भाव।

वीतरागों ने कहा मुक्ति हेतु

आप अपनी नासमझी के कारण इतना सारा उलझते हो। उन उलझनों के लिए आपको मुझसे पूछना चाहिए कि मुझे यहाँ उलझन है, तो इसमें क्या करना चाहिए? इसलिए पूछना। उसके लिए हम सत्संग रखते हैं।

एक कर्म कम हो जाए, तो उलझनें दिन पर दिन कम होती जाती हैं। एक दिन में एक ही कर्म यदि कम करे तो दूसरे दिन दो कम कर सकेगा। पर यह तो रोज़ उलझनें डालता ही रहता है और बढ़ाता ही रहता है! ये सभी लोग क्या अरंडी का तेल पीकर घूमते होंगे? उनके मुँह पर

मानो 'अरंडी का तेल नहीं पीया हो!' ऐसे बनकर घूमते हैं। सभी अरंडी का तेल मोल लाते होंगे कोई? महँगे भाव का अरंडी का तेल रोज़ कहाँ से लाएँ? भीतर परिणति बदली कि अरंडी का तेल पीया हो वैसा मुँह हो जाता है। दोष खुद का और भूल निकालता है दूसरों की। इससे भीतरी परिणति बदल जाती है। 'खुद का दोष ढूँढो' ऐसा 'वीतराग' कह गए हैं, दूसरा कुछ भी कहकर नहीं गए हैं। 'तू अपने दोष को पहचान और मुक्त हो जा। बस, इतना ही मुक्तिधाम देगा तुझे।' इतना ही कार्य करने को कहा है भगवान ने।

ज़रूरत है भूल बिना के ज्ञान और समझ की

एक आचार्य महाराज ने कहा, 'मेरा मोक्ष कब होगा?' तब भगवान ने कहा, 'आपका ज्ञान और आपकी समझ भूल बिना के होंगे तब।' यह भूल है, उसी भूल से अटके हैं। आपका ज्ञान और आपकी समझ भूल बिना की होगी तब आपका मोक्ष होगा। तब क्या गलत कहते हैं?

प्रश्नकर्ता : ठीक है।

दादाश्री : तब कोई कहे कि, 'साहब जप-तप करने चाहिए क्या?' वह तो तुझे जिस दिन पेट में अजीर्ण हुआ हो, तो उस दिन उपवास करना। जप-तप की हमारी शर्त नहीं है। तेरी समझ और ज्ञान भूल बिना का कर, किसी भी रास्ते। क्या गलत कहते हैं भगवान? भूल है तब तक तो कोई कबूल ही नहीं करे न! अभी तो कितनी सारी भूलें हैं?! मैं चंदूलाल हूँ, इस औरत का पति हूँ, ऐसा कहता है वापस और इस बच्चे का बाप हूँ, कहता है। कितनी सारी भूलें? यह तो परंपरा है भूलों की। मूल में ही भूल। मूल जो रकमें है, उनमें एक अविनाशी है और एक विनाशी है। और अविनाशी के साथ विनाशी को गुणा करने जाता है, तब तक तो वह रकम उड़ जाती है। वह विनाशी, पति नहीं तो बाप तो है, वह रखें तब तक तो वह उड़ जाती है यानी गुणा कभी होता नहीं, जवाब आता नहीं और दिन बदलता नहीं। शुक्रवार ही हमेशा रहता है। शुक्रवार जाता नहीं और शनिवार होता नहीं, एवरी डे फ्राइडे (सदा शुक्रवार)।

भगवान ने कोई ऐसा कहा है कि तप करना, जप करना, भूखों मरना, उपवास करना, त्याग करना, ऐसा कहा है? तेरा ज्ञान और तेरी समझ भूल बिना की कर, उस दिन तू खुद ही मोक्ष स्वरूप है। जीवित देहधारी का मोक्ष!!

भगवान की बात तो आसान ही है न पर हमने पता लगाया कभी कि भूल बिना का ज्ञान और भूल बिना की समझ किस तरह हो सकती है? हमने तो ऐसा ढूँढा, कि आज कौन-सा उपवास करना है या आज किसका त्याग करूँ? अरे! भगवान ने त्याग की शर्त कहाँ रखी है? यह तो उलटे रास्ते चल पड़े। आड़ी गलियों में घुस गए। भगवान ने क्या कहा था, 'ज्ञान और समझ भूल बिना के कर डाल तू।'

प्रश्नकर्ता : समझ भूल बिना की, यह बात फिर से समझाइए!

दादाश्री : हाँ, आपकी समझ भूल बिना की होगी, तब आपका मोक्ष होगा। समझ में ही भूल है आपकी, वह जब भूल बिना की होगी, मेरे साथ बैठ-बैठकर, तब निबटारा होगा। जब तक भूल है, तब तक निबटारा कैसे होगा? किसीकी भूलें होंगी!

फिर क्या कहते हैं, तू खुद मोक्ष स्वरूप है। तू खुद ही परमात्मा है। केवल भूल बिना का ज्ञान और भूल बिना की समझ का भान होना चाहिए।

ज्ञान कैसा होना चाहिए? भूल बिना का। और समझ कैसी होनी चाहिए? भूल बिना की। यदि ज्ञान अकेला होगा तो पपीता नहीं लगेंगे। है पेड़ पपीता का, पर एक भी पपीता नहीं लगता, ऐसा होता है क्या? आपने देखे नहीं होंगे पपीते?

प्रश्नकर्ता : देखे हैं।

दादाश्री : देखे हैं न? अरे मुए! पाल-पोसकर बड़ा किया तो ऐसा निकला? पानी पिलाकर, पाल-पोसकर बड़ा किया तो अंदर से ऐसा निकला? उसमें पपीता ही नहीं लगता।

इसलिए ज्ञान भूल बिना का होना चाहिए और भूल बिना की समझ। अब सिर्फ ज्ञान भूल बिना का हुआ तो भी कुछ होता नहीं। समझ भूल बिना की हो जाए तो चलेगा। समझ, वह हार्ट को पहुँचती है और ज्ञान, वह बुद्धि को पहुँचता है।

आज चलता है ज्ञान वह, लोगों का व्यावहारिक ज्ञान, वह बुद्धि को पहुँचता है और समझ हार्ट को पहुँचती है, हार्टवाला (हार्दिक) ठेठ तक पहुँचाता है, मोक्ष तक पहुँचाता है। उसे हमारे लोग सूझ कहते हैं। यह समझ जो है, उससे सूझ उत्पन्न होती है और सूझ से समझ उत्पन्न होती है, ठेठ तक पहुँचानेवाली सर्वोत्तम वस्तु यह है।

भूल से तो यह संसार भी ठीक से नहीं चलता है, तो भूल से तो मोक्ष होता होगा कभी? ज्ञान और समझ भूल बिना के होंगे, आप जानो कि ज्ञान तो ऐसा है और यह तो सब अज्ञान है, भूलवाला है, तबसे ज्ञान हुआ करता है।

यह तो इतनी उम्र में भी उसे ऐसे शर्म नहीं आती कि 'मैं इनका पति हूँ,' कहते हुए शर्म आती है? ऐसा कहता है। ये मेरे पति हैं, ऐसा पत्नी भी कहती है। इतनी उम्र में उन्हें शर्म भी नहीं आती। क्योंकि अस्सी साल के हो गए, उसे भी शर्म नहीं आती। क्योंकि जैसा जानते हैं वैसा बोलते हैंन। और लोग भी समझें, वैसा बोलते हैं न? नहीं तो कहाँ जाएँ? पर वह ज्ञान गलत नहीं है। यह जो जानते हैं, वह भी व्यवहार का ज्ञान है, सच्चा ज्ञान नहीं है।

इस सच्चे ज्ञान में तो आप शुद्धात्मा हो और वह भी शुद्धात्मा है। पर उस शुद्धात्मा का भान होना चाहिए न? अभी तो 'मैं चंदूलाल हूँ' यह भान है, 'मैं जैन हूँ' यह दूसरा भान है। उम्र चौहत्तर साल की है, वह भी भान है। सब भान है। बचपन में कहाँ-कहाँ खेलने गए थे, वह भी भान है। नौकरी कहाँ-कहाँ की थी, व्यापार कहाँ-कहाँ किया, वह भी सब भान हैं पर 'खुद कौन है?' वह भान नहीं है।

प्रश्नकर्ता : अब वह दो आप। वह भान करने की इच्छा जागृत

हुई है और उसके लिए आए हैं।

दादाश्री : उस ज्ञान के लिए भवोभव इच्छा होती है, पर सच्चा नियाणां नहीं किया। यदि नियाणां किया होता न तो सभी पुण्य उसीमें खर्च हो जाता है। नियाणां का स्वभाव क्या? तब कहे कि जितना आपका पुण्य हो, वह नियाणुं के लिए ही खर्च हो जाता है।

यह तो घर में पुण्य खर्च हो गया, देह में पुण्य खर्च हो गया, सभी में पुण्य खर्च हो गया, मोक्ष का नियाणां नहीं किया था न! मोक्ष का नियाणां किया होता तो सारा पुण्य उसमें खर्च हो जाता। देखो न हम मोक्ष का नियाणां करके आए थे, इसलिए सब सीधा चल रहा है न? कुछ अड़चनें होंगी तो मिलमालिकों को अड़चनें होंगी, प्रधानमंत्री को होंगी, पर हमें कोई अड़चन नहीं है।

भूल बिना का ज्ञान और समझ

प्रश्नकर्ता : भूल बिना का ज्ञान और भूल बिना की समझ होगी तो तू खुद ही मोक्ष स्वरूप है। कितनी अधिक ऊँची बात कह दी। आरोपित भाव, वही मूलतः भूल है, बंधन है!

दादाश्री : हाँ, और यह विज्ञान प्रकट नहीं हो, तब तक ऐसा स्पष्टीकरण ही नहीं मिलता न! शास्त्रों में ऐसा स्पष्टीकरण ही नहीं होता है न! केवल शुभ करो, कुछ शुभ करो कहेंगे, पर आरोपित भाव है ऐसा तो कोई समझाता करता नहीं है। क्योंकि ज्ञानी पुरुष के बिना ऐसा स्पष्टीकरण मिलता नहीं है।

लोगों को बुद्धि में समझ में आ गया होता है कि यह कुछ भूल है, बहुत बड़ी भूल हो रही है, ऐसा समझ में आता है, पर फिर भी ज्ञानी पुरुष नहीं मिलें तो करें क्या फिर? यों ही आम उबलता रहता है। लोग समझदार बहुत हैं, इसलिए बुद्धि में सभी समझकर सार निकालते हैं कि यह क्या है? पर फिर भी उबलते रहते हैं। और ज्ञानी पुरुष मिल जाएँ तो सारे स्पष्टीकरण दे देते हैं। हर एक शब्द का स्पष्टीकरण नहीं हो तो

वह ज्ञानी पुरुष नहीं। स्पष्टीकरण होने ही चाहिए। अज्ञान से स्पष्टीकरण मिलता हो तो अज्ञान क्या कम था? अज्ञान भी कहाँ नहीं था हमारे घर? स्टोक भरकर था न!

काफी है बैठनी प्रतीति भूल की

ये लोग कहते हैं कि अब हमने हमारे दोष हैं, वे जान लिए। पर अब निकाल दीजिए। आप हमें मारिए-करिए, जो करना हो वह कीजिए, पर दोष निकाल दीजिए। अब इसके लिए क्या रास्ता है?!

दोष किस तरह पैठा, वह आप खोजो। उसके बाद पता चलेगा, दोष निकलेंगे किस तरह? पैठा उस घड़ी उसे डालना नहीं पड़ता। इसलिए, निकालते समय निकालना नहीं पड़ता। जो चीज़ डाली हो वह निकालनी पड़ती है। ये तो मुझे कहते हैं, 'दोष निकाल दीजिए!' अरे लेकिन वे किससे पैठ गए? तब कहे, 'एक मनुष्य ऐसे कुसंग में गया, उससे उसे विश्वास हो गया कि ये मज़े कर रहे हैं और यह रास्ता बहुत अच्छा है। बहुत अच्छा सुखदाई है।' उसे उस ज्ञान पर श्रद्धा बैठ गई, प्रतीति बैठ गई।

उसी तरह मैं इन्हें क्या करता हूँ? जो उनकी भूलें हैं, वे नकारते हैं कि 'हममें बिलकुल ही भूल नहीं हैं वैसी, लोगों में भूलें हैं।' वे उनकी भूलें उन्हें दिखाता हूँ। फिर उन्हें प्रतीति बैठती है हंड्रेड परसेन्ट (सौ प्रतिशत), कि ये सब भूलें ही हैं। वह हम एक्सेप्ट (स्वीकार) करते हैं। 'यह भूल अब आप निकाल दीजिए', कहते हैं। मैंने कहा, 'अब निकालना नहीं होता। प्रतीति बैठ गई, उसका मतलब यह कि भूल निकलनी शुरू हो गईं। तुझे केवल मन खुला रखना है कि भाई, आप चले जाओ। बस, इतना ही बोलने की ज़रूरत है।' प्रतीति बैठने से ही भूल चली जाती है और प्रतीति बैठने से भूल पैठ जाती है। डालना-निकालना नहीं होता वह तो। यह क्या कोई कारखाना है? यानी एक भूल निकालनी हो तो कितना समय लगता है फिर। कितने ही जन्म निकल जाते हैं। समझ में आए ऐसी बात है न यह सब?!

प्रतीति, उसमें दाग़ नहीं पड़ना चाहिए।

प्रश्नकर्ता : आप सिम्पटम्स (लक्षण) नहीं देखते हैं और मूल कॉज़ (कारण) का इलाज करते हैं, ऐसे डॉक्टर कहाँ मिलेंगे?!

दादाश्री : डॉक्टर नहीं है, उसीका तो यह झमेला है न? ऐसे डॉक्टर मिले नहीं और ऐसी दवाई भी मिली नहीं, इसलिए फिर यह चला तूफ़ान! इसलिए फिर परिणाम को मारने लगे, इफेक्ट को!

श्रद्धा से पैठा। वह प्रतीति संपूर्ण बैठी, इसलिए वह पैठा और प्रतीति से उतरेगा। संपूर्ण प्रतीति होनी चाहिए कि यह दोष ही है। इसलिए निकल जाएगा। यही नियम है। फिर उसका रक्षण नहीं करे, प्रोटेक्शन (तरफ़दारी) नहीं दे तो चला जाता है। पर फिर प्रोटेक्शन देता ही है। हम कहें, 'साहब यह नसवार सूँघते हो अभी भी?' तब कहे, 'उसमें हर्ज नहीं।' यह प्रोटेक्शन दिया कहलाता है। मन में समझता है कि यह गलत है। प्रतीति बैठी होती है, पर फिर प्रोटेक्शन देता है। प्रोटेक्शन नहीं देना चाहिए। देते हैं न प्रोटेक्शन?

प्रश्नकर्ता : हाँ जी, प्रोटेक्शन देते ही हैं न!

दादाश्री : आबरू चली गई है, है ही कहाँ आबरू? आबरूवाला तो कपड़े पहनकर घूमता होगा? ये तो ढँकते रहते हैं आबरू! ढँक-ढँककर आबरू बचाते रहते हैं। फटे तब सिल देते हैं, अरे कोई देख लेगा, सिल दे।

भूल मिटा दे, वह भगवान

खुद की एक भूल मिटाए, वह भगवान कहलाता है। खुद की भूल बतानेवाले बहुत होते हैं, पर कोई मिटा नहीं सकता। भूल दिखाना भी आना चाहिए। यदि भूल दिखाना नहीं आए तो अपनी भूल है, ऐसा कबूल कर लेना चाहिए। यह किसीकी भूल दिखाना, वह तो भारी काम है और वह भूल मिटा दे, वह तो भगवान ही कहलाता है। वह तो 'ज्ञानी पुरुष' का ही काम। हमें इस जगत् में कोई दोषित दिखता ही नहीं है।

'हमने' संपूर्ण निर्दोष दृष्टि की और सारे जगत् को निर्दोष देखा!

इसलिए ही 'ज्ञानी पुरुष' आपकी 'भूल' मिटा सकते हैं! औरों के बस का नहीं है। भगवान ने संसारी दोष को दोष माना नहीं है। 'तेरे स्वरूप का अज्ञान' वही सबसे बड़ा दोष है। यह तो 'मैं चंदूलाल हूँ', तब तक अन्य दोष भी खड़े हैं और एक बार 'खुद के स्वरूप' का भान हो, तब फिर अन्य दोष भी जाने लगते हैं!

भूल बिना का दर्शन और भूलवाला वर्तन

खुद की भूल खुद को पता चले वह भगवान हो जाए।

प्रश्नकर्ता : इस तरह कोई भगवान हुआ था?

दादाश्री : जितने भी भगवान हुए, उन सभी को खुद की भूल खुद को पता चली थी और भूल को मिटाया था, वे ही भगवान हुए। भूल रहे नहीं उस तरह से वे भूल को मिटा देते हैं। सारी भूलें दिखती हैं, एक ऐसी भूल नहीं थी कि उन्हें नहीं दिखी हो। सूक्ष्म से सूक्ष्म, ऐसी सभी भूलें दिखती थीं। हमें भी हमारी पाँच-पचास भूलें तो हररोज़ दिखती हैं और वे भी सूक्ष्मतर और सूक्ष्मतम भूलें दिखती हैं, जो लोगों को नुकसानदायक बिलकुल भी नहीं होतीं। ये बोलते-बोलते किसीका अवर्णवाद बोला जाए, वह भी भूल कहलाती है। वह तो फिर स्थूल भूल कहलाती है।

अब भूल किसे दिखती है? तब कहे, भूल बिना का चारित्र, श्रद्धा में है खुद को! हाँ, और भूलवाला वर्तन, वर्तन में है, उसे भूल दिखती है। भूल बिना का चारित्र उसकी श्रद्धा में हो, भूल बिना का चारित्र संपूर्ण दर्शन में हो और भूलवाला वर्तन उसके वर्तन में हो, तो उसे हम मुक्त हुआ कहते हैं। भूलवाला वर्तन भले ही रहा, पर उसके दर्शन में क्या है?

एक सूक्ष्म से सूक्ष्म भूल रहितवाला चारित्र कैसा होना चाहिए? वह भीतर दर्शन में होना चाहिए। दर्शन में सूक्ष्म से सूक्ष्म भूल नहीं रहे, ऐसा दर्शन होना चाहिए। तभी भूल दिख जाती है न?! देखनेवाला क्लियर हो, तब ही देख सकता है। इसलिए हम कहते हैं न कि ३६० डिग्रीवाले जो

भगवान हैं न, वे संपूर्ण क्लियर (चोखे) हैं और हमारा 'अन्क्लिअरन्स' दिखाते हैं। यह ज्ञान मिलने के बाद, सभी को 'दो' तो होते ही हैं। उन लोगों को भी 'दो' होते ही हैं। जिन्हें ज्ञान नहीं मिला उन्हें भी 'दो' होते है और इन्हें भी 'दो' होते हैं।

इस ज्ञान के बाद अंदर और बाहर देख सकते हैं। अंदर भूल बिना का चारित्र यह है, ऐसा वे दर्शन में देख सकते हैं। और भूल रहित चारित्र जितना उसके दर्शन में ऊँचा गया, उतनी ही, वे भूलें उसे दिखती हैं। भीतर जितना ट्रान्सपेरेन्ट (पारदर्शक) और क्लियर हुआ, दर्पण शुद्ध हुआ कि तुरन्त अंदर दिखता है। उसमें झलकती हैं भूलें! आपको भूलें झलकती हैं क्या, अंदर?

प्रश्नकर्ता : दिखती हैं। भूल रहित चारित्र जिसके दर्शन में हो और भूलवाला चारित्र जिसके वर्तन में हो, उससे दिखती हैं?

दादाश्री : उससे तुरन्त पता चलता है कि दर्शन भूल बिना का है। इसलिए, भूल बिना का चारित्र जिसे दर्शन में होता है, वह कह देता है कि यह भूल हुई।

अलौकिक सामायिक वह पुरुषार्थ!

यानी भूलें दिखाई देने लगीं न, वे जितनी दिखती हैं, उतनी जाती हैं।

आपको थोड़ी भूलें दिखती हैं? प्रतिदिन पाँच-दस दिखती जाती हैं न? वे दिखीं, उतना दिखने का बढ़ता जाएगा। अभी तो बहुत दिखेंगी। जैसे-जैसे दिखती जाएगी, वैसे-वैसे आवरण खुलते जाएँगे और वैसे ज़्यादा दिखती जाएगी।

कुछ दोष बंद हों, ऐसा नहीं है। वह तो मार खाएगा, तब अनुभव होगा, तब दोष बंद होंगे। मैं जानता हूँ कि ये बिना अनुभव के बंद नहीं होंगे। बंद करवाएँ, वह गलत है।

जितना करना हो, उतना होता है, ऐसा है। और वह करते हैं कुछ

महात्मा। पुरुषार्थ है, पर वह सभी लोगों को आता नहीं है। हमारे यहाँ जो वह सामायिक करवाते हैं न, वह बड़ा पुरुषार्थ है। भूल का स्वभाव कैसा है कि भूल दिखी कि भूल जाने की तैयारी कर लेती है। भूल खड़ी नहीं रहती। दोष हो उसमें हर्ज नहीं है, पर दोष दिखाई देना चाहिए। दोष होता है, उसका दंड नहीं है, पर भूलें दिखती हैं उसका इनाम मिलता है। किसीको खुद की भूलें दिखती नहीं हैं। आत्मा प्राप्त होने के बाद निष्पक्षपाती होता है, इसलिए भूलें दिखने की शुरूआत होती है।

यह ज्ञान देने के बाद आप निष्पक्षपाती हुए, इसलिए देह का पक्षपात आपको पड़ौसी जितना रहा है। इसलिए जो भूल होती है, वह दिखती रहती है। दिखी इसलिए जाने लगती है।

नहीं छूता कुछ शुद्ध उपयोगी को

अब यह ज्ञान ही आपकी जो भूलें हैं, वह दिखलाता है। 'चंदूभाई' किसीके साथ उग्र हो गए तो 'आपको' पता चल जाता है कि ओहोहो! भूलें कितनी सारी थीं। मतलब भूलें दिखें उसका नाम आत्मा। निष्पक्षपाती हुए, उसका नाम आत्मा। जब तक आप आत्मा हो तब तक दोष छूता नहीं है। यदि आप शुद्ध उपयोग में हो, तो आपके हाथों कोई काम गलत हो जाए तो भी आपको छूता नहीं है। शुद्ध उपयोगी को कोई कर्म छूता नहीं है। इसलिए हमें आचार्य महाराज पूछते हैं कि, 'हम नंगे पैरों घूमते हैं जीवों की अहिंसा पालने के लिए और आप तो मोटर में फिरते हो। आपका ज्ञान सच्चा है, वह हम कबूल करते हैं, पर आपको दोष नहीं लगता होगा?' मैंने कहा कि, 'हम शुद्ध उपयोगी हैं।'

आरोप लगाने से, अटके आगे का विज्ञान

सामनेवाला निर्दोष दिखाई दे तो दोषित कौन दिखेगा?

प्रश्नकर्ता : जिसके पास अज्ञान अधिक है, उसे ज़्यादा दोषित लगता है।

दादाश्री : हाँ, सामनेवाला मनुष्य दोषित लगता है। और जिसके पास

ज्ञान ही होता है, उसे सामनेवाला मनुष्य बिलकुल दोषित नहीं लगता है।

अब दोषित लगता नहीं है, फिर भी दोष किसका? किसीका दोष तो होना चाहिए न? ये जितने दोष होते हैं, वे सभी आपके खुद के ही दोष हैं। खुद के ही दोष हैं, ऐसा जिसने देखा नहीं है, सोचा नहीं है और उन दोषों का खुद निकाल करता नहीं है और दूसरे लोगों पर आरोप लगता रहता है, उससे आगे का विज्ञान सारा बंद हो गया है, अटक गया है। आपके दोष जब समझ में आएँगे, तब आपको आगे का विज्ञान शुरू होगा।

बुद्धि एक्सपर्ट, दोष देखने में

इस जगत् में कोई दोषित ही नहीं है। ये दोष दिखते हैं, वही अपनी भ्रांति है। आपको समझ में आई यह बात थोड़ी-बहुत?

प्रश्नकर्ता : थोड़ी आई।

दादाश्री : कोई दोषित ही नहीं है। दोषित तो हमें यह बुद्धि अंदर उल्टा दिखाती रहती है और इसीलिए यह सारा संसार खड़ा रहा है। बुद्धि को दोष देखना बहुत आता है। 'उसने ऐसा किया है न!' हम कहें कि 'अपने दोष का वर्णन करो?' तब कहेगी, 'ऐसा कुछ खास नहीं है। एक-दो दोष हैं, बाक़ी खास नहीं है।'

दोष देखना, खुद के ही सदा!

प्रश्नकर्ता : कोई दोषित नहीं है, यानी खुद भी दोषित नहीं है ऐसा हुआ न?

दादाश्री : नहीं, मुझे यह दुखता है कि क्या? ऊपर से किसीने पत्थर फेंका और मुझे लगा, इसमें दोष किसका कहें?

प्रश्नकर्ता : वह तो किसीका दोष नहीं है।

दादाश्री : इसलिए वहाँ पर यह मेरा दोष होगा, इसलिए यह हुआ। वह अपने खुद का दोष तो देखना ही पड़ेगा न?! और खुद की भूलें जब तक नहीं दिखेंगी, तब तक मनुष्य और आगे बढ़ेगा किस तरह?

बाक़ी कोई गाली दे और खुद को असर नहीं हो, खुद अपनी ही भूल है, ऐसा खुद को लगता रहे और सामनेवाला निर्दोष है ऐसा समझ में आए, खुद प्रतिक्रमण करता रहे, तो वह भगवान का सबसे बड़ा ज्ञान है। यही मोक्ष में ले जाता है। इतना शब्द, हमारा एक ही वाक्य यदि पाले न, तो मोक्ष में चला जाए।

दोष देखे, वहाँ बुद्धि स्थिर

प्रश्नकर्ता : मतलब दूसरों का दोष नहीं, हमारा ही दोष है?

दादाश्री : हाँ, ऐसा है न, बुद्धि को एक जगह स्थिर किए बिना काम नहीं होगा। इसलिए यदि उसका दोष देखोगे तो भी बुद्धि स्थिर होगी। और उसे निर्दोष देखो और खुद का दोष देखो, तो भी बुद्धि स्थिर होगी। नहीं तो यों ही बुद्धि स्थिर होती नहीं है न फिर!

प्रश्नकर्ता : यानी कहीं पर तो दोष है। उसका अर्थ यह हुआ कि वहाँ दोष नहीं है तो यहाँ पर दोष है।

दादाश्री : हाँ, उतना ही फर्क।

प्रश्नकर्ता : अब समझ में आया कि यह निर्दोष किस तरह है!

दादाश्री : क्योंकि बुद्धि क्या कहती है? बुद्धि समाधान खोजती है, स्थिरता खोजती है। इसलिए आप किसीका दोष निकालो तो बुद्धि स्थिर होती है। फिर उसकी ज़िम्मेदारी चाहे जो भी हो। पर किसीका दोष निकाला न, फिर बुद्धि स्थिर होती है। दोष किसीका नहीं, मेरा ही है, तब भी बुद्धि स्थिर होती है। पर ऐसे बुद्धि स्थिर होने का मार्ग वह मोक्षमार्ग!

अब बुद्धि ऐसे भी स्थिर होती है और वैसे भी स्थिर होती है, लेकिन जो किसी पर आरोपण हुए बिना की बुद्धि हो, ऐसी बुद्धि की स्थिरता होनी चाहिए। इसलिए हम खुद पर ही डालें तो इसका हल निकले ऐसा है। तब बुद्धि भी स्थिर होगी न!

इस प्रकार इस जगत् में दख़ल हो रही है और खुद की भूल पकड़

में नहीं आती है। और सामनेवाले की भूल तुरन्त पता चल जाता है। क्योंकि बुद्धि का उपयोग किया है न! और जिसको बुद्धि का उपयोग नहीं हुआ उसे तो कोई भूल होने का सवाल ही नहीं रहता है न, कोई शिकायत ही नहीं है न! गायें-भैंसे हैं, सब ऐसे अनंत जीव हैं। उन लोगों को कोई शिकायत नहीं है, बिलकुल शिकायत नहीं है।

प्रश्नकर्ता : यह बहुत बड़ी बात निकली कि बुद्धि को स्थिर करनी है। पहले बुद्धि को वहाँ संसार में स्थिर करते थे, वहाँ दोष दिखता था।

दादाश्री : हाँ, बुद्धि को स्थिर करने के लिए साधन चाहिए। तब अंत में खुद गुनहगार नहीं है, ऐसा मनवाते हैं लोग। तो हम कहते हैं, 'वह तो गुनहगार है ही न!' यानी किसी पर थोप देते हैं, पर बुद्धि स्थिर करते हैं किसी जगह पर। इसलिए, बुद्धि यदि स्थिर नहीं हो पाए तो दूसरा क्या करोगे? तब फिर आपको ऐसा कहना चाहिए कि मेरा ही दोष है, ताकि बुद्धि यहाँ स्थिर हो जाए। नहीं तो बुद्धि चली तो भीतर अंतःकरण सारा डोलमडोल, डोलमडोल, यहाँ जैसे हुल्लड़ हुआ हो न, वैसा ही। इसलिए बुद्धि स्थिर करनी पड़ती है न? स्थिर न करें, तब तक हुल्लड़ मचने जैसा हो जाता है। अज्ञानी खुद की जिम्मेदारी पर बुद्धि स्थिर करता है और आप लोग खुद की भूल देखने में स्थिर करते हो। और फिर स्थिर करे, तब हुल्लड़ बंद हो गया न! नहीं तो विचारों की परंपरा चलती रहती है भीतर।

यदि ऐसा कहा कि यह उसकी भूल है, तब हमारी बुद्धि स्थिर होती है। फिर आराम से खाना भाता है। पर उसमें से फिर संसार आगे बढ़ता जाता है। हमें संसार निकाल देना है, इसलिए हम कहें कि, 'भूल मेरी है,' तभी बुद्धि स्थिर होगी और फिर खाना भाएगा। बुद्धि स्थिर होनी चाहिए। समझ में आए ऐसी बात है न?

प्रश्नकर्ता : बुद्धि स्थिर होती है, वह बिलकुल समझ में आए ऐसी बात है।

दादाश्री : हाँ, और जब तक बुद्धि अस्थिर है, तब तक खाने नहीं देगी, पीने नहीं देगी, सोने नहीं देगी, कुछ नहीं करने देगी। तब वह मन की

चंचलता नहीं है, बुद्धि की चंचलता है। बुद्धि स्थिर हुई कि हल आ गया।

प्रश्नकर्ता : आपने कहा न कि बुद्धि स्थिर होती है, संसार की तरफ या फिर आत्मा की तरफ...

दादाश्री : आप सामनेवाले को दोष दो तो आपकी बुद्धि स्थिर हुई, तब आपको खाने देगी, पीने देगी, सोने देगी सब करने देगी पर सामनेवाले को दोष देने से संसार खड़ा रहेगा। और मैं क्या कहता हूँ कि संसार यदि अस्त कर देना हो तो मूल दोष आपका है, वास्तव में ऐसा है। अब खुद को दोष दिया तो यहाँ भी बुद्धि स्थिर हो जाएगी। बुद्धि को ऐसा नहीं है कि हमारा खुद का दोष निकाले। पर बुद्धि स्थिर होनी चाहिए, बुद्धि को स्थिर किए बगैर चारा नहीं है। ऐसा कहीं शास्त्रों में थोड़ा लिखा जाता है?

ऐसा है न, इस जगत् का पूरा लेखा-जोखा शास्त्र में नहीं रहा है। पर हम उसे खुला करते हैं कि इस जगत् में कोई दोषित है ही नहीं। ऐसा सब जो दिखता है, मार-काट, खून-खराबा बहुत होता है, चोरियाँ, लुच्चाई जो सब हो रहा है, उसमें कोई दोषित ही नहीं है। वह वास्तविक दृष्टि है। वास्तविक दृष्टि पर से यदि कभी मेल बैठाओ तो आपकी दोष दृष्टि निकल गई कि आप खुदा हो गए, बस! दूसरा कुछ है नहीं!!

पाने को मुक्ति, देखे निजदोष

जगत् निर्दोष ही है सदा के लिए, साँप भी निर्दोष है और बाघ भी निर्दोष है। साँप और बाघ सब निर्दोष हैं। ये इंदिराजी भी निर्दोष हैं और मोरारजी भी निर्दोष हैं और जसलोकवाले भी निर्दोष हैं, सभी निर्दोष हैं। पर दोष दिखते हैं न? जितने दूसरों के दोष दिखने जितने बंद हो गए, वही मोक्ष की क्रिया। दोष दिखते हैं, वह संसार की अधिकरण क्रिया है। इसलिए, अपना ही दोष, दूसरे किसीका दोष नहीं है। दूसरों के दोष दिखने बंद हो गए, वह मोक्ष की टिकटवाला हो गया। नहीं तो जगत् पूरा, परायों का दोष ही देखता है। यानी खुद के दोष देखने के लिए जगत् है। दूसरों के दोष देखने से ही यह जगत् खड़ा हो गया है। और दूसरों के दोष देखता है कौन? जिसे गुरुत्तम बनना हो वह!

मोक्ष में जानेवाला खुद की भूल देखा करता है और दूसरों की भूल देखनेवाला संसार में भटका करता है। कुछ परायों की भूल देखते होंगे, उसमें परेशान मत होना। मुआ, वह यहाँ भटकनेवाला है, इसलिए वह देखता ही रहेगा न! वह भटकनेवाला है। ऐसा नहीं करेगा तो फिर वह भटकेगा किस तरह?

आ जाओ, एक बात पर

यहाँ पर यदि आपको पसंद हो तो दोषित देखते रहना। संसार पसंद हो तो जगत् को दोषित देखते रहना और संसार पसंद नहीं तो एक किनारे पर आ जाओ। एक बात पर आ जाओ। यदि संसार पसंद नहीं हो, तो संसार दोषित नहीं है ऐसा आप देखते रहना। मेरे दोष के कारण ही यह खड़ा हुआ है, एक किनारे तो लाना पड़ेगा न? विरोधाभास कब तक चलेगा? महावीर भगवान को कोई दोषित लगा नहीं। ऊपर से देव आकर परेशान कर गए, तब भी उन्हें देव दोषित नहीं लगे।

पड़ा ही होता है भीतर वह दोष

जगत् में दोषित नहीं दिखें। निर्दोष दिखने चाहिए।

प्रश्नकर्ता : ऐसा तो है न कि हम जिन्हें दोषित देखते हैं, जिस दृष्टि से दोष देखते हैं, वे दोष हममें भरे पड़े हैं।

दादाश्री : इसलिए ही दिखते हैं।

प्रश्नकर्ता : और जितने अंश तक दोष का कम होना हुआ, उतने अंश तक दृष्टि स्वच्छ होती है क्या?

दादाश्री : हाँ, उतना चोखा होता है।

खुद का गटर दुर्गंध दे और दूसरों का गटर धोने जाए

दोष तो सभी के गटर हैं। ये बाहर के गटर हम खोलते नहीं हैं। इस छोटे बच्चे को भी वह अनुभव होता है। यह रसोईघर रखा तो गटर तो होना ही चाहिए न! पर उस गटर को खोलना नहीं। किसीमें कुछ दोष

होते हैं। कोई चिढ़ता है, कोई हड़बड़ाता घूम रहा होता है, उसे देखना, वह गटर खोला कहा जाता है। उसके बदले तो गुण देखना अच्छा है। गटर तो अपना खुद का ही देखने जैसा है। पानी भर गया हो तो खुद का गटर साफ़ करना चाहिए। यह तो गटर भर जाता है, पर समझ में नहीं आता! और समझ में आए, फिर भी करे क्या? अंत में आदत हो जाती है उसकी। उसके कारण तो ये रोग खड़े हुए हैं, शास्त्र पढ़कर गाते रहते हैं कि किसीकी निंदा मत करना, पर निंदा तो चलती ही रहती है। किसीका ज़रा-सा भी उल्टा बोले कि उतना नुकसान हुआ ही! ये बाहरवाले गटरों के ढक्कन कोई खोलता नहीं है। पर लोगों के गटरों के ढक्कन खोलते रहते हैं।

एक आदमी संडास के दरवाज़े को लातें मार रहा था। मैंने कहा, 'क्यों लात मारते हो?' तब कहे कि, खूब साफ करता हूँ फिर भी दुर्गंध मारता है।' बोलो, अब यह कितनी अधिक मूर्खता कहलाएगी? संडास के दरवाज़े को लातें मारें फिर भी दुर्गंध मारे, तो उसमें भूल किसकी?

प्रश्नकर्ता : लातें मारनेवाले की।

दादाश्री : कितनी बड़ी भूल कहलाए न? कोई दरवाज़े का दोष है बेचारे का? ये लातें मार-मारकर जगत् सारा, दुर्गंध को साफ करने जाता है। पर वह संडास के दरवाज़े को लात मारकर खुद को उपाधी होती है और दरवाज़े भी टूट जाते हैं।

आपको तो हम क्या कहते हैं कि इस शरीर के जो-जो भी दोष हों, मन के दोष हों, उतने आपको दिखें तब आप छूटे। दूसरा, आपको दोषों को निकालने के लिए माथाकूट नहीं करनी है, या संडास का दरवाज़ा पीटते रहने की ज़रूरत नहीं है। संडास के दरवाज़े को लातें मारें तो उसकी दुर्गंध मिट जाएगी? क्यों नहीं मिटेगी? उसने लात मारी फिर भी नहीं मिटेगी? शोर मचाएँ तो?

प्रश्नकर्ता : नहीं मिटती।

दादाश्री : संडास को कोई असर नहीं होता न? वैसे ही ये लोग माथाकूट करते हैं, बिना काम की माथाकूट! उसी प्रकार ये नवटाँक भी

पीसा नहीं और पहले पुराना पीसा हुआ था, वह भी उड़ा दिया बार-बार पीसकर! ऐसे तो सारा पीसा हुआ उड़ जाएगा न सब! नया पीसा हुआ तो कहाँ गया, पर पुराना पीसा हुआ था, उसे फिर पीसने को लिया और उड़ा दिया! कुछ भी हाथ में नहीं रहा। यह मनुष्यपन दिखता है न, वह दो पैरों के बजाय चार पैर हों ऐसा है। बोलो कितना नफा हुआ?

दृष्टि, अभिप्राय रहित

दोष देखना बंद कर दो न!

प्रश्नकर्ता : यदि दोष नहीं देखें तो दुनिया की दृष्टि से हम एक्सेस फूल (अधिक मूर्ख) नहीं लगेंगे?

दादाश्री : मतलब दोष देखने से सफल होते हैं हम?

प्रश्नकर्ता : दोष देखने से नहीं, पर डिस्टिंक्शन करना कि यह मनुष्य ऐसा है, यह मनुष्य ऐसा है।

दादाश्री : नहीं, उसीसे तो जोख़िम है न सारा। वह प्रिज्युडिस (पूर्वग्रह) कहलाता है। प्रिज्युडिस किसीके प्रति रखना नहीं चाहिए। कल कोट चुरा ले गया हो, फिर भी आज चुरा जाएगा, ऐसा हमें नहीं रखना चाहिए। पर हमें सिर्फ कोट सुरक्षित जगह पर रखना चाहिए। सावधानी रखनी चाहिए हमें। पिछले दिन कोट यदि बाहर रखा था तो आज ठिकाने पर रख देना चाहिए। लेकिन प्रिज्युडिस नहीं रखना चाहिए। इससे तो ये दुःख हैं न, नहीं तो वर्ल्ड में दुःख क्यों होते?! और भगवान दुःख देते नहीं, सब आपके ही खड़े किए हुए दुःख हैं, और वे आपको परेशान करते हैं। उसमें भगवान क्या करें? किसी पर प्रिज्युडिस रखना मत। किसीका दोष देखना मत। यह यदि समझ जाओगे तो हल आ जाएगा।

आप प्रतिक्रमण नहीं करोगे तो आपका अभिप्राय बाकी रहा, इसलिए आप बंधन में आए। जो दोष हुआ उसमें आपका अभिप्राय रहा और अभिप्रायों से मन खड़ा हुआ है। मुझे किसी भी मनुष्य के लिए ज़रा-सा भी अभिप्राय नहीं है। क्योंकि एक ही बार देख लेने के बाद मैं उसके

लिए दूसरा अभिप्राय बदलता नहीं हूँ।

संयोगवश कोई मनुष्य चोरी करता हो, वह मैं खुद देखूँ, तब भी उसे मैं चोर नहीं कहता हूँ, क्योंकि वह संयोगवश है। जगत् के लोग तो जो पकड़ा गया उसे चोर कहते हैं। यह संयोगवश चोर था या हमेशा से चोर था, ऐसी कुछ जगत् को पड़ी नहीं है। मैं तो हमेशा के चोर को चोर कहता हूँ। अभी तक मैंने किसी भी मनुष्य के बारे में अभिप्राय नहीं बदला है। 'व्यवहार आत्मा' संयोगाधीन है और 'निश्चय आत्मा' से एकता है। हमें पूरे वर्ल्ड के साथ मतभेद नहीं है।

प्रश्नकर्ता : वह तो होगा ही नहीं, क्योंकि आपको तो कोई मनुष्य दोषित लगता ही नहीं न, निश्चय से।

दादाश्री : दोषित नहीं लगता, क्योंकि वास्तव में ऐसा होता नहीं है। यह जो दोषित लगता है न वह दोषित दृष्टि के कारण दोषित लगता है! यदि आपकी दृष्टि निर्दोष हो जाए तो दोषित लगेगा ही नहीं कोई!

ऐसे अंत आए उलझनों का

उलझनों का 'एन्ड' कब आता है? रिलेटिव और रियल, ये दो ही चीज़ें जगत् में हैं। ऑल दीज़ रिलेटिव आर टेम्परेरी एडजस्टमेन्ट्स और रियल इज़ द परमानेन्ट। अब परमानेन्ट भाग कितना और टेम्परेरी भाग कितना? उनके बीच लाइन ऑफ डिमार्केशन डाल दें तो उलझनें बंद हो जाती हैं। नहीं तो उलझनें बंद होती नहीं हैं। चौबीस तीर्थंकरों ने वह डिमार्केशन लाइन डाली थी। कुंदकुंदाचार्यजी ने यह लाइन डाली थी और आज हम यह डिमार्केशन लाइन डाल देते हैं कि तुरन्त उसका सब ठीक हो जाता है। रिलटिव और रियल इन दोनों की उलझनों के बीच लाइन ऑफ डिमार्केशन डाल देते हैं कि यह भाग आपका खुद का और यह पराया भाग है। अब पराये भाग को 'मेरा' मानना नहीं, ऐसा उसे समझा दिया कि उसका हल आ गया।

यह तो पराया माल हड़प लिया है। उसकी लड़ाई चलती है, झगड़े

ही चलते रहते हैं। उलझन यानी झगड़े चलते ही रहते हैं और एक भी खुद की भूल दिखती नहीं है, यों तो सारा भूलोंवाला ही बहीखाता है! अर्थात् रिलेटिव और रियल का ज्ञान होने के बाद खुद की ही भूलें दिखती हैं। जहाँ देखो, वहाँ खुद की ही भूलें दिखती हैं और है ही खुद की भूल। खुद की भूल से यह जगत् खड़ा रहा है, यह किसी और की भूल के कारण जगत् खड़ा नहीं रहा है। खुद की भूल निकल जाए कि फिर वह सिद्धगति में ही चला जाता है!

जहाँ छूटा मालिकीपन सर्वस्व प्रकार से...

जितने हमें खुद के दोष दिखें, उतने दोष अंदर से कम होते हैं। ऐसे कम होते-होते जब दोषों का थैला पूरा खाली हो जाए, तब आप निर्दोष हो जाएँगे। तब खुद के स्वरूप में आ गए कहलाएँगे।

अब इसका कब अंत आए? अनंत जन्मों से भटक रहे हैं, दोष तो बढ़ते ही चले हैं। मतलब ज्ञानी पुरुष की कृपा से ही सारा काम हो जाता है। क्योंकि वे खुद मोक्षदाता हैं। मोक्ष का दान देने आए हुए हैं। उन्हें कुछ भी नहीं चाहिए।

संपूर्ण जागृति बरते, तब खुद की एक भी भूल नहीं होती! एक भी भूल हो, वह अजागृति है। दोष खाली किए बिना निर्दोष नहीं हो सकते! और निर्दोष हुए बिना मुक्ति नहीं है।

जब दोष रहित हो जाओगे, तब निर्दोष हो जाओगे। नहीं तो फिर यदि थोड़े-बहुत बाकी रहेंगे तो यह स्वामित्व छोड़ दोगे तब निर्दोष हो जाओगे। यह शरीर मेरा नहीं, यह मन मेरा नहीं, यह वाणी मेरी नहीं, तो आप निर्दोष हो सकोगे। पर अभी तो आप मालिक हो न? टाइटल भी (मालिकी) है न?! मैंने तो टाइटल कितने ही समय से फाड़ दिया है! छब्बीस सालों से एक सेकन्ड भी, मैं इस शरीर का मालिक हुआ नहीं हूँ, इस वाणी का मालिक हुआ नहीं हूँ, मन का मालिक हुआ नहीं हूँ।

आत्मदृष्टि होने के बाद...

गरुड़ आते ही, भागें साँप

शास्त्रकारों ने एक उदाहरण दिया है कि भाई, इस चंदन के जंगल में केवल साँप ही साँप होते हैं। उस पेड़ से लिपटकर सब बैठे ही होते हैं ठंडक में। चंदन के पेड़ों से लिपटकर, उसके जंगल में। पर एक गरुड़ आए कि सब भागम्भाग-भागम्भाग होती है, उसी प्रकार यह मैंने गरुड़ रख दिया है, सारे दोष भाग जाएँगे। शुद्धात्मा रूपी गरुड़ बैठा है। इसलिए सारे दोष भाग जानेवाले हैं। और 'दादा भगवान' का आशीर्वाद है, फिर उसे क्या भय! मेरे साथ 'दादा भगवान' हैं, तो 'मुझे' इतनी सारी हिम्मत है, तो आपको हिम्मत नहीं आएगी?

प्रश्नकर्ता : हिम्मत तो पूरी-पूरी आती है!

निष्पक्षपाती दृष्टि

दादाश्री : 'स्वरूपज्ञान' बिना तो भूल दिखती नहीं है। क्योंकि 'मैं ही चंदूभाई हूँ और मुझ में कोई दोष नहीं है, मैं तो सयाना-समझदार हूँ,' ऐसा रहता है और 'स्वरूपज्ञान' की प्राप्ति के बाद आप निष्पक्षपाती हुए, मन-वचन-काया पर आपको पक्षपात नहीं रहा। इसलिए खुद की भूलें, आपको खुद को दिखती हैं। जिसे खुद की भूल पता चलेगी, जिसे प्रतिक्षण अपनी भूल दिखेगी, जहाँ-जहाँ हो वहाँ दिखे, नहीं हो वहाँ नहीं दिखे, वह खुद 'परमात्मा स्वरूप' हो गया! 'वीर भगवान' हो गया!!! 'यह' ज्ञान प्राप्त करने के बाद खुद निष्पक्षपाती हो गया, क्योंकि 'मैं चंदूभाई नहीं, मैं शुद्धात्मा हूँ' यह समझने के बाद ही निष्पक्षपाती हो पाते हैं। किसीका ज़रा-सा भी दोष दिखे नहीं और खुद के सभी दोष दिखें, तभी खुद का कार्य पूरा हुआ कहलाता है। पहले तो 'मैं ही हूँ' ऐसा रहता था, इसलिए

निष्पक्षपाती नहीं हुए थे। अब निष्पक्षपाती हुए इसलिए खुद के सभी दोष दिखने शुरू हुए और उपयोग अंदर की तरफ ही होता है, इसलिए दूसरों के दोष नहीं दिखते हैं! खुद के दोष दिखने लगे, इसलिए 'यह ज्ञान' परिणमित होना शुरू हो जाता है। खुद के दोष दिखाई देने लगे इसलिए दूसरों के दोष दिखते नहीं हैं। इस निर्दोष जगत् में कोई दोषित है ही नहीं, वहाँ किसे दोष दें? दोष है, तब तक दोष, वह अहंकार भाग है, और वह भाग धुलेगा नहीं, तब तक सारे दोष निकलेंगे नहीं, तब तक अहंकार निर्मूल नहीं होगा। अहंकार निर्मूल हो जाए, और तब तक दोष धोने हैं।

वैसे-वैसे प्रकटे आतम उजियारा

प्रश्नकर्ता : आत्मा का अध्यास होने के बाद भूलें अपने-आप कम होती जाती हैं?

दादाश्री : अवश्य, भूलें कम हों, उसका नाम ही आत्मा का अध्यास। देहाध्यास यदि जाए, वैसे-वैसे यह उत्पन्न होता है।

पहले तो समकित होता है, फिर भी सारे दोष नहीं दिखें ऐसा समकित होता है। फिर जागृति बढ़ती जाए, वैसे दोष खुद के दिखते जाते हैं! खुद के दोष दिखें, वह तो क्षायक समकित कहलाता है। वह क्षायक समकित लोगों को यहाँ पर मुफ्त में लुटाते हैं। केवल मुफ्त में नहीं, उलटे हम कहते हैं कि आना, चाय पिलाएँ तब भी नहीं आते, देखो न, आश्चर्य है न!

ये भूलें दिखने लगीं न, इसलिए 'हे चंदूभाई! आपने अतिक्रमण किया इसलिए प्रतिक्रमण करो', कहें हम। इस जगत् में खुद की भूलें दिखती नहीं हैं। जिसे खुद की भूल खुद को दिखे, उसका नाम समकित। आत्मा हो जाएँ, तो दोष ही दिखेंगे न। दोष दिखा इसलिए हम आत्मा हैं, शुद्धात्मा हैं, नहीं तो दोष दिखते नहीं हैं। जितने दोष दिखे उतना आत्मा प्रकट हो गया।

यह तो जागृति ही नहीं है। एक भी मनुष्य ऐसा नहीं है कि जिसे

जागृति हो। इन भाई को जब तक 'ज्ञान' दिया नहीं, तब तक उनमें किसी भी प्रकार की जागृति नहीं होगी। ज्ञान देने के बाद उनमें जागृति उत्पन्न होगी। फिर भूल हुई, तो जागृति के कारण भूलें दिखेंगी। वर्ल्ड में किसीको जागृति ही नहीं होती और खुद की एक-दो भूलें दिखती हैं, और दूसरी भूलें दिखती नहीं हैं। यह तो ज्ञान के बाद आपको अपनी तो सारी ही भूलें दिखती हैं, वो इस जागृति का परिणाम है!

गुह्यतम विज्ञान

प्रश्नकर्ता : दादा, सामनेवाले के दोष क्यों दिखते हैं?

दादाश्री : खुद की भूल के कारण ही सामनेवाला दोषित दिखता है। इन दादा को सब निर्दोष ही दिखते हैं। क्योंकि अपनी सारी भूलों को उन्होंने मिटा डाला है। खुद का ही अहंकार सामनेवाले की भूल दिखाता है। जिसे खुद की ही भूल देखनी है, उसे सभी निर्दोष ही दिखेंगे।

जिसकी भूल हो, वह भूल का निकाल करे। सामनेवाले की भूल से हमें क्या लेना-देना?

प्रश्नकर्ता : दादा, सामनेवाले के दोष नहीं देखने हों, फिर भी दिख जाएँ और भूलें घेर लें तो क्या करें?

दादाश्री : जो उलझाती है वह बुद्धि है, वह विपरीत भाव को प्राप्त बुद्धि है और बहुत काल से है, और फिर आधार दिया है। इससे वह जाती नहीं है। यदि उससे कहा कि तू मेरे लिए हितकारी नहीं है तो उससे छूट जाएँगे। यह तो नौकर होता है, उसे कहा कि तेरा काम नहीं है, फिर उसके पास काम करवाएँ तो चलेगा? उसी प्रकार बुद्धि को एक बार भी काम न बताएँ। इस बुद्धि को तो संपूर्ण असहयोग देना है। विपरीत बुद्धि संसार के हिताहित का भान बतानेवाली है, जब कि सम्यक् बुद्धि संसार से हटाकर मोक्ष की ओर ले जाती है।

प्रश्नकर्ता : दोष छूटते नहीं, तो क्या करना चाहिए?

दादाश्री : दोष छूटते नहीं। पर उन्हें 'हमारी चीज़ नहीं है,' ऐसा

कहें, तो छूट जाएँगे।

प्रश्नकर्ता : लेकिन ऐसा कहें, फिर भी नहीं छूटें तो क्या करना चाहिए?

दादाश्री : यह तो जो दोष बर्फ जैसे हो गए हैं, वे एकदम से कैसे छूटेंगे? फिर भी वे ज्ञेय हैं और हम ज्ञाता, ऐसा संबंध रखें, तो उससे वे दोष छूट जाएँगे। हमारा आधार नहीं होना चाहिए। आधार न मिले तो वह गिर ही जाएगा। यह तो आधार से चीज़ खड़ी रहती है। निराधार हो जाए, तो गिर जाती है। यह जगत् आधार से खड़ा हुआ है, पर निराधार हो तो खड़ा ही नहीं रहे न। निराधार करना आता नहीं है। वह तो ज्ञानियों के ही खेल हैं! यह जगत् तो अनंत 'गुह्यवाला', उसमें 'गुह्य से गुह्य' भाग को किस तरह समझे?

दोष होते हैं परतोंवाले

वे भूलें फिर ज्ञेय स्वरूप में दिखती है। जितने ज्ञेय दिखते हैं उतनों से मुक्त हुआ जाता है। यह प्याज़ की परतें होती हैं न, वैसे दोष भी परतोंवाले होते हैं। इसलिए जैसे-जैसे दोष दिखते हैं, वैसे-वैसे उनकी परतें उखड़ती जाती हैं और जब उसकी सारी परतें उखड़ जाएँ, तब वह दोष जड़-मूल से सदा के लिए बिदा ले लेता है। कुछ दोष एक परतवाले होते हैं। दूसरी परत ही उनकी होती नहीं है, इसलिए उन्हें एक ही बार देखने से चले जाते हैं। अधिक परतोंवाले दोषों को बार-बार देखना पड़ता है और प्रतिक्रमण करें तो जाते हैं और कुछ दोष तो इतने चिकने होते हैं कि उनका बार-बार प्रतिक्रमण करते रहना पड़ता है और लोग कहेंगे कि वही का वही दोष होता है? तब कहे कि भाई! हाँ पर उसका कारण उन्हें यह समझ में नहीं आता है! दोष तो परत के समान हैं, अनंत हैं। इसलिए जो सब दिखें और उनके प्रतिक्रमण करे, तो चोखे हो जाते हैं।

प्रश्नकर्ता : एक तरफ हम कहते हैं कि ज्ञान क्रियाकारी है और एक तरफ कोई भूल हो जाती है तो उसे निकाली भाव कहते हैं, यह एडजस्टमेन्ट कहलाएगा न?

दादाश्री : वे निकाली बात ही हैं सभी। ये सब बातें ही निकाली हैं। वे न तो ग्रहणीय हैं, न ही त्याग करनी हैं। त्याग में तिरस्कार होता है, द्वेष होता है और ग्रहण में राग होता है और ये तो निकाली बातें हैं सारी!

और आपका दोष है, ऐसा आपको क्यों दिखता है! उसका प्रमाण क्या है? चंदूभाई गुस्सा हुए वह आपको पसंद नहीं आता। वह आपको पसंद नहीं आया, वह आपको चंदूभाई का दोष दिखा। ऐसे सारे दिन जो पसंद नहीं आते हों, वैसे सारे दोष आपको दिखाई देने लगे।

गुनहगारी पाप-पुण्य की

यह जगत् 'व्यवस्थित' है। 'व्यवस्थित शक्ति' हमारी जो गुनहगारी थी, उसे वापस हमारे पास भेजती है। उसे आने देना है और हमें अपने समभाव में रहकर उसका निकाल कर देना है। पिछले जन्म में जो जो भूलें की थीं, वे इस जन्म में सामने आती हैं। इसलिए इस जन्म में हम सीधे चले, फिर भी वे भूलें बाधा डालती हैं, उसका नाम गुनहगारी!

यह गुनहगारी दो प्रकार की हैं। हमें फूल चढ़ाएँ, वह भी गुनहगारी और पत्थर मारें, वह भी गुनहगारी! फूल चढ़े, वह पुण्य की गुनहगारी और पत्थर पड़े, वह पाप की गुनहगारी है। यह कैसा है? पहले जो भूलें की थीं, उनका कोर्ट में केस चलता है और फिर न्याय होता है। जो-जो भूलें की थीं, वो-वो गुनाह भोगने पड़ते हैं। वे भूलें भुगतनी ही पड़ती हैं। उन भूलों का हमें समताभाव से निकाल करना है, उसमें कुछ भी बोलना नहीं है। बोलें नहीं तो क्या होगा? काल आए, तब भूल आएगी और वे भुगते जाने पर निकल जाएगी। उच्च जातियों में यह बोलने से ही तो सारी गुत्थियाँ पड़ी हुई हैं न! इसलिए उन गुत्थियाँ को सुलझाने के लिए मौन रखें तो समाधान आए ऐसा है।

'ज्ञानी पुरुष' ने गुत्थियाँ नहीं डाली हुई थीं। इसलिए उन्हें अभी सब आगे से आगे वैभव मिलता रहता है। और आप सबको अभी इस जन्म में 'ज्ञानी पुरुष' मिल गए हैं। इसलिए पिछली उलझनों का समभाव से

निकाल करके नयी गाँठें फिर से नहीं डालोगे तो फिर वे गाँठें नहीं आएँगी और समाधान हो जाएगा।

इसलिए, हमें भूल तो मिटानी पड़ेगी न!

प्रश्नकर्ता : पर भूलें क्या-क्या हैं, वे सब दिखाई देनी चाहिए न!

दादाश्री : वह तो धीरे-धीरे दिखती जाएँगी। आपको ये बातें करता हूँ वैसे-वैसे दिखेंगी। आपकी भूल देखने की दृष्टि उत्पन्न होगी। आपको इच्छा होगी कि मुझे अब भूलें खोज निकालनी हैं, तो मिले बगैर रहेंगी नहीं!

अब जो आपके उदय हैं न, उन उदयों में जो दोष हैं, वे रिज़र्वोयर (सरोवर) का माल है। यानी नयी आवक नहीं है उसमें, और जावक चालू है। इसलिए पहले जोरों से निकलेंगे, दो-पाँच सालों के बाद खाली हो जाएँगे। फिर बुलाओ, तब भी मना करेंगे, और कुछ सालों के बाद तो इसकी कुछ और ही दशा आएगी।

और वह हमने सेफसाइड कर दी है। आपको इतना लक्ष्य में रहना चाहिए कि सेफसाइड किया हुआ याद नहीं आना चाहिए। सुटेवों और कुटेवों दोनों से सेफसाइड नहीं की है हमने?

प्रश्नकर्ता : हाँ।

दादाश्री : फिर कहता है, 'दादा, मुझे ऐसा क्यों होता है? आज गुस्सा हो गया था।' अरे, गुस्सा हो गया, उसे देख न! तूने जाना है न? पहले जानते नहीं थे, पहले तो 'मैंने ही किया' ऐसा कहते थे। वह अब अलग पड़ा न?

प्रश्नकर्ता : हाँ।

स्वरूप प्राप्ति के बाद...

दादाश्री : यह साइंस है। साइंस यानी साइंस। पच्चीस प्रकार के मोह, चार्जमोह मैंने पूर्णतया बंद कर दिए हैं। और डिस्चार्ज मोह तो रहेगा ही,

डिस्चार्ज मोह तो भगवान महावीर को भी था। उनके सामर्थ्य के अनुसार, क्योंकि वे खपाकर गए होते हैं और हम खपाए बिना के हैं। वे दस के कर्ज़दार थे और हम लाख के कर्ज़दार हैं। उन्होंने कर्ज़ का निकाल कर दिया था और आप भी निकाल कर दोगे। बस कर्ज़ का निकाल ही करने बैठे हैं, वहाँ हम समभाव से निकाल करते हैं न? हाँ, निकाल ही कर देना है।

सुटेवें और कुटेवें दोनों ही भ्राँति है। हम भ्राँति से बाहर निकले हैं अब। जो माल अपना नहीं है, उसे संग्रह क्यों करें?

हमें दोषों को देखना है। दोष कितने दिखते हैं, वह जानना है हमें। दोष को दोष देखो और गुण को गुण देखो। यानी शुभ को गुण कहा और अशुभ को दोष कहा। और वह आत्मभाषा में नहीं है। आत्मभाषा में दोष या गुण कुछ है ही नहीं। यह लोकभाषा की बात है, भ्रांतभाषा की बात है। आत्मभाषा में तो दोष नाम ही नहीं है कोई।

महावीर भगवान को कोई दोषित दिखता ही नहीं था। जेबकतरा भी दोषित नहीं दिखता था। कीलें ठोकी, उसका भी दोष नहीं दिखा था। उलटे उस पर करुणा आई कि इसका क्या होगा बेचारे का? जिम्मेवारी तो आई न, खुद का स्वरूप जानता नहीं। यदि स्वरूप जानता होता और मारा होता तो भगवान को उस पर करुणा नहीं आती कि वह तो ज्ञानी है। पर स्वरूप जानता नहीं है, इसलिए खुद कर्त्ता हुआ और स्वरूप यदि जानता होता तो वह अकर्त्ता था, इसलिए हर्ज नहीं था। इसलिए बात संक्षिप्त में समझ लेनी है।

लोंगकट (लम्बा रास्ता) है ही नहीं, यह शॉर्टकट (छोटा रास्ता) वस्तु है। आपको आत्मजागृति आ गई, शुरूआत हो गई, यह बहुत बड़े से बड़ा काम हो गया। एक क्षणभर 'आत्मा हूँ' ऐसा लक्ष्य नहीं बैठता किसीको, तो लक्ष्य बैठे वह तो सब से बड़ी बात हुई। उस दिन पाप भी धुल जाते हैं। इससे आपको वह लक्ष्य में रहा करता है निरंतर, चूकते नहीं।

अब कर्म का उदय ज़रा भारी हो तो वह आपको बेचैन करता है ज़रा, सफोकेशन करता है। उस घड़ी आपको बाधक नहीं होता है। आपका

आत्मा चला नहीं जाता है। पर उस घड़ी आत्मा का सुख आना बंद हो जाता है और हमें सुख आना बंद नहीं होता, हमें तो निरंतर रहा करता है। छलकता रहता है उल्टे, साथवाले को भी सुख लगता है। हमारे साथ बैठे हों न, उन्हें भी सुख लगता है। सुख छलकता ही रहता है, उतना आत्मा का सुख है, यह शरीर होने के बावजूद, यह कलियुग होने के बावजूद!

अब भूल होती है, वह दिखती है? पता चलता है सब?

और जागृति से सारे खुद के दोष, सब ही दिखता है। सामनेवाले का दोष निकालना उसका नाम जागृति नहीं है, वह तो अज्ञानी को बहुत होता है। सामनेवाले के दोष बिलकुल दिखे नहीं, खुद के दोष देखने से बिलकुल फुरसत मिले ही नहीं, उसका नाम जागृति।

इसलिए हो गए ज्ञानी

प्रश्नकर्ता : जितने विभाव हों वे सारे दोष माने जाते हैं?

दादाश्री : अब विभाव होते ही नहीं। अब जो दोष दिखते हैं न, वे मानसिक दोष दिखते हैं। मनःपर्यव को लेकर, मानसिक दोष, बुद्धि के दोष, अहंकार के दोष अर्थात् अंतःकरण के सारे दोष आपको दिखते हैं। चंदूभाई के दोष आपको दिखते हैं या नहीं?

प्रश्नकर्ता : हाँ।

दादाश्री : चंदूभाई के दोष आपको दिखे कि आप हो गए ज्ञानी। यह तो आप मुझसे अभी दसेक घंटे मिले होंगे।

यह तो मैंने आपके हाथों में, जिस हीरे की क़ीमत न आंकी जाए, ऐसा आपके हाथ में रखा है। पर वह हीरा बालक के हाथ में आने से उसकी वेल्यु ही नहीं है!

दिखें प्रपात दोष के...

प्रतिक्षण दोष दिखते हैं न?

प्रश्नकर्ता : प्रतिक्षण तो नहीं, थोड़े-थोड़े दिखते है।

दादाश्री : अभी तो प्रतिक्षण दिखेंगे। अभी तो बहुत दोष हैं। अपार हैं, पर अभी दिखते नहीं हैं। ये किसीको दस दोष खुद के नहीं दिखते हैं, दो-तीन होंगे ऐसा बोलते हैं, क्योंकि दोष दिखें तब से मोक्ष में जाने की तैयारी हो गई।

दोषों का प्रपात दिखता है न, सारा। अब जितने दिखे उतने गए। फिर दूसरे दिन उतने उत्पन्न होते रहेंगे। निरंतर बहते ही रहेंगे। जब तक निर्दोष नहीं बना देते, तब तक बहते रहेंगे। अब हल्का हुआ जाएगा!

दोष बहुत सारे दिखें ऐसा करो, कोई मेहनत कड़ी है बहुत ही!!! आपको, आपका जो स्वरूप है, वह स्वरूप और चंदूलाल अलग। चंदूलाल का कंधा थपथपाओ! चंदूलाल कुछ अच्छा करके आए हों, उस दिन कहो कि आपने तो इतनी उम्र में अच्छा लाभ उठाया, आप छूटोगे तो हमें छोड़ोगे। आप जब तक चिपटे रहोगे, तब तक हमारा निबटारा नहीं होगा। इसलिए हमें कहना चाहिए कि 'जल्दी काम पूरा करके सत्संग में जाओ।' 'चंदूभाई ऐसा करो, वैसा करो', ऐसे प्रोत्साहित करते रहना। आप तो ऊपरी हुए और 'बच्चों के साथ इतनी हाय-हाय क्यों करते हो?' ऐसा आपको कहना चाहिए। किस जन्म में बच्चे नहीं थे। कुत्ते-बिल्ली में भी, बच्चों बिना का तो एक भी जन्म गया नहीं है न। नहीं हैं, ये सच में बच्चे! ये तो लौकिक चीज़ें हैं। यह तो कोई सच्चा है?

यह तो रिलेटिव है। यह लौकी शोर मचाती है, मेरे बच्चे कितने? सौ लौकी लगी हों तो सौ के सौ तेरे बच्चे! पत्ते-पत्ते पर लौकी लगती है, वैसे इन लोगों को डेढ़ वर्ष में एक-एक लौकी उगती रहती है!!! इस लौकी में भी जीव रहा हुआ है और इसमें भी जीव रहा हुआ है। उसमें एकेन्द्रिय जीव रहा हुआ है, और इसमें पंचेन्द्रिय जीव है। पर जीव तो दोनों जगहों पर रहा हुआ है न! जीव तो वैसा का वैसा ही है न!

मतलब खुद के दोष दिखते हैं न? चंदूभाई को कहना भी चाहिए कि, 'चंदूभाई ऐसा क्यों करते हो? हम आपका छुटकारा करना चाहते हैं।

आपका होगा तो हमारा होगा।' अर्थात् चंदूभाई शुद्ध होंगे तब हमारा छुटकारा होगा!

इसलिए हमें भीतर खुद को ही कहना है कि 'चंदूभाई दोष आपका ही है, इसलिए ही यह झमेला खड़ा हुआ और ऐसे आपको मिले, नहीं तो ऐसे मिलते होंगे?!' नहीं तो यों फूल चढ़ाएँ ऐसे लोग मिलते हैं। देखो न, मुझे फूल चढ़ाएँ, ऐसे लोग नहीं मिलते हैं?! हाँ?! आपको समझ में आया न?

घर में टोका जाए, कौन-सी भूलों को?

जीवन सारा बिगड़ गया है, ऐसा जीवन नहीं होना चाहिए। जीवन तो प्रेममय होना चाहिए। जहाँ प्रेम हो वहाँ भूल ही नहीं निकालते। भूल निकालनी हो तो ठीक से समझाना चाहिए। उसे हम कहें, 'ऐसा करने जैसा है।' तो वह कहेगी, 'अच्छा किया मुझे कहा।' उपकार माने।

'चाय में शक्कर नहीं' कहेगा। अरे, पी जा न चुपचाप। बाद में उसे भी पता चलेगा न? वह हमें कहे उलटे कि आपने शक्कर नहीं माँगी?!' तब कहें, 'आपको पता चले तब भेजना।'

जीवन जीना नहीं आता। घर में भूल नहीं निकालते। निकालते हैं या नहीं निकालते अपने लोग?

प्रश्नकर्ता : हर रोज़ निकालते हैं।

दादाश्री : बाप की, माँ की, बच्चों की सबकी गलतियाँ निकालता है, मुआ। अपनी खुद की ही नहीं निकालता! कितना समझदार! अक्लमंद! मतलब कि ऐसी टेढ़ी जात है यह। अब समझदार हो जाना यानी कि अतिक्रमण मत करना!

कभी यों छींटा पड़ा, तो हमें तुरन्त समझ लेना चाहिए कि यह दाग़ लगा, इसलिए तुरन्त धो डालना। भूल तो होती है, नहीं होती ऐसा नहीं है, पर भूल धो डालना वह अपना काम।

प्रश्नकर्ता : पर दाग़ दिखें, ऐसी दृष्टि मिलनी चाहिए।

दादाश्री : वह दृष्टि हमें मिली है। दूसरे लोगों को तो मिली ही नहीं होती और हमें तो मिली है न कि यह भूल हुई, अपनी भूल पता चलती है। हमारी जागृति ऐसी है कि भूलें सब दिखलाती है। थोड़ी-थोड़ी दिखती हैं, जैसे-जैसे परतें हटती जाएँगी, वैसे-वैसे दिखते जाते हैं।

जब घर के लोग निर्दोष दिखें और खुद के ही दोष दिखेंगे, तब सच्चे प्रतिक्रमण होंगे।

ऐसे होते हैं कर्म चोखे!

प्रश्नकर्ता : महात्माओं की ऐसी स्टेज कब आएगी कि प्रतिक्रमण करने के ही खत्म हो जाएँगे?

दादाश्री : अटेक करना भूल गया तो फिर प्रतिक्रमण करना भूल जाएगा।

प्रश्नकर्ता : पुराने दोषों के कब तक प्रतिक्रमण करने?

दादाश्री : दोष हों तब तक। और हमारे दोषों को लेकर सामनेवाले को दु:ख हो ऐसा हो, तब ही कहना, 'चंदूलाल इनके प्रतिक्रमण करो' नहीं तो करने की ज़रूरत नहीं है।

प्रश्नकर्ता : इस जनम में ऐसे दोष नहीं किए हों, परन्तु भूतकाल में, पिछले जनम में ऐसे दोष किए हों कि जिनके प्रतिक्रमण करके उनमें से छूट जाना हो तो किस तरह करें? कब तक करें?

दादाश्री : पिछले जन्म में दोष हुए हैं, उनका किस प्रकार पता चले? जो क्लेम करता हुआ आए, उसका निवारण हो। क्लेम ही नहीं करते हों तो? इसलिए क्लेम करता हुआ आए, उसका प्रतिक्रमण करना चाहिए। दूसरे किसीको लेना-देना नहीं है। कोई मन में याद आया करता हो, जिसकी तरफ मन बिगड़ता रहता हो, उसके प्रतिक्रमण करना। जगत् सारा निर्दोष है ही, पर निर्दोष दिखता नहीं है, उसका क्या कारण है? वह हमारे

अटेकवाले स्वभाव के कारण है। हमें गालियाँ दे वह भी निर्दोष है, मार मारे वह भी निर्दोष है। नुकसान करे वह भी निर्दोष है। क्योंकि हमारा हिसाब ही है यह सब। हमारा हिसाब हमें वह वापिस देता है। वह हम वापिस फिर उसे दें तो फिर नया हिसाब बाँधते हैं। इसलिए हम 'व्यवस्थित' मानें, इसलिए बस! कह देना कि, 'लो हिसाब चोखा चुकता हो गया।' निर्दोष देखोगे, तो मोक्ष होगा। दोषित देखा, इसलिए फिर आपने आत्मा देखा ही नहीं। सामनेवाले में यदि आप आत्मा देखो तो वह दोषित नहीं है।

देखो सामनेवाले को भी अकर्त्ता

आपने कुछ कहा, तब उसे दोष दिखाई दिया, तो उसका फायदा क्या होता है?

प्रश्नकर्ता : फायदा काहे का? नुकसान ही होता है न!

दादाश्री : किस ज्ञान के आधार पर वह दोष देखता है?

प्रश्नकर्ता : उसमें ज्ञान कहाँ आया? वह तो अज्ञानता के कारण ही दोष देखता है न?

दादाश्री : हाँ, पर उसने ज्ञान लिया हो, फिर भी दोष देखता है तो? वह अपना ज्ञान ही कच्चा करता है। खुद कर्त्ता नहीं और सामनेवाले को कर्त्ता देखता है। वह खुद ही कर्त्ता होने के बराबर है। सामनेवाले को किसी अंश तक कर्त्ता देखे, इसलिए खुद कच्चा पड़ गया। ऐसा हमारा ज्ञान कहता है। फिर प्रकृति भले ही लड़े-झगड़े पर कर्त्ता नहीं देखना है। प्रकृति तो झगड़ भी पड़े!

प्रश्नकर्ता : कई बार बेहद झगड़ पड़ती है, वह क्या है?

दादाश्री : बेहद? अरे, वह तो अच्छा, मारामारी नहीं करता, इतना अच्छा कहलाता है। नहीं तो उससे आगे जाता है, बंदूक लेकर पीछे पड़े, प्रकृति तो!

हाँ, वह सब होता है, भीतर जैसा माल भरा है वैसा निकलेगा! पर कर्त्ता देखा तो हमारा ज्ञान कच्चा पड़ गया। क्योंकि यह सब परसत्ता ही करती है, आपको ऐसे ज्ञान कच्चा पड़ जाता है क्या?

प्रश्नकर्ता : हाँ, कई बार पड़ जाता है।

दादाश्री : प्रकृति झगड़े उसमें हर्ज नहीं, पर 'उसे' कर्त्ता न देखे। प्रकृति तो खुद ने ड्रॉइंग किया हो न, पिछले जन्म में फिल्म उतारी, उसके अनुसार लड़ती भी है, मारामारी भी करती है। पर हमें उसे कर्त्ता नहीं देखना है।

सारे दिन में किसीका भी कोई गुनाह हुआ नहीं होता है। जितने किसीके दोष दिखते हैं, उतनी अभी कमी है! सब आपका ही हिसाब है।

वह है एकांतिक रूप से अहंकारी

खुद के दोष दिखते हैं अब?

प्रश्नकर्ता : हाँ, वे दिखाई देते हैं।

दादाश्री : नहीं तो खुद को खुद का एक भी दोष नहीं दिखे। अहंकारी मनुष्य खुद का दोष नहीं देख सकता है। केवल बड़े-बड़े दोष समझता है कि ये दो-चार दोष हैं मुझमें, पर सारे देख नहीं सकता है!

किसीका दोष हो जाए, तो उसमें तीर्थंकर हाथ नहीं डालते थे। ये हाथ डालते हैं, उतना अहंकार है। दोषित देखनेवाला अहंकार है और दोष भी अहंकार है। दोनों अहंकार हैं!

प्रश्नकर्ता : और दोष करनेवाला भी?

दादाश्री : वह भी अहंकार है और दोषित देखनेवाला भी अहंकार है।

प्रश्नकर्ता : दोष भी अहंकार है, ऐसा क्यों कहते हैं आप?

दादाश्री : मतलब कि दोष को करनेवाला ही, बस। फिर भी दोष

करनेवाला अहंकारी नहीं भी हो। अपना ज्ञान लिया हुआ हो और पाँच आज्ञा का ठीक से पालन करता हो, उसके दोष को, दोष नहीं माना जाता क्योंकि सामने 'खुद', खुद के दोषों को देखनेवाला होता है। पर उसमें जो दोष है, वह भरा हुआ माल है, 'आपका' दोष नहीं है। ऐसी सापेक्षता है उसमें, एकांतिक नहीं है। परन्तु दोष देखनेवाला तो अहंकारी ही होता है।

प्रश्नकर्ता : यानी दादा, दोष करनेवाला अहंकारी नहीं भी होता?

दादाश्री : नहीं भी होता।

प्रश्नकर्ता : दोष देखनेवाला अहंकारी होता ही है।

दादाश्री : होता ही है एकांतिक रूप से। एकांतिक रूप से होता ही है। इस दुनिया में दोष देखनेवाला एकांतिक रूप से अहंकारी होता ही है।

महत्व है, भूल के भान का!

भूल का तुरन्त पता चले तो कोई भूल करे ही नहीं न! पर बाद में चौबीस घंटे हो जाएँ, फिर भी पता नहीं चलता।

प्रश्नकर्ता : वह तो उसके परिणाम में भुगतना आता है न, तब पता चलता है।

दादाश्री : वह तो छह महीनों बाद आता है परिणाम, खुद अपने को कुछ पता नहीं चलता।

प्रश्नकर्ता : इसमें तो दादा तुरन्त ख्याल आ गया था कि ऐसा होगा। इन भाईसाब ने कहा तो तुरन्त पता चल गया कि गड़बड़ की।

दादाश्री : नहीं, लेकिन अपने आप कुछ पता नहीं चलता।

प्रश्नकर्ता : यह अपने आप पता चल गया।

दादाश्री : उसने कहा, उसने सावधान किया इसलिए पीछे देखा। बाकी कोई 'अपने आप' होता नहीं है।

प्रश्नकर्ता : इन भाईसाब ने कहा, और तुरन्त ही मुझे स्ट्राइक हुआ, कि भूल हुई।

दादाश्री : भूल हुई, पता चलता है न? भूल हुई तो सुधारे न लेकिन! पता चल जाए तो, वह तो तुरन्त ही मिटा दे न?

प्रश्नकर्ता : हाँ।

दादाश्री : तब ठीक है। भूल तो बाहर होती ही रहनेवाली है। तुझे पता चलेगा, तो भान होता जाएगा। अपने आप ही भूल का भान हो, तब मैं कहूँ कि यह ज्ञानी है! भूल में ही चलता रहता है मनुष्य। भूल को ही सत्य मानकर चलता रहता है। फिर खुद को ज़रा वेदन आए तब फिर सोचता है कि अरे, ऐसा क्यों होता है? उसके बाद पता चलता है। बिना वेदन के पता चले तब समझना कि अब ज्ञान प्रकट हुआ है। यह ज्ञान और यह अज्ञान ऐसा भेद पड़ जाना चाहिए।

प्रश्नकर्ता : खुद की भूल पता चले, फिर भूल होनी बंद हो जाती है?

दादाश्री : बंद नहीं होती, उसका हर्ज नहीं है। पता चला यानी बहुत हो गया। भूल बंद हो या नहीं हो, उसकी तो माफ़ी ही है। भूल का पता नहीं चलता उसकी माफ़ी नहीं है। बंद नहीं हो, उसका हर्ज नहीं है। अभानावस्था को माफ़ी नहीं है। अभानावस्था के कारण भूल होती है।

प्रश्नकर्ता : ऐसी अभानावस्था कितनी ही बार उत्पन्न हुई होगी। बाकी कितनी ही तरफ अभानावस्था रहती होगी, तो वहाँ पर भूलें हुआ ही करती होंगी न?

दादाश्री : होती ही हैं पर, हुआ करती होंगी नहीं, होती ही रहती हैं!

प्रश्नकर्ता : वह अभानावस्था छूटे और भूल दिखाई दे, ऐसा किस तरह हो सकता है?

दादाश्री : वह तो जागृति आनी चाहिए।

पूरा दिन माफी माँगते रहना चाहिए। पूरा दिन माफी माँगने की आदत ही डाल देनी चाहिए। पाप ही बंधते रहते हैं। उल्टा देखने की दृष्टि ही हो गई है।

वहाँ पुरुषार्थ या कृपा?

प्रश्नकर्ता : भूल दिखे, उसके लिए तो भारी पुरुषार्थ करना पड़ता है?

दादाश्री : पुरुषार्थ नहीं, कृपा चाहिए। पुरुषार्थ से तो यहाँ पर बहुत दौड़धूप करें तब भी कुछ होता नहीं है। पुरुषार्थ की तो इसमें ज़रूरत ही नहीं है। इसलिए यहाँ तो कृपा प्राप्त कर लेनी है! यानी क्या कि दादा को खुश रखना और वे खुश कब होंगे? उनकी आज्ञा में रहें तब! वे इतना ही देखते हैं कि यह आज्ञा में कितना रहता है? फूलों का हार लाया या कुछ दूसरा किया वह नहीं देखते, हार का तो थोड़ा लाभ मिलता है। उसमें सांसारिक लाभ मिलता है और इसमें भी थोड़ा लाभ मिलता है!

सारी भूलें मिटाने के लिए या तो यज्ञ (ज्ञानी और महात्माओं की सेवा करनी, ऐसा यज्ञ) करना पड़ेगा अथवा स्व-पुरुषार्थ करना पड़ेगा। नहीं तो ऐसे-वैसे दर्शन कर जाओ तो भक्ति का फल मिलेगा लेकिन ज्ञान का फल नहीं मिलेगा। अपनी दृढ़ इच्छा है कि ज्ञानी की आज्ञा में ही रहना है, तो उनकी कृपा से आज्ञा में रहा जाएगा। आज्ञा पाले, तब आज्ञा की मस्ती रहती है। ज्ञान की मस्ती किसे रहती है कि जो दूसरों को उपदेश देता हो।

यह विज्ञान तो नक़द है, तुरन्त फल देनेवाला है। आप एक घंटा मेरी आज्ञा में रहो तो क्या हो? समाधि हो जाए!

वीतरागभाव से विनम्रता और सख्ती...

प्रश्नकर्ता : सत्संग में वह फाइलों का समभाव से निकाल की बात

निकली थी, यद्यपि विनम्रता दिखाएँ और चिकनी फाइल अधिक उछलती हो तो वहाँ विनम्रता दिखाने की ज़रूरत नहीं है। उल्टा वह अधिक टेढ़ा चलेगा।

दादाश्री : ऐसी कोई ज़रूरत होती नहीं, पर उसका जवाब निकालना नहीं आता, वह लेवल निकालना मुश्किल है।

प्रश्नकर्ता : इसे किस तरह लेवल में रखें?

दादाश्री : वह तो हर एक मनुष्य ऐसा ही कहता है, सामनेवाले की ही भूल निकालता है न! भूल खुद की ही है, पर मैंने कहा न, कि उनसे विनम्रता नहीं रखनी चाहिए। वीतराग भाव से उनके साथ रहना। सख्ती भी वीतराग भाव से होनी चाहिए।

प्रश्नकर्ता : पर वह रहना मुश्किल है न? ऐसे किस तरह रह सकते हैं?

दादाश्री : अच्छी तरह रह सकते हैं। अपना दोष नहीं हो, तो सभी रह सकता है। अपने दोष हैं, वहाँ पर कुछ भी रहा नहीं जाता। मूल में दोष ही अपना होता है। जो दूसरे पर दोष थोपने फिरता है, उसका ही दोष होता है। यह तो खुद की सेफसाइड खोजते हैं।

ये दूसरे तो अपना ही प्रतिबिंब हैं। कोई हमें कुछ कहता नहीं। अपने ही गुनाह की वजह से कहता है। हर बार आपका ही गुनाह होता है और वह आपका गुनाह समझ में नहीं आता, इसलिए दूसरों का गुनाह देखते हो। और दूसरों का गुनाह देखना, वह सबसे बड़ी अज्ञानता है। हम इतने समय से कह रहे हैं कि सारा जगत् निर्दोष है, और फिर दोष निकालें तो मूर्ख नहीं कहलाएँगे? तुझे नहीं लगता कि यह थियरी वीतराग की है?

प्रश्नकर्ता : एक्ज़ेक्ट वीतराग की थियरी!

दादाश्री : खुद के दोष देखनेवाले मनुष्य जीतकर चले गए, मोक्ष में चले गए। खुद के दोष के बिना तो कुछ भी कोई कहेगा ही नहीं हमें। इसलिए जागृत रहना।

प्रश्नकर्ता : आपके शब्द तुरन्त ही क्रियाकारी होकर खड़े रहेंगे।

दादाश्री : ये शब्द सारे क्रियाकारी ही होते है, हम यदि भीतर घुसने दें तब, घुसने ही नहीं दें, तब क्या हो?

'ज्ञान' प्राप्ति के बाद की परिस्थिति

साँप, बिच्छू, सिंह, बाघ, दुश्मन कोई भी तुम्हें दोषित नहीं दिखे, उनका दोष नहीं है ऐसा दिखे, वह दृष्टि हो गई यानी हो गया। वैसी यह दृष्टि आपको मिल गई है। आपको इस दुनिया में कोई दोषित दिखेगा नहीं।

प्रश्नकर्ता : वह दृष्टि मिल गई है।

दादाश्री : फिर यहाँ पर ही मोक्ष सुख भोगता है। यहाँ पर आनंद ही हो। किसीका दोष दिखाई दे तब तक दुःख रहता है। दूसरों के दोष दिखने बंद हुए यानी छुटकारा।

प्रश्नकर्ता : कभी गुस्सा हो जाएँ वाइफ पर, वह दोष दिखा कहलाता है?

दादाश्री : पर 'आपको' गुस्सा नहीं आता न?

प्रश्नकर्ता : मुझे, शुद्धात्मा को नहीं आता।

दादाश्री : हाँ, पर वह तो आपको अपना दोष दिखता है। आपको दिखता है न पर यह दोष?

प्रश्नकर्ता : हाँ, दिखता है।

दादाश्री : मतलब आपका दोष दिखता है पर उसका (वाइफ का) दोष नहीं दिखता न?

प्रश्नकर्ता : ना।

दादाश्री : बस, तो हमें किसीका दोष नहीं दिखना चाहिए। आपका दोष, चंदूभाई का दोष दिखे, पर अन्य किसीका दोष नहीं दिखना चाहिए।

प्रश्नकर्ता : जब गुस्सा आया, तब उसका (वाइफ का) दोष दिखा, इसलिए गुस्सा आया न?

दादाश्री : नहीं, वह तो उसका दोष दिखा, इसलिए आप कहते हो कि चंदूभाई दोषित हैं, पर आपको वाइफ दोषित नहीं दिखती। आपको उसका दोष नहीं दिखता है, चंदूभाई का दोष दिखता है। अर्थात् आपका खुद का दोष निकालते हो कि 'भाई, यह तो चंदूभाई का ही दोष है। खुद का ही दोष है यह तो!' समझ में आया न?

प्रश्नकर्ता : गुस्सा हो जाने के बाद फिर ऐसा लगता है।

दादाश्री : वह हो जाने के बाद भी चंदूभाई दोषित लगते हैं न आपको?

प्रश्नकर्ता : हाँ।

दादाश्री : तभी गुनाह कहलाता है न! ऐसा होने के बाद ही गुनाह कहलाता है। सामनेवाले का दोष नहीं दिखा, खुद का दोष दिखा यानी चंदूभाई का दोष आपको दिखता है। चंदूभाई गुनहगार है, ऐसा आपको लगता है।

प्रश्नकर्ता : हाँ, दादा। ऐसा ही होता है।

दादाश्री : चंदूभाई को वह (वाइफ) गुनहगार है ऐसा लगता है, पर आपको चंदूभाई गुनहगार है ऐसा लगता है। चंदूभाई ने इनका दोष देखा और इनके साथ गुस्सा किया, इसलिए चंदूभाई गुनहगार है, ऐसा लगता है आपको।

प्रश्नकर्ता : मेरे नौकर को दो-तीन आवाज़ें देकर जगाया, लेकिन उसने जवाब नहीं दिया। वह जाग रहा था। उसके ऊपर खूब क्रोध आया तो उसका क्या करना चाहिए?

दादाश्री : क्रोध आया, फिर आपको दोष दिखा क्या?

प्रश्नकर्ता : दोष तो दादा, पहले दिखा, बाद में ही क्रोध आएगा

न?

दादाश्री : हाँ, यानी क्रोध आया, पर फिर बाद में तो ऐसा लगा कि इसका दोष नहीं है। इसलिए, आपको अपनी भूल दिखी।

प्रश्नकर्ता : तुरन्त नहीं लगा।

दादाश्री : बाद में भी, वह उसने भूल नहीं की, यानी यह भूल खुद ने की थी, ऐसा लगा। उसने भूल की होती तो खुद का दोष दिखता ही नहीं!

प्रश्नकर्ता : ऐसा तो हमारे यहाँ रोज़ होता है! गुस्सा आ ही जाता है।

दादाश्री : तब तो आपको प्रतिक्रमण करना पड़ेगा। पर किसलिए प्रतिक्रमण? पछतावा करने का कारण? उसने ऐसा किया किसलिए? तब कहें, उसने जो किया वह आपके कर्म का उदय है। इसलिए उसने यह भूल की। कोई भी मनुष्य भूल करता है, वह आपके निमित्त से ही करता है। इसलिए आपके ही कर्म का उदय है और उसने भूल की। इसलिए आपको फिर पछतावा कर लेना चाहिए। आपको गुस्सा होने की ज़रूरत नहीं थी, यहाँ इस जगह पर। ऐसे ही पछतावा नहीं किया जाता। गुनाह दिखता हो पर साबित नहीं हो, तब तक पछतावा किस तरह हो? वह तो साबित होना चाहिए कि भाई, खुद के ही कर्म का उदय है। ऐसी समझ होनी चाहिए उसे।

अभी कोई मुझे धौल मारे तो मैं तो तुरन्त उसे आशीर्वाद दूँ। उसका क्या कारण? वह धौल मारता है? इस दुनिया में कोई धौल मार नहीं सकता। पहले तो मैंने इनाम रखा था, आज से तीस साल पहले, इन्डिया में इनाम रखा था कि मुझे कोई भी आदमी एक धौल मारेगा उसे पाँच सौ रुपये नकद दूँगा। पर कोई धौल मारनेवाला निकला ही नहीं। कोई दुःखी हो कि 'भई, दुःख का मारा तू यहाँ उधार ढूंढे, उसके बजाय यह ले जा न!' तब वह कहे, 'ना बाबा, उधार ढूंढना अच्छा, पर आपको धौल मारकर मेरी क्या दशा होगी?!'

यह दुनिया बिलकुल नियम से चलती है। भगवान नहीं चलाते फिर भी स्ट्रोंग नियम अनुसार है। भगवान की हाज़िरी से चलती है यह। इसलिए कोई भी आपके साथ दोष करे तो वह आपका ही प्रतिघोष है। दुनिया में किसीका दोष होता ही नहीं है। मुझे सारे जगत् के जीव मात्र निर्दोष ही दिखते हैं। ये जो दोषित दिखते हैं, वही भ्रांति हैं। अपना विज्ञान ऐसा कहता है कि किसी भी मनुष्य का दोष दिखे, तो वह आपका दोष है। आपके दोष का वह रिएक्शन (प्रत्याघात) आया है। आत्मा भी वीतराग है और प्रकृति भी वीतराग है। पर आप जैसा दोष निकालोगे उतना उसका रिएक्शन आएगा।

तब दोष हों, वे डिस्चार्ज रूप...

सभी निर्दोष ही हैं। दोषित दिखता है, वही अपना दोष है। किसी जीव का दोष है ही नहीं। ऐसा दिखा तो ज्ञान कहलाता है, पर ऐसा दिखता नहीं न?

प्रश्नकर्ता : दोषित देखना नहीं है, फिर भी दोषित दिखे, वह डिस्चार्ज कहलाता है न?

दादाश्री : डिस्जार्च। डिस्चार्ज टु बी हैबिच्युएटेड। खुद की सत्ता नहीं वह हैबिच्युएटेड कहलाता है।

प्रश्नकर्ता : दोषित दिखे, तो वह डिस्चार्ज किस तरह कहलाएगा?

दादाश्री : दोषित देखने का भाव छूट गया, इसलिए डिस्चार्ज कहलाएगा न! पर वह उसने पूरी-पूरी आज्ञा पाली नहीं। वह धीरे-धीरे आज्ञा पालता जाएगा, वैसे-वैसे शुद्ध हो जाएगा। तब तक उसका प्रतिक्रमण करना पड़ेगा।

प्रश्नकर्ता : पर बेसिकली ऐसा फिट हो गया है कि निर्दोष ही है। पर कभी कभार दोषित दिख जाता है।

दादाश्री : इसलिए ही उसे हैबिच्युएटेड है, कहा है न! नहीं करना

हो फिर भी हो जाता है।

प्रश्नकर्ता : हम लोगों की दृष्टि अभी भी निर्दोष क्यों नहीं होती?

दादाश्री : दृष्टि निर्दोष ही है।

प्रश्नकर्ता : निर्दोष ही दिखना चाहिए, ऐसा भाव है, पर फिर भी दूसरों के दोष दिखते हैं।

दादाश्री : दोष दिखते हैं, वे जिसे दिखते हैं न, उसे हम 'देखते' हैं, बस। बाकी, जो माल भरा हुआ है, वैसा ही निकलेगा न?

प्रश्नकर्ता : पर उसका प्रतिक्रमण करना पड़ेगा न?

दादाश्री : प्रतिक्रमण करना ही पड़ेगा न! किसलिए ऐसा माल भरा था?!

श्रद्धा से शुरू, वर्तन से पूर्ण...

यानी यह अपना ज्ञान शुद्ध ज्ञान है। समझ भी शुद्ध है। जगत् सारा निर्दोष दिखना चाहिए। पहले निर्दोष श्रद्धा में आया, अब धीरे-धीरे समझ में आएगा, ज्ञान में आएगा। खुद शुद्धात्मा ही है न! जेब काटे तब भी निर्दोष दिखना चाहिए।

जो जान लिया, वह फिर अपनी श्रद्धा में पूरा-पूरा आएगा, उसके बाद वर्तन में आएगा। मतलब कि पूरा-पूरा श्रद्धा में अभी आया नहीं है। जैसे-जैसे श्रद्धा में आता जाएगा, वैसे-वैसे वर्तन में आता जाएगा। वह सारा प्रयोग धीरे-धीरे होगा। ऐसे एकदम से तो नहीं हो सकता कुछ! पर जान लें उसके बाद वह प्रयोग में आएगा न?!

प्रश्नकर्ता : यह जाना तो बहुत समय से है ही न?

दादाश्री : ना! वह जाना नहीं कहलाता। जान लिया उसे कहते हैं कि प्रवर्तन में आए ही। अर्थात् पूर्ण रूप से जाना नहीं है। यह तो स्थूल जाना। जानने का फल क्या? तुरन्त ही प्रवर्तन में आए। मतलब कि यह

स्थूल जाना है, अभी तो उसका सूक्ष्म, सूक्ष्मतर, सूक्ष्मतम होगा, तब प्रवर्तन में आएगा।

नहीं छोड़ना कभी सत्संग 'यह'

इस सत्संग में तो मार पड़ती हो, फिर भी मार खाकर भी यह सत्संग छोड़ना मत। मरना पड़े तो भी ऐसे सत्संग में मर जाना, पर बाहर नहीं मरना। क्योंकि जिस हेतु के लिए मरा, वह हेतु उसका जोइन्ट हो जाता है। यहाँ कोई मारता नहीं न? मारे तो चला जाएगा? यह जगत् नियम सहित चल रहा है। अब इसमें किसीके दोष देखें तो क्या हो? किसीका दोष होगा क्या?

प्रश्नकर्ता : किसीका दोष नहीं होता, पर मुझे ऐसा दिखता है।

दादाश्री : जो दिखता है, वह दर्शन गलत होता है। हम एक चीज़ यहाँ से देखें, वह हो घोड़ा और बैल जैसा दिखे, तो हम, 'बैल है', ऐसा बोलते हैं। पर वहाँ जाकर पता लगाएँ तो पता चले कि घोड़ा है, तब हम नहीं समझ जाएँ कि हमारी आँखें वीक(कमज़ोर) हो गई हैं! इसलिए दुबारा, जो दिखे, वैसा पक्का ही है, नहीं मानेंगे।

प्रश्नकर्ता : आपके विज़न(दृष्टि) से किसीका दोष नहीं है, फिर भी मुझे ऐसा क्यों दिखता है?

दादाश्री : तुझे दिखता है, उसमें तू ज्ञान का उपयोग नहीं करता है न! अज्ञान को चलते रहने देता है। ये दादा के चश्मे पहने तो दोष नहीं दिखेंगे। पर तू अपने चश्मे से ही देखा करता है। नहीं तो इस जगत् में कोई दोषित है ही नहीं! यह मेरी सबसे गहरी खोज है।

मोड़नी, दोष देखने की शक्ति को

किसीका दोष ही देखना नहीं है। तब से ही सयाना हो जाता है। दोष वास्तव में किसीका है ही नहीं। यह तो बिना काम के मजिस्ट्रेट बन जाता है। खुद के दोष पूरे दिखते नहीं हैं और दूसरों के देखने को तैयार

हुए। दोष देखने की मनुष्य में शक्ति है, वह खुद के दोष देखने के लिए ही है। दूसरों के दोष देखने के लिए नहीं है। उसका दुरुपयोग होने से खुद के दोष देखने की शक्ति बंद हो गई है। दूसरों के दोष निकालने के लिए नहीं है यह। वह अपने खुद के दोष नहीं निकालेगा न? हम दूसरों के दोष निकालें तो उन्हें अच्छा लगता है?

प्रश्नकर्ता : अच्छा नहीं लगता।

दादाश्री : नापसंद व्यापार बंद नहीं करने चाहिए हमें?

'व्यवस्थित' कर्त्ता, वहाँ भूल किसकी?

जागृति रखनी है, ऐसा निश्चय होना चाहिए। भूल का प्रश्न नहीं है। अपने यहाँ भूल होती ही नहीं। भूल तो 'जिसकी' होती है, उसे फिर खुद को समझ में आता है कि यह भूल हुई, पर व्यवस्थित करता है, पर खुद निमित्त बना, इसलिए उसके आलोचना-प्रतिक्रमण-प्रत्याख्यान करने चाहिए कि, 'ऐसा नहीं होना चाहिए।' नहीं तो फिर चलेगा ही नहीं न! चीज़ ही पूरी अलग है। करता है व्यवस्थित। अपने यहाँ इसलिए किसीका दोष देखना ही नहीं चाहिए न!

इस सत्संग में किसीकी भूल देखने की दृष्टि छोड़ देना। भूल होती ही नहीं किसीकी। वह सब 'व्यवस्थित' करता है। इसलिए दोष की दृष्टि ही निकाल देनी चाहिए। नहीं तो हमारा आत्मा बिगड़ जाएगा।

प्रश्नकर्ता : भूल की दृष्टि रहे, तो सीढ़ी उतर जाते हैं न?

दादाश्री : खतम हो जाता है मनुष्य! सब 'व्यवस्थित' करता है। यह ज्ञान मिलने के बाद सब व्यवस्थित के अधीन होता है।

वज्रलेपो भविष्यति...

अन्य क्षेत्रे कृतम पापम् धर्म क्षेत्रे विनश्यति,
धर्म क्षेत्रे कृतम् पापम् वज्र लेपो भविष्यति।

बाहर कोई दोष हुआ हो तो यहाँ पर नाश हो जाएगा, पर यहाँ पर

पाप किया वह ‘वज्रलेपो भविष्यति।’ इसलिए मैंने कहा, ‘धो डालना।’ तब कहे, ‘हाँ। भूल गया। अब कभी ऐसा नहीं होगा।’ मैंने कहा, ‘किसीका भी दोष देखना मत, यहाँ मत देखना, बाहर जाकर देखना। बाहर जाकर देखोगे तो यहाँ पर धुल जाएगा, पर यहाँ देखोगे तो वज्रलेप हो जाएगा। ज़रा-सा भी किसीका दोष नहीं देखना चाहिए। चाहे जैसा उल्टा करता हो, फिर भी दोष नहीं देखना चाहिए और दिख जाए तो हमें धो डालना चाहिए और नहीं तो वह वज्रलेप हो जाएगा।’

इसलिए यहाँ तो धो डालना तुरन्त ही। उल्टा विचार आया कि तुरन्त धो डालना। कोई उल्टा करे या सीधा करे, वह हमें देखने की ज़रूरत नहीं है।

यह धर्मस्थान कहलाता है। घर पर भूल की हो, तो यहाँ पर सत्संग में वह भूल मिट जाएगी। पर धर्मस्थान में भूल हुई तो निकाचित हो जाती है।

प्रश्नकर्ता : दादा के पास बैठे हों तो भी निकाचित होगी?

दादाश्री : नहीं होगी। पर उसका जो लाभ मिलता हो वह नहीं मिलेगा न! उससे लाभ मिलता हो, वह नहीं मिलता। ऐसी भूलें हो जाती हैं, इसलिए सावधान करते हैं आपको। भूल हो, उससे ज्ञान चला नहीं जाता है। सावधान करने से चोखा होता है न?

देखे दोष ज्ञानी के, उसे...

तुझे हमारा दोष दिखता है कभी?

प्रश्नकर्ता : ना।

दादाश्री : कभी भी नहीं? और यह पहली बार इस बेचारे को हमारा दोष दिखता है। इसलिए हम अपरिचित व्यक्तियों को हमारे टच में नहीं रखते। बुद्धि का उपयोग करे तो दोष ही दिखेंगे लोगों को, गिर जाता है फिर। वे तो नरक में जाते हैं, नासमझ। अरे, ज्ञानी पुरुष के, जो

सारे संसार को तारें, उनमें भी दोष ढूंढ निकाले?! पर ये अपरिचित लोग, इनमें उतनी समझ नहीं है। इसलिए हम बहुत टच में नहीं रखते। एक दो घंटे रखते हैं। सिर्फ नीरुबहन को ही, उन्हें दोष नहीं दिखे, कितने ही वर्षों से साथ रहती हैं, पर एक अक्षर भर दोष नहीं दिखा! एक सेकन्ड भी दोष नहीं दिखा, वे ये नीरुबहन! वह आश्चर्य कहलाए न! तुझे कभी दिखता होगा, नहीं? कभी भी नहीं?

प्रश्नकर्ता : दादा, आपका तो यह विज्ञान, इन बातों की तो अद्‌भुतता ही है! यहाँ दोष देखने का तो कोई कारण ही नहीं है। संपूर्ण ज्ञानदशा बरतती हो जिन्हें!!

दादाश्री : ऐसा है न कि आपके जैन होते हैं न, वे अच्छे। इतना-सा बच्चा हो, वह भी कहेगा कि, 'दादा कहते हैं, वह सच है, और कुछ नहीं!' ऐसा मानते हैं सभी। और यह दूसरा सब कच्चा माल।

प्रश्नकर्ता : आप निरंतर एकदम सूक्ष्मतम में उपयोग में बरतते हैं, वहाँ दोष रहता ही नहीं न कोई? फिर आपके दोष कैसे देखे जाएँ?

दादाश्री : ऐसी समझ नहीं है न? कुछ भी समझ नहीं है।

प्रश्नकर्ता : केवलज्ञान स्वरूप बरतते हों, फिर बाहर का चाहे कैसा भी हो, श्रीमद् राजचंद्रजी ने यहाँ तक कहा है कि ज्ञानी को सन्निपात हो, तब भी उनके दोष नहीं देखने चाहिए।

दादाश्री : पर वह समझ होनी चाहिए न! समझ कोई आसान चीज़ है!

प्रश्नकर्ता : उल्टे यह पूछने में, वह बातचीत करने में विनय चूक जाते हैं, वे सब भूलें हमारी हमें धोनी होती हैं।

दादाश्री : जहाँ नहीं देखना है वहाँ वह, देख लेता है, यह अजूबा ही है न! दूसरी जगह पर दोष देखे न, तो मैं मिटा दूँ। और यहाँ दोष देखे तो कौन मिटा दे उसके? कोई मिटानेवाला ही रहा नहीं न! इसलिए मैं सावधान कर दूँ कि अरे, देख, यहाँ सावधान रहना। भीतर समझ नहीं

है न बेचारे को! किसी भी तरह की भी समझ नहीं है न! यह थोड़ा-बहुत ज्ञान दिया हो न, तो जागृति रहती है इन लोगों को। चोखा हो तो। दूसरी कुछ समझ नहीं है कि मैं क्या कर रहा हूँ! बुद्धि फँसाती है। उसका खुद को पता नहीं चलता न! बुद्धि सबको फँसाती है। नहीं देखने का हो, वह भी दिखाती है।

इस बारे में नीरुबहन को देखा मैंने। एक दिन भी उल्टा विचार ही नहीं आता। हमारे हाथों से किसीको मार रहे हों न, तब भी विचार नहीं। उसका कोई हित का कारण देखा होगा, इसलिए मारते होंगे!

प्रश्नकर्ता : और ऐसा ही होता है।

दादाश्री : अब वहाँ इनकी बुद्धि कैसे पहुँचे?

प्रश्नकर्ता : सारा, केवल करुणा और कल्याण के अलावा दूसरा कुछ यहाँ है ही नहीं।

दादाश्री : धीरे-धीरे उसका भी ठिकाने पर आ जाएगा।

प्रश्नकर्ता : इस ज्ञान में तो जगत् में भी किसीको दोषित नहीं देखना है, तो ज्ञानी पुरुष के तो दोष देखे जाते होंगे? जगत् निर्दोष देखना है। खुद की ही भूल से दोष दिखते हैं।

दादाश्री : हाँ, लेकिन ऐसा भान रहता नहीं न मनुष्य को! भान रहे, तो ऐसा करे ही नहीं न बेचारा? जोखिम उठाए ही नहीं न यह तो? बहुत बड़ा जोखिम कहलाता है न! इसलिए तो उस आदमी को बोला था कि आठ बजे से पहले आपको आना नहीं है। हम चाय पी रहे हों, डेढ़ कप पीते हों या दो कप पीते हों! तब उसकी बुद्धि बताएगी कि इतनी सारी, दो कप पीने की क्या ज़रूरत है? एक पी होती तो क्या बुरा था?

प्रश्नकर्ता : देखने जैसा तो अंदर का ही है कि चाय पीते समय आप अंदर कैसी वीतरागता में रहते हैं!

दादाश्री : ऐसी देखने की शक्ति कहाँ से लाएँ? वह तो अपने ज्ञान

से भीतर ठंडक रहती है, इतना ही अच्छा है न!

प्रश्नकर्ता : आप तो कहते हैं न कि एक क्षण भर के लिए भी हमारा मोक्ष का ध्येय हम चूकते नहीं हैं।

दादाश्री : एक मिनट भी, एक क्षण भी नहीं चूका जाता।

प्रश्नकर्ता : अब पूरा मोक्षमार्ग में रहना और यह व्यवहार वापस। एक-एक व्यक्ति को दु:खदायी नहीं हो, उसका रोग निकले, उतना कड़क बोलना पड़ता है, वह सब करना होता है।

दादाश्री : फिर लुटेरों की दो कहानियाँ भी पढ़ते हैं हम।

प्रश्नकर्ता : वह भी करना और मोक्ष नहीं चूकना है।

दादाश्री : लुटेरों की दो कहानियाँ भी पढ़ते हैं हम। वह किताब हाथ में आई हो तो उसे पूरी करते हैं। पेपर पढ़ने की फाइल का भी निकाल करते हैं और यह कहता है, 'हमें काम ज़्यादा है!' लो, ये कामवाले आए! यहाँ पानी रखा हो न तो, यहाँ धराते हैं मुझे, मुझे नहीं पीना हो फिर भी! वे समझते हैं कि यह हो गया काम! मुझे नहीं पीना हो फिर भी धराते हैं। मैं कहूँ कि 'ना, अभी नहीं।' उसे वे काम मानते हैं।

हम जो 'कर्म नहीं बंधते' ऐसा कहते हैं न, तो पाँच आज्ञा पालता हो अस्सी प्रतिशत तब। नहीं तो कर्म बंधेंगे ही। आज्ञा नहीं पालें, तब कर्म बंधेंगे ही। मेरे पास सारा दिन बैठे रहें, फिर भी कुछ नहीं होगा। और मुझसे छह महीनों तक नहीं मिला, पर आज्ञा पालता हो, तो उसका कल्याण हो जाएगा। बाकी, यहाँ तो सभी को ठंडक लगती है न, इसलिए सभी बैठे ही रहते हैं न! कुत्ता भी यहाँ से खिसकता नहीं है, मुआ! मारे तो भी वापस आकर बैठता है। हम औरंगाबाद गए थे, वहाँ एक कुत्ता मेरे पास से खिसकता ही नहीं था।

सरल को ज्ञानी कृपा अपार

मोक्षमार्ग हाथ में आने के बाद जैसा आपसे दौड़ा जाता है, वैसा इनसे

नहीं दौड़ा जाता। यह तो सारा फिर प्रमादी खाता। हमें उठाने पड़ते हैं। इसलिए ये हैं तो, बिल्ली के बच्चों जैसे हैं। बिल्ली को अपने बच्चे खुद उठाकर घूमना पड़ता है, और आप बन्दर के बच्चे जैसे हो। आप पकड़कर रखते हो, छोड़ते नहीं हो, चौकस! डिज़ाइन यानी डिज़ाइन! और इनको तो हमें उठाना पड़ता है! क्योंकि उनकी सरलता देखकर हम खुश होते हैं। और खुश होते हैं इसलिए उठाकर फिरते हैं।

सरलता तो सबकुछ खुला कर देती है। अलमारियाँ खोल डालते हैं। लो साहब, देख लो। कहेंगे कि, 'हमारे पास यह माल है।' और असरलता यानी एक ही अलमारी खोलते हैं। दूसरा तो, कहोगे तो उघाड़ेंगे, वर्ना नहीं उघाड़ेंगे। और ये तो कहने से पहले ही सब उघाड़ देते हैं। सरलता आप समझे?!

गुण देखने से गुण प्रकटें

और सामनेवाले का गुण देखा कि गुण उत्पन्न होगा। बस! हम गाली दें और कोई न बोले, इसलिए हम समझें कि इसमें कितने अच्छे गुण हैं! तब हमारे में वे गुण उत्पन्न होंगे। और किसीका दोष है ही नहीं इस दुनिया में। खुद के दोष से ही है यह सब!

निजकर्म यानी निजदोष

यह करम-करम गाते हैं, लेकिन करम क्या है, उसका उनको भान नहीं है। खुद के कर्म यानी निजदोष। आत्मा निर्दोष है, पर निजदोष को लेकर बंधा हुआ है। जितने दोष दिखते जाएँ, उतनी मुक्ति अनुभव में आती है। किसी-किसी दोष के तो लाख-लाख परतें होती हैं, इसलिए लाख-लाख बार देखें, तब वे निकलते जाते हैं। दोष तो मन-वचन-काया में भरे हुए ही हैं। हमने खुद ज्ञान में देखा है कि जगत् किससे बंधा है। मात्र निजदोष से बंधा है। निरा भूलों का भंडार अंदर भरा पड़ा है। प्रतिक्षण दोष दिखें तब काम हुआ कहलाता है। यह सब माल आप भरकर लाए हो, वह पूछे बिना का ही है न? शुद्धात्मा का लक्ष्य बैठा, इसलिए भूलें दिखती हैं। फिर भी भूलें नहीं दिखें, वह तो निरा प्रमाद कहलाएगा।

शुद्ध उपयोग, आत्मा का

आत्मा का शुद्ध उपयोग यानी क्या? उसकी तरफ से बेध्यान नहीं होना चाहिए। पाव घंटा झोंका आया हो तो पतंग की डोर अंगूठे से लपेटकर झोंका खाना। उसी तरह आत्मा के बारे में ज़रा भी अजागृति नहीं रख सकते। इस मन-वचन-काया के दोष तो प्रतिक्षण दिखने चाहिए। इस दूषमकाल में दोष के बिना काया ही नहीं होती। जितने दोष दिखे उतनी (ज्ञान की) किरणें बढ़ी कहलाएँगी। इस काल में यह अक्रम ज्ञान तो गज़ब का प्राप्त हुआ है। आपको केवल जागृति रखकर भरे हुए माल को खाली करना है, धोते रहना है।

अनंत भूलें हैं। भूलों के कारण नींद आ जाती है। नहीं तो नींद कैसी? नींद आए, उसे तो बैरी माना जाता है। प्रमादचर्या कहलाता है! शुभ उपयोग में भी प्रमाद को अशुभ उपयोग कहते हैं। ज्ञानी पुरुष तो एक ही घंटा सोते हैं। निरंतर जागृत रहते हैं। खुराक कम हो गया हो, नींद कम हो गई हो, तब जागृति बढ़ती है। नहीं तो प्रमादचर्या रहती है। नींद खूब आए तो वह प्रमाद कहलाता है। प्रमाद तो आत्मा को गठरी में बांधने के बराबर है। जब नींद घटे, खुराक घटे, तब समझना कि प्रमाद घटा। भूल खत्म हो, तब उसके चेहरे पर लाइट आती है। सुंदर वाणी निकलती है, लोग उसके पीछे फिरते हैं। भूल नहीं ही है, ऐसा यदि मानकर बैठे रहें, तो फिर भूल दिखेगी ही कहाँ से? फिर आराम से सोते रहते हैं। हमारे ऋषि-मुनि सोते नहीं थे। बहुत जागृत रहते थे।

भूलें, उजाले की...

स्थूल भूलें तो आमने-सामने टकराव होते हैं, तब बंद हो जाती हैं। पर सूक्ष्म, सूक्ष्मतर, सूक्ष्मतम भूलें इतनी सारी होती हैं कि वे जैसे-जैसे निकलती जाती हैं, वैसे-वैसे मनुष्य की सुगंध आती जाती है। ये भूलें तो अँधेरे की भूलें हैं। इसलिए खुद को दिखती नहीं हैं। वह तो ज्ञानी पुरुष प्रकाश फेंके, तब दिखती हैं। इससे तो उजाले

की भूलें अच्छी। इलैक्ट्रिसिटीवाली होती हैं, वे खुद को तुरन्त दिखती हैं।

प्रश्नकर्ता : इलैक्ट्रिसीटीवाली भूलें क्या हैं?

दादाश्री : वे सारी खुली भूलें अकुलाहट देकर चली जाती हैं। उनसे जागृत ही रहा जाता है। वह अच्छा कहलाता है। जब कि अँधेरे की भूलें तो किसीको दिखती ही नहीं। उसमें खुद ही प्रमादी होता है, अपराधी होता है और दिखानेवाला भी नहीं मिलता। जब कि इलैक्ट्रिसीटीवाली भूलें तो कोई बतानेवाला भी मिल जाता है। खुद की भूलें खुद को चुभें, उसे हम इलैक्ट्रिसीटीवाली भूलें कहते हैं और अँधेरे की भूलें यानी खुद की भूलें, खुद को नहीं चुभतीं। जो भूलें चुभें, वे तो तुरन्त ही दिख जाती हैं, पर जो नहीं चुभतीं वे तो नज़र से निकल जाती हैं। अँधेरे की भूलें और अँधेरे की बात, उससे तो कठोर मनुष्य की उजाले की भूलें अच्छी, फिर भले ही थोकबंद हों। जब अप्रिय अवस्थाएँ आई हों, कोई मारे पत्थर से, तब भूलें दिखती हैं। स्ट्रोंग परमाणुवाली भूलें हों, वे तुरन्त ही दिखाई देती हैं, ऐसा व्यक्ति बहुत सख्त होता है। जिस तरफ घुसे, उस तरफ वह डूब जाता है। संसार में घुसे तो उसमें डूब जाता है और ज्ञान में घुसे तो उसमें डूब जाता है।

प्रकटे केवलज्ञान, अंतिम दोष जाने पर

'मुझमें भूल ही नहीं है' ऐसा तो कभी भी नहीं बोल सकते, बोल ही नहीं सकते। 'केवल' होने के बाद ही भूलें नहीं रहतीं। भगवान महावीर को केवलज्ञान उपजा, तब तक दोष दिखते थे। भगवान को केवलज्ञान उपजा, वह काल और खुद के दोष का दिखाई देने बंद होने का काल, एक ही था! वे दोनों ही समकालीन थे। अंतिम दोष का दिखाई देना और इस तरफ केवलज्ञान प्रकट हो जाना, ऐसा नियम है। जागृति तो निरंतर बनी रहनी चाहिए। यह तो दिन में भी बोरे में आत्मा बंद रखे तो कैसे चलेगा। दोषों को देखकर धोने से आगे बढ़ सकते हैं, प्रगति होती है, नहीं तो फिर भी आज्ञा में रहने से लाभ तो है, उससे आत्मा की सँभाल रहती है।

जागृति के लिए सत्संग और पुरुषार्थ चाहिए। सत्संग में रहने के लिए पहले आज्ञा में रहना चाहिए।

अँधेरे की भूलें...

अरे, मन में दी गई गाली या अँधेरे में किए गए कृत्य भयंकर हैं! वह समझता है कि, 'मुझे कौन देखनेवाला है और कौन इसे जाननेवाला है?' अरे, यह नहीं है अंधेरनगरी। यह तो भयंकर गुनाह है! इन सभी को अँधेरे की भूलें ही परेशान करती है।

'मैं जानता हूँ', वह अँधेरे की भूल तो बड़ी भारी भूल और फिर 'अब कोई हर्ज नहीं है', वह तो मार ही डालता है। यह तो ज्ञानी पुरुष के अलावा कोई बोल ही नहीं सकता कि 'मुझमें एक भी भूल नहीं रही।' हर एक भूल को देखकर मिटाना है। हम 'शुद्धात्मा' और बाहर के बारे में 'मैं कुछ जानता नहीं' ऐसा रखना, इससे कोई परेशानी नहीं आएगी। पर, 'मैं जानता हूँ' ऐसा रोग तो पैठना ही नहीं चाहिए। हम तो 'शुद्धात्मा'। शुद्धात्मा में एक भी दोष नहीं होता, पर चंदूभाई में जो-जो दोष दिखें, वैसे-वैसे उनका निकाल करना। अँधेरे की भूलें और अँधेरे में दबी हुई भूलें नहीं दिखतीं। जैसे-जैसे जागृति बढ़ती है वैसे-वैसे अधिक और अधिक भूलें दिखती हैं। स्थूल भूलें भी मिट जाएँ तो आँखों की लाइट बदल जाती है! अँधेरे में भरी गई भूलें, अँधेरे में कहाँ से दिखेंगी? भूलें जैसे-जैसे निकलती जाती हैं, वैसे-वैसे वाणी भी ऐसी निकलती जाती है कि कोई दो घड़ी सुनता रहे!

दादा 'डॉक्टर' दोषों के

भूलें तो बहुत ही हैं, वह यदि जानें तो भूलें दिखने लगेंगी और फिर भूलें कम होती जाएँगी। हम सबके दोष थोड़े ही देखते रहते हैं? ऐसी हमें फुरसत भी नहीं होती। वह तो बहुत पुण्य इकट्ठा हो, तब आपके दोष दिखलाते हैं। इन दोषों से भीतर भारी रोग पैदा होता है। पुण्य जागे, तब हम सिद्धिबल से उसका ऑपरेशन करके निकाल देते हैं। ये डॉक्टर करते हैं, उस ऑपरेशन से तो लाख गुना मेहनत हमारे ऑपरेशन में होती है!

दोष निकालने का कॉलेज

हँसते-खेलते दोष निकालने का कॉलेज ही यह है! नहीं तो दोष तो बिना राग-द्वेष के जाते नहीं। हँसते-खेलते चलता है यह कॉलेज, वह भी एक आश्चर्य ही है न! अक्रम का आश्चर्य है न!

प्रश्नकर्ता : आपके शब्द ऐसे निकलते हैं कि दोष निकलता जाता है वहाँ से। यहाँ से शब्द ऐसे निकलते हैं कि दोष वहाँ झड़ जाता है।

दादाश्री : झड़ जाता है न? ठीक है।

अब आपको दोष दिखता है यह आपको कैसे पता चले? तब कहें, चंदूभाई गुस्सा करे, वह आपको पसंद नहीं आता। वह समझ में आया कि इस चंदूभाई में यह दोष था। पकड़ा गया दोष। वे दोष आपने देखे। चंदूभाई में जो दोष थे वे आपने देखे। 'देखा नहीं निजदोष तो तरिये कौन उपाय?' निजदोष देखने की दृष्टि उत्पन्न हो गई यानी परमात्मा होनी की तैयारी हुई, कहते हैं। और निजदोष तो किसीको भी नहीं दिखते। अहंकार है तब तक एक-एक अणु में दोष है। भ्रांति जाए तब पता चलता है कि ओहोहो! चंदूभाई क्रोध करते हैं। वह हमें पसंद नहीं आता। चंदूभाई ऐसा करते हैं, वह चंदूभाई का दोष पकड़ में आया। पकड़ में आते हैं या नहीं पकड़ में आते दोष सारे?

प्रश्नकर्ता : पकड़ में आते हैं। पर दादा, आपका वाक्य अच्छा लगा था। दोष दिखा और गया। दिख गया इसलिए गया।

दादाश्री : दोष दिखा इसलिए गया। इसीलिए तो शास्त्रकारों ने कहा, महावीर भगवान ने कहा था कि तू दोष को देख ले। दोष में एकाग्रता होने से, उतना देखा नहीं और अँधा बना रहा, इसलिए दोष तुझसे चिपटा। अब उस दोष को तू देखेगा तो चला जाएगा। अब वह दावा क्या करता है? वह पुद्‌गल हमसे कहता है कि आप तो शुद्धात्मा हो गए, मेरा क्या? तब हम कहें, 'अब मेरा और तेरा क्या लेना-देना?' तब कहे, 'नहीं, ऐसा नहीं चलेगा। आपने मुझे बिगाड़ा था। यह जैसा था, वैसा कर दो। नहीं तो आपका

छुटकारा नहीं होगा।' तब कहें, 'किस तरह छुटकारा हो?' तब कहें 'जिस अज्ञानता से आपने देखा, उससे हम बंधे आपके साथ और ज्ञान से देखो, तो हम छूट जाएँगे।' इसलिए ज्ञान के द्वारा दोष देखे बिना वह दोष जाएगा नहीं। अज्ञान से बाँधे गए, ज्ञान के द्वारा छूटते हैं। इसलिए हमने देखे। ज्ञान यानी देखना, देखा वह छूट गया। फिर चाहे कैसा भी हो। और फिर भी अक्रम विज्ञान है... क्रमिक में सारा मार्ग समझदारीवाला होता है। छोड़ते-छोड़ते आया होता है और यहाँ तो छोड़ते-छोड़ते नहीं आया है। इसलिए किसीको दु:ख हो, ऐसा बोल गए हों चंदूभाई, तो चंदूभाई से कहना कि, 'प्रतिक्रमण करो, क्यों ऐसा करते हो?'

प्रश्नकर्ता : शूट एट साईट, तुरन्त ही?

दादाश्री : हाँ, पूरा दिन नहीं, पर वह तो लगता है हमें कि, 'यह दोष, यह सामनेवाले को दु:ख हो ऐसा बोला है' उसका प्रतिक्रमण करना और वह करते हैं हमारे महात्मा। शुद्धात्मा को प्रतिक्रमण क्या करना? जो अतिक्रमण करता ही नहीं है, उसे प्रतिक्रमण क्या करना? यह तो जिसने किया उसे कहना कि आप करो। पूरा सिद्धांत याद रखना पड़ेगा यह तो। और रहता भी है, लिखे तो भूल जाए। पूरा सिद्धांत याद रहता है न? हाँ... उनसे उम्र के कारण थोड़ा कम आया जाता है फिर भी सब याद, लक्ष्य में रहनेवाला है सभी। हमें तो काम से काम है न? छूटने से काम है न हमें?

प्रश्नकर्ता : मुझे तो आपकी एक बात बहुत अच्छी लगी थी, औरंगाबाद में बोले थे वह।

दादाश्री : हाँ।

प्रश्नकर्ता : कि मेरे प्रतिक्रमण तो दोष होने से पहले हो जाते हैं। दोष होने से पहले आपके प्रतिक्रमण पहुँचते हैं।

दादाश्री : हाँ, ये प्रतिक्रमण शूट ओन साइट। दोष होने से पहले शुरू ही हो जाते हैं अपने आप। हमें भी पता ही नहीं चलता कि कहाँ से खड़ा हो गया! क्योंकि जागृति का फल है।

आवरण टूटने से दोष दिखें

भूलें नहीं दिखती थीं। आत्मा प्रकट नहीं हुआ था, इसलिए भूलें नहीं दिखती थीं। यह तो अब इतनी सारी भूलें दिखती हैं, उसका क्या कारण है? आत्मा प्रकट हुआ है।

प्रश्नकर्ता : शुरूआत में हमें जब भूलें नहीं दिखती थीं, तब क्या हमें आत्मा प्रकट नहीं हुआ था?

दादाश्री : हुआ था। पर धीरे-धीरे ये भूलें दिखें ऐसा मैं करता था, आवरण तोड़ता था।

जितने दोष उत्पन्न होते हैं, उतने दोष दिखे बिना जाते नहीं, यदि दिखे बिना गए तो यह अक्रमविज्ञान नहीं है। ऐसा यह विज्ञान है। विज्ञान है यह तो!

दोष प्रतिक्रमण से धुलते हैं। किसीके साथ टकराव में आए, इसलिए फिर से दोष दिखने लगते हैं और टकराव नहीं होता तो दोष ढँका हुआ रहता है। पाँच सौ-पाँच सौ दोष रोज़ के दिखाई देने लगें, तो समझना कि अब पूर्णाहुति पास में आ रही है।

प्रश्नकर्ता : पर दादा, यह ज्ञान लेने के बाद, अपनी जागृति ऐसी आती है, अपने खुद के दोष दिखते हैं, खूब सारे पाप दिखते हैं और उसकी घबराहट होती है।

दादाश्री : उसकी घबराहट रखने से क्या फ़ायदा? देखनेवाला, होली देखनेवाला मनुष्य जलता है क्या!

प्रश्नकर्ता : ना।

दादाश्री : होली जलती है, पर होली देखनेवाला जलता है क्या! वह तो चंदूभाई को हो, तब कंधा थपथपाना कि भाई, होता है ऐसा। किया है इसलिए होता है, कहें।

प्रश्नकर्ता : पर वह गर्मी लगती है न दूर से भी, दादा!

दादाश्री : हाँ, लगती है, लगती है।

प्रश्नकर्ता : इतने सारे पाप किए हैं दादा, कब छुटकारा मिलेगा, ऐसा होता है!

दादाश्री : हाँ, वे बेहिसाब, अपार दोष किए हुए हैं!

प्रश्नकर्ता : और वे जब दिखते हैं, तब ऐसा होता है कि ये दादा नहीं मिले होते तो हमारा क्या होता?

दादाश्री : पाप खुद का दिखा, तब से ही समझो कि अपनी कोई डिग्री हुई है! इस जगत् में कोई खुद का पाप देख नहीं सकता है। कभी भी दोष देख नहीं सकता है। दोष देखे तो भगवान हो जाए।

प्रश्नकर्ता : पत्नी के, किसीके दोष नहीं दिखे, ऐसा करो।

दादाश्री : नहीं, दोष तो दिखेंगे, वे दिखते हैं इसलिए तो आत्मा ज्ञाता है और वे ज्ञेय हैं।

प्रश्नकर्ता : पर दोष दिखें नहीं, ऐसा नहीं हो सकता?

दादाश्री : नहीं! नहीं दिखें तब तो आत्मा चला जाए, आत्मा है तो दोष दिखते हैं। पर दोष नहीं हैं, ज्ञेय हैं वे।

वीतरागों की निर्दोष दृष्टि

वीतरागों की कैसी दृष्टि! किस दृष्टि से उन्होंने देखा कि जगत् निर्दोष दिखा!! हें साहब!! हम वीतरागों से पूछें कि साहब, 'आपने तो कैसी, किन आँखों से ऐसा देखा कि यह जगत् आपको निर्दोष दिखा?' तब वे कहेंगे, 'वह ज्ञानी को पूछना, हम आपको जवाब देने नहीं आएँगे।' डिटेल में, ब्यौरेवार ज्ञानी से पूछना। मैंने देखा, वह उन्होंने तो देखा, पर मैंने भी देखा वह!

प्रश्नकर्ता : अर्थात् दादा, निर्दोष जानना, निर्दोष मानना नहीं ऐसा? और दोषित जानना ऐसा?

दादाश्री : अपने ज्ञान में दोषित नहीं, निर्दोष ही जानना है। दोषित कोई होता ही नहीं। दोषित भ्राँत दृष्टि से है। भ्राँत दृष्टि दो भाग करती है। यह दोषित है और यह निर्दोष है। यह पापी है और यह पुण्यवान है। और इस दृष्टि से एक ही है कि निर्दोष ही है। और वहाँ ताला लगा दिया। बुद्धि को, वह बोलने का स्कोप ही नहीं रहा। बुद्धि को दख़ल देने का स्कोप ही नहीं रहा। बुद्धिबहन वहाँ से वापिस लौट जाती हैं कि 'अपना अब चलता नहीं। घर चलो।' वह कोई थोड़े ही कुँवारी है? विवाहित थी इसलिए अपने वहाँ जाती है वापिस। ससुराल चली जाती है बहन!

दोषित दृष्टि को भी तू 'जान'

प्रश्नकर्ता : यानी दादा, दोषित भी नहीं मानना, निर्दोष भी नहीं मानना, पर निर्दोष जानना।

दादाश्री : जानना सभी है। दोषित नहीं जानना। दोषित जानें, वह तो हमारी दृष्टि बिगड़ी है और दोषित के साथ 'चंदूभाई' जो करते हैं, वह 'हमें' देखते रहना है। 'चंदूभाई' को 'हमें' रोकना नहीं है।

प्रश्नकर्ता : वह क्या करता है उसे देखते रहना है?

दादाश्री : बस, देखते रहो। क्योंकि वह दोषित के साथ दोषित अपने आप माथापच्ची कर रहा है, पर यह 'चंदूभाई' भी निर्दोष है और वह भी निर्दोष है। दोनों लड़ते हैं, पर दोनों ही निर्दोष हैं।

प्रश्नकर्ता : मतलब, चंदूभाई दोषित हो, तब भी उसे दोषित नहीं मानना है। उसे दोषित की तरह जानना है?

दादाश्री : जानना है। वह तो जानना ही चाहिए न?

प्रश्नकर्ता : और सूक्ष्म दृष्टि से वह निर्दोष ही है।

दादाश्री : सूक्ष्म दृष्टि से वह निर्दोष ही है, पर चंदूभाई का आपको जो कुछ करना हो वह करना। बाकी जगत् के संबंध में निर्दोष मानने का मैं कहता हूँ। चंदूभाई को आपको टोकना पड़े कि 'ऐसे चलोगे तो नहीं

चलेगा।' उसे शुद्ध फूड देना है। अशुद्ध फूड से यह दशा हुई है, इसलिए शुद्ध फूड से इसका निबटारा लाने की ज़रूरत है।

प्रश्नकर्ता : वह कुछ आड़ा-टेढ़ा करे, तो प्रतिक्रमण करने को कहना पड़ेगा?

दादाश्री : हाँ, वह सब कहना पड़ेगा। 'आप नालायक हो' कहें। ऐसा भी कह सकते हैं। अकेले चंदूभाई के लिए, अन्य के लिए नहीं। क्योंकि आप की फाइल नंबर वन, आप की खुद की, दूसरों के लिए नहीं।

प्रश्नकर्ता : यानी फाइल नंबर वन दोषित हो तो उसे दोषित मानें, उसे डाँटें?

दादाश्री : सभी तरह से डाँटना। प्रिज्युडिस भी रखना उसके प्रति कि, 'तू ऐसा ही है, मैं जानता हूँ।' उसे डाँटना भी, क्योंकि हमें उसका निबेड़ा लाना है अब!

करना नहीं है, मात्र देखना है

प्रश्नकर्ता : पर ये दूसरे कोई व्यक्ति हों, फाइल नंबर दसवीं, उसे दोषित नहीं देखना है। वह निर्दोष है ऐसा?

दादाश्री : निर्दोष! अरे, अपनी फाइल नंबर टू भी निर्दोष है! क्योंकि गुनाह क्या थे? कि सभी को दोषित देखा और इस चंदूभाई का दोष देखा नहीं। उस गुनाह का रिएक्शन आया यह। यानी गुनहगार पकड़ा गया। दूसरे गुनहगार हैं ही नहीं।

प्रश्नकर्ता : वह उल्टा देखा है।

दादाश्री : उल्टा ही देखा है। अब सीधा देखा। बात ही समझनी है। कुछ करना नहीं है। वीतरागों की बात समझनी ही होती है, करना नहीं होता कुछ। वीतराग ऐसे समझदार थे! यदि करने का हो तो मनुष्य थक जाए बेचारा!

प्रश्नकर्ता : और करे, तो वापिस बंधन आए न?

दादाश्री : हाँ, करना वही बंधन! कुछ भी करना, वह बंधन है। माला फिराई, 'मैंने किया' इसलिए बंधन। पर वह सभी के लिए नहीं है। बाहरवालों के लिए मैं कहूँगा कि माला फिराना। क्योंकि उनके वहाँ वह व्यापार है उनका। दोनों के व्यापार अलग हैं।

प्रश्नकर्ता : खुद की प्रकृति दिखाई देने लगी है, सब कुछ दिखता है, मन-बुद्धि-चित्त-अहंकार सब दिखता है पर उसकी स्टडी किस तरह करनी? उसके सामने ज्ञान कैसे काम करना चाहिए? कैसी जागृति रहनी चाहिए?

दादाश्री : प्रकृति तो हमें पता ही चल जाती है। उसका हमें पता ही चल जाता है कि प्रकृति ऐसी ही है और कम पता चला हो तो दिनोंदिन समझ बढ़ती जाएगी! पर अंत में 'फुल' समझ में आएगी। इसलिए हमें सिर्फ करना क्या है कि ये चंदूभाई क्या कर रहे हैं, वह हमें देखते रहने की ज़रूरत है, वही शुद्ध उपयोग है।

प्रश्नकर्ता : खुद की प्रकृति को देखना होता है, उसमें देख नहीं पाएँ और चूक जाएँ तो वहाँ कौन सी चीज़ काम कर रही होती है?

दादाश्री : आवरण। उस आवरण को तोड़ना पड़ेगा वह तो।

प्रश्नकर्ता : वह किस तरह टूटे?

दादाश्री : अपने यहाँ विधियों से टूटता जाता है दिनों दिन, वैसे-वैसे दिखता जाता है। यह तो सब आवरणमय ही था, कुछ दिखता नहीं था, वह धीरे-धीरे दिखने लगा है। वह आवरण देखने नहीं देते हैं सबकुछ। अभी सारे दोष दिखें ऐसे नहीं हैं। कितने दिखाई देते हैं? दस-पंद्रह दिखाई देते हैं?

प्रश्नकर्ता : बहुत दिखते हैं।

दादाश्री : सौ-सौ?

प्रश्नकर्ता : चेन चलती रहती है।

दादाश्री : फिर भी पूरे नहीं दिखते। आवरण रहते हैं न फिर! बहुत दोष होते हैं। हमें, विधि करते समय भी हमसे सूक्ष्मतर और सूक्ष्मतम दोष होते रहते हैं न, जो सामनेवाले को नुकसान नहीं करे ऐसा, पर वह दोष हमसे होता है, वह पता चलता है। तुरन्त हमें उसे साफ करना पड़ता है, चले ही नहीं न? दिखें उतने तो साफ करने ही पड़ते हैं।

गेहूँ खुद के ही बीनो न!

प्रश्नकर्ता : दूसरों की प्रकृति देखने की जो आदत नहीं हो, उसे क्या कहते हैं?

दादाश्री : दूसरों की प्रकृति देखो तो दोष नहीं निकालना चाहिए। समझना है कि 'यह दोष है' पर हमें निकालना नहीं चाहिए। वे अपने खुद के दोष देखना सीखे हैं, तब फिर हमें निकालने की ज़रूरत है?

प्रश्नकर्ता : नहीं, वे अपने दोष निकालें तो हमें क्या करना चाहिए?

दादाश्री : वे हमारे दोष निकालें और फिर हम यदि उनके निकालने जाएँ तो बढ़ता जाएगा दिनोंदिन। उसके बजाय हम बंद कर दें तो किसी दिन उसे विचार आएगा कि 'ये कुछ थकते नहीं हैं, मुझे अकेले को थकाते हैं।' इससे वे थककर बंद हो जाएँगे। दूसरों का दोष निकालना, वह तो टाइम यूज़लेस(बेकार) बिताने जैसा है। खुद के अपार दोषों का ठिकाना नहीं और दूसरों के दोष देखता है। अरे भाई! तू तेरे गेहूँ बीन न। दूसरों के गेहूँ बीनता है और यहाँ घर पर तेरे बगैर बिने हुए ही पीसा करता है! क्या?

प्रश्नकर्ता : पर ऐसा होता है दादा, कि हमारे गेहूँ तो बीने हुए होते हैं, पर हम बीन रहे हों और व्यवहार जिनके साथ हो, तो वे आकर अपनेवाले में फिर बगैर बिने डाल जाते हों और हम कहें कि भाई, ऐसा नहीं करते।

दादाश्री : बगैर बिने डालता है कब, कि जब हमारे बीने बगैर के हों न, तभी डालता है। वे बीने हुए हों, तो नहीं डालते। वे तो कानून हैं सारे।

यह तो इन्द्रियगम्य ज्ञान...

प्रश्नकर्ता : नहीं, पर दादा, हम समभाव से निकाल कर रहे होते हैं किसी वस्तु का कि, 'भाई! यह वस्तु अच्छी नहीं है, कि इससे इसमें क्लेश होता है, कि इसमें इसके कारण व्यवहार बिगड़ता है।' पर सामनेवाला समभाव से निकाल करने के बजाय ऐसा कहे कि, 'मैं तो ऐसा ही करूँगा। तुझसे बने वह कर ले।' तो फिर वहाँ किस तरह व्यवहार करना चाहिए?

दादाश्री : ऐसा है न, यह सब बुद्धि की शरारत है। जहाँ परिणाम ही, जो परिणाम बदले नहीं, वहाँ देखते रहना कि परिणाम क्या आता है वह! सामनेवाले की प्रकृति देखते रहना है। अब यह शरारत कौन करता है?

प्रश्नकर्ता : पुद्‌गल?

दादाश्री : बुद्धि। नहीं तो परिणाम तो सब जो हैं उन्हें देखते रहना है हमें। देखा तो हम आत्मा हो गए और यदि दोषों को देखोगे तो प्रकृति हो जाओगे।

प्रश्नकर्ता : दादा, लोग ऐसा कहते हैं कि, 'हम तो आपकी प्रकृति की भूल निकालते हैं और हम 'उसे' देखते हैं कि यह आपकी भूल निकालता है।'

दादाश्री : नहीं, भूल निकालनेवाला देख नहीं सकता और देखनेवाला भूल निकालता नहीं। ये तो कानून होते हैं न?!

प्रश्नकर्ता : मतलब आप कहते हैं कि, भूल निकालकर कहें कि 'हम देखतें हैं, हम भूल निकालते है, देट मीन्स(उसका मतलब)...

दादाश्री : कोई भूल निकालनेवाला देख नहीं सकता है और देखनेवाला हो तो भूल निकाल नहीं सकता। उस देखने में और इस देखने में फर्क है। वह इन्द्रिगम्य देखनेवाला और यह अतिन्द्रिय है, यह ज्ञानगम्य देखनेवाला है। इसलिए उसे 'देखा' नहीं कहा जा सकता।

प्रश्नकर्ता : यदि किसीकी भी भूल निकाली, देट मीन्स...

दादाश्री : किसीकी भी भूल निकालनी वह तो सबसे बड़ा गुनाह है क्योंकि यह जगत् निर्दोष है।

और यह ज्ञानगम्य कहलाता है

प्रश्नकर्ता : पर दादा, हम इसे डिस्चार्ज की तरह देखते हैं कि यह देखो चंदूभाई गलत भूल निकाल रहे हैं किसीकी, उसे देखता है, वह क्या है तब?

दादाश्री : वह चंदूभाई जो देखते हैं भूल निकालते समय, वह देखते हैं, वह बुद्धिगम्य है।

प्रश्नकर्ता : नहीं, यानी यह चंदूभाई, चंदूभाई को देखते हैं, वह बुद्धिगम्य है?

दादाश्री : हाँ, वह बुद्धिगम्य है। और वह दूसरा ज्ञानगम्य कब कहलाता है कि किसीकी भूल निकाले नहीं और देखे तब ज्ञानगम्य कहलाता है।

प्रश्नकर्ता : हाँ, पर दादा, दैनिक व्यवहार में कभी कहना तो पड़ता है कि 'यह चीज़ ठीक नहीं है।'

दादाश्री : पर 'कहना पड़ता है' वह नियम नहीं है। कह दिया जाता है, ऐसी निर्बलता होती ही है। हम भी किसीको, मेरे साथ रहते हों न, उसे कहते हैं कि 'यह किसलिए भूल की फिर से?' ऐसा कहते हैं। पर कह दिया जाता है, क्या समझे? ऐसी थोड़ी निर्बलता भरी पड़ी होती है सभी में। मगर ऐसा हमें समझना चाहिए कि 'यह भूल हो गई, ऐसा नहीं होना चाहिए।'

.....उसे खुद ऐसा मानना चाहिए कि यह गलत है, तो भूलें निकालने की आदत, वह धीरे-धीरे डिस्चार्ज होती-होती खतम हो जाएगी। वह डिस्चार्ज हो रहा है सब।

खुद की भूलों को खुद ही डाँटे

हर एक अड़चन जो आती है न, पहले सहन करने की ताकत आती है, बाद में अड़चनें आती हैं। नहीं तो मनुष्य वहीं का वहीं खतम हो जाए। मतलब कानून ऐसे हैं सब।

प्रश्नकर्ता : दादा, वह 'व्यवस्थित शक्ति' करती है?

दादाश्री : उसका नाम ही 'व्यवस्थित'। इसलिए ऐसे संयोग खड़े होकर फिर है तो, शक्ति भी उत्पन्न होगी, नहीं तो वह मनुष्य क्या से क्या हो जाए! इसलिए किसी भी प्रकार से घबराने का कोई कारण नहीं है। अपने तो दादा हैं और मैं हूँ, बस, दूसरा कुछ नहीं है इस दुनिया में। दादा हैं और मैं हूँ, दो ही। दादा जैसी दरअसल खुमारी रहनी चाहिए। कोई बाप भी ऊपरी नहीं है ऐसा। ऊपरी के भी ऊपरी कहा, दादा को!

प्रश्नकर्ता : दादा, हमें तो हमारी भूलें अभी भी डराती हैं न?

दादाश्री : हाँ, डराएँगी।

प्रश्नकर्ता : हाँ, आपकी स्थिति तक पहुँचते-पहुँचते तो...

दादाश्री : भूलें डराती हैं न! फिर भी हम समझते हैं न, कि यह कौन डराता है? ऐसा हम जानते हैं। पर मूल तो हैं, दादा ही हैं न हम? उसमें अंतर नहीं है न? एक के एक ही हैं न? हमारे पार्टनर, वे एक बार मुझसे कहते हैं, 'दो-तीन अड़चनें अभी आई हैं, वे बड़ी भारी अड़चनें आई हैं।' मैंने कहा, 'जाओ, छत पर जाकर बोलो कि भाई, दो-तीन अड़चनें आई हैं और दादाई बैंक खोला है हमने, इसलिए दूसरे जो हों वो आ जाओ ताकि पेमेन्ट कर दूँ, कहना। क्या कहा? पहले बैंक नहीं था, इसलिए मुझे परेशानी थी। अब बैंक है मेरे पास, दादाई बैंक। जितनी भी हों, वे सब मिलकर आओ, कहना।' वे भी छत पर जाकर बोले सही, मेरे शब्द। ऊँची आवाज़ में बोले कि, 'जो हों, वो सब आ जाओ। मुझे पेमेन्ट करना है।' हाँ, भीतर हाय-हाय... जूँ पड़ें तो ऐसे कोई धोती निकालने से चलता होगा क्या? इसलिए ऐसा कहना

चाहिए कभी। अपनी छत है ही न? तो 'आ जाओ, पेमेन्ट कर दें', कहना।

तब संपूर्ण हुआ निकाल

आप ढीले हो जाएँ तो चीज़ें सभी अधिक चिपट जाती हैं। और सभी फाइलों का निकाल हो गया, तब फिर परमात्मा ही हो। आपको फाइलें हैं न?

प्रश्नकर्ता : हाँ, हाँ।

दादाश्री : ऐसा? तब ठीक है। फाइलें हैं, तभी झंझट है न!

प्रश्नकर्ता : फाइलों का निकाल कम्पलीट हो गया, ऐसा कब कहलाता है? फाइल पूर्णतया निपट गई, उसका निकाल हो गया ऐसा कब पता चलता है? ऐसा कब कहलाता है?

दादाश्री : हमारे मन में नहीं रहे उसके प्रति और उसके मन में हमारे प्रति कुछ नहीं रहे, मतलब कम्पलीट निकाल हो गया।

प्रश्नकर्ता : उसके मन में नहीं रहना चाहिए।

दादाश्री : रहे तो हमें हर्ज नहीं। हमारे मन में बिलकुल क्लियर हो जाए, तो हो गया।

प्रश्नकर्ता : यानी हमें उसके लिए विचार भी नहीं आए, ऐसा?

दादाश्री : हाँ।

प्रश्नकर्ता : विचार आने भी बंद हो जाएँ, उसके लिए?

दादाश्री : हाँ।

कहाँ तक मन चोखा हुआ

एकाध महात्मा के लिए हमारे विचार उलट-फेर हो गए। भीतर विचार हमें आते नहीं, फिर भी आने लगे उस व्यक्ति के बारे में, इसलिए

मैंने जाना कि क्या हुआ अंदर यह फिर से नया? किस कारण से उसके बारे में ये विचार आते हैं?! अच्छा आदमी है और वह बिगड़ गया है कि क्या है यह?! और फिर भीतर से जवाब मिला कि उसके उदय टेढ़े हैं। उसके उदय फेवरेबल नहीं हैं। इसलिए ऐसा दिखता है। इसलिए फिर हम कोमल मनोभाव रखते हैं। क्योंकि मनुष्य के उदय फेवरेबल होते हैं और किसीके फेवरेबल नहीं भी होते हैं। ऐसा होता है न?

प्रश्नकर्ता : होता है।

दादाश्री : वह तो जगत् में होता ही है। पर यह तो हमें टच होता हो ऐसी बात आए, तो हम एकतरफ मनोभाव कोमल कर देते हैं।

प्रश्नकर्ता : मतलब उस तरह की कोमल? वह किस तरह से कर देते हैं, कोमल मनोभाव?

दादाश्री : यानी जैसा दिखता है वैसा मानते नहीं हैं फिर। वे तो अच्छे ही हैं। ऐसा समझते हैं।

प्रश्नकर्ता : तब व्यवहार में आप फिर क्या करते हैं?

दादाश्री : निर्दोष है न! मैंने तो व्यवहार निर्दोष ही देखा हुआ है। दोषित क्यों दिखता है? इसलिए देयर आर कॉज़ेज़ (वहाँ कोई कारण है)। निर्दोष ही देखा है सब। बुद्धि से दोषित है जगत् और ज्ञान से जगत् निर्दोष है। तुम्हें हसबेन्ड निर्दोष नहीं दिखते?

प्रश्नकर्ता : दिखते हैं न!

दादाश्री : उसके बाद अब फिर गलतियाँ निकालें, उसका क्या अर्थ है? यह भूल तो सिर्फ यह पुतला उस पुतले की भूलें निकाल रहा हो, वह हमें देखते रहना है। तब यह प्रकृति देखनी है।

तब तक ऊपरी भीतरवाले भगवान

इसमें अन्य किसीका है ही नहीं, वहाँ अपनी ही भूलों का फल हमें भुगतना है। मालिकी अपनी, ऊपरी भी कोई नहीं है, भीतर बैठे हैं

वे भगवान ही हमारे ऊपरी। वही शुद्धात्मा, वही भगवान। बिना फाइल के शुद्धात्मा, वे भगवान कहलाते हैं। और फाइलवाले, वे शुद्धात्मा कहलाते हैं। देखो न, आपके फाइलें हैं न? आराम से समझ गए न तुरन्त कि फाइलवाले शुद्धात्मा, वे शुद्धात्मा कहलाते हैं।

प्रश्नकर्ता : आप जैसी स्थिति प्राप्त करनी है, दादा। सारी फाइलें हों फिर भी छूएँ नहीं।

दादाश्री : मतलब अब फाइल तक आए हैं। अब फाइल का निबटारा कर देना है बस, फिर पूरा हो गया। सारा काम समाप्त हो जाता है। न तो हिमालय में तप करने पड़े, न ही उपवास करने पड़े। हिमालय में तो तप अनंत जन्मों तक करें तब भी कुछ मिले नहीं। उलटे रास्ते, ज़रा ही उल्टा रास्ता हो, पर उस रास्ते गए तो मूल जगह नहीं आएगी। करोड़ों वर्ष तक घूमते रहें तब भी नहीं आएगी!

भिन्नता उन दोनों के जानने में

प्रश्नकर्ता : प्रकृति के गुण-दोष जो देखता है, वह देखनेवाला कौन है?

दादाश्री : वही प्रकृति है।

प्रश्नकर्ता : प्रकृति का कौन-सा भाग देखता है?

दादाश्री : वह बुद्धि का भाग है, अहंकार का भाग है।

प्रश्नकर्ता : तो फिर इसमें मूल आत्मा का क्या काम है?

दादाश्री : मूल आत्मा को क्या?! उसे लेना-देना ही नहीं है न!

प्रश्नकर्ता : मूल आत्मा का देखना-जानना किस तरह होता है?

दादाश्री : वह निर्लेप होता है और यह तो लेपित है।

प्रश्नकर्ता : यानी अच्छा-बुरा देखता है, वह लेपित भाग है?

दादाश्री : हाँ, वह सब लेपित भाग!

प्रश्नकर्ता : इस बुद्धि ने प्रकृति का अच्छा-बुरा देखा, वह जो देखता है, जानता है, वह खुद है?

दादाश्री : प्रकृति का दोष देखे, तो वह प्रकृति हो गई। आत्मा नहीं है वहाँ पर। आत्मा ऐसा नहीं है। उसे किसीका दोष नहीं दिखता है।

प्रश्नकर्ता : एक-दूसरे के दोषों की बात नहीं करते, खुद खुद के दोषों की बात करते हैं।

दादाश्री : उस समय प्रकृति ही होती है। पर वह ऊँची प्रकृति है, आत्मा को प्राप्त करानेवाली है।

प्रश्नकर्ता : और प्रकृति को निर्दोष देखता है, वह कौन देखता है?

दादाश्री : वह प्रकृति को निर्दोष देखता है, वही परमात्मा है, वही शुद्धात्मा है। दूसरे किसीमें हाथ ही नहीं डालता न!

प्रश्नकर्ता : निर्दोष देखने में उसे कैसा आनंद मिलता है?

दादाश्री : वह आनंद, वह मुक्तानंद कहलाता है न!

प्रश्नकर्ता : यानी परिणाम के बारे में कुछ बोलता ही नहीं।

दादाश्री : परिणाम को, प्रकृति के परिणाम को देखता ही नहीं।

दो प्रकार के पारिणामिक ज्ञान है। एक है, वह प्रकृति का पारिणामिक ज्ञान है और एक आत्मा का पारिणामिक ज्ञान है।

प्रश्नकर्ता : पर वह जैसा है वैसा देखने में कौन-सा स्वाद चख रहा है?

दादाश्री : वह तो उसने आंनद चख लिया होता है न, पर वह क्या कहता है, मुझे आनंद की कुछ पड़ी नहीं है, मुझे तो यह जैसा है वैसा देखने की पड़ी है। इसलिए हम क्या कहते हैं कि 'जैसा है वैसा' देखो न! वह सबसे अंतिम बात है!

उससे अंतराय...

प्रश्नकर्ता : संपूर्ण आनंद कब बरतता है? सब दोष जाने के बाद ही न?

दादाश्री : आनंद तो बरतता ही है। पर दोष हैं, वे अंतराय करते हैं। इसीलिए उसे लाभ नहीं लेने देते। आनंद तो अभी भी है, पर *गोठवणी* (सेटिंग) करते नहीं है न हम।

संपूर्ण दोष रहित दशा दादा की

खुद के दोष देखने में सुप्रीम कोर्टवाला भी नहीं पहुँच पाएँ, वहाँ तो पहुँचता ही नहीं है जजमेन्ट। वहाँ तो खुद का इतना भी दोष नहीं देख सकता है। यह तो गाड़ियाँ भर-भर के दोष जाते रहते हैं। यह तो स्थूल आवरण ज़्यादा हैं। इसलिए दोष दिखते नहीं हैं। और इतना, ज़रा-सा बाल जितना दोष होता है न, तुरन्त पता चल जाता है कि यह दोष हुआ। यानी वह कैसी कोर्ट होगी अंदर? वह जजमेन्ट कैसा? फिर भी किसीके साथ मतभेद नहीं है। गुनहगार के साथ भी मतभेद नहीं है। दिखता ज़रूर है गुनहगार, फिर भी मतभेद नहीं है। क्योंकि वास्तव में वह गुनहगार है ही नहीं। वह तो 'फ़ॉरेन' में गुनहगार है, और हमें तो 'होम' के साथ लेना-देना है। इसलिए हमें मतभेद होता नहीं है न!

दादा के स्थूल-सूक्ष्म दोनों दोष चले गए हैं। दूसरे जो सूक्ष्मतर और सूक्ष्मतम दोष रहे हें, वे जगत् को बिलकुल हानिकारक या लाभदायक नहीं होते हैं। जगत् को स्पर्श नहीं करें, ऐसे दोष होते हैं। स्थूल दोष यानी आप मेरे साथ चारेक महीने रहो न, तब भी आपको एक भी दोष नहीं दिखे, चौबीस घंटे रहो तो भी।

ये नीरुबहन हैं, वे निरंतर सेवा में रहते हैं, पर एक दोष उन्हें नहीं दिखता है। उन्हें निरंतर साथ ही रहना होता है। यदि ज्ञानी पुरुष में दोष है, तो जगत् निर्दोष किस तरह से हो सकता है?

जागृति भूलों के सामने, ज्ञानी की

हमारी जागृति 'टोप' पर की होती है। आपको पता भी न चले, पर आपके साथ बोलते समय जहाँ हमारी भूल होती है, वहाँ हमें तुरन्त पता चल जाता है और तुरन्त उसे धो डालते हैं। उसके लिए यंत्र रखा हुआ होता है, जिससे तुरन्त ही धुल जाता है। हम खुद निर्दोष हुए हैं और पूरे जगत् को निर्दोष ही देखते हैं। अंतिम प्रकार की जागृति कौन-सी कि जगत् में कोई दोषित ही नहीं दिखे, वह। हमें ज्ञान के बाद हज़ारों दोष रोज़ के दिखने लगे थे। जैसे-जैसे दोष दिखते जाते हैं, वैसे-वैसे दोष घटते जाते हैं और जैसे दोष घटते हैं, वैसे जागृति बढ़ती जाती है। अब हमारे केवल सूक्ष्मतर और सूक्ष्मतम दोष बचे हैं, जिन्हें हम 'देखते' हैं और 'जानते' हैं। वे दोष किसीको बाधारूप नहीं होते, पर काल के कारण वे अटके हैं। और उससे ही ३६० डिग्री का 'केवलज्ञान' रुका हुआ है। और ३५६ डिग्री पर आकर रुक गया है! पर हम आपको पूरा ३६० डिग्री का 'केवलज्ञान' एक घंटे में ही देते हैं, पर आपको भी वह पचेगा नहीं। अरे, हमें ही नहीं पचा न! काल के कारण चार डिग्री कम रह गया है! अंदर पूरा-पूरा ३६० डिग्री रियल है और रिलेटिव में ३५६ डिग्री है। इस काल में रिलेटिव पूर्णता तक जाया जा सके, वैसा नहीं है। पर हमें उसमें हर्ज नहीं है। क्योंकि अंदर अपार सुख बरतता रहता है।

इसलिए 'हमारा' नहीं है *ऊपरी* कोई?

जिसे जितनी भूलें नहीं दिखतीं, उसको उतनी वे भूलें ऊपरी हैं। जिसकी सभी भूलें खतम हो जाएँ, उसका कोई ऊपरी ही नहीं। मेरा कोई ऊपरी है ही नहीं, इसीलिए मैं सबका ऊपरी हूँ, ऊपरी का भी ऊपरी! क्योंकि हम में स्थूल दोष तो होते ही नहीं हैं। सूक्ष्म दोष भी चले गए हैं। सूक्ष्मतर और सूक्ष्मतम दोष होते हैं, उनके हम संपूर्ण ज्ञाता-दृष्टा होते हैं। भगवान महावीर भी यही करते थे।

इसलिए 'ज्ञानी' देहधारी परमात्मा

ज्ञानी पुरुष में देखी जा सकें, वैसी स्थूल भूलें नहीं होती हैं। इन

दोषों की आपको परिभाषा दूँ। स्थूल भूल यानी क्या? मेरी कोई भूल होती हो, तो जो जागृत मनुष्य हो, वह समझ जाए कि इनसे कोई भूल हो गई। सूक्ष्म भूल यानी कि यहाँ पच्चीस हज़ार लोग बैठे हों, तो मैं समझ जाऊँगा कि दोष हुआ। पर उन पच्चीस हज़ार में से मुश्किल से पाँचेक ही सूक्ष्म भूल को समझ सकेंगे। सूक्ष्म दोष तो बुद्धि से भी देख सकते हैं, जब कि सूक्ष्मतर और सूक्ष्मतम भूलें, वे ज्ञान से ही दिखती हैं। सूक्ष्मतर और सूक्ष्मतम दोष मनुष्य को नहीं दिखते हैं। देवी-देवताओं को भी, अवधिज्ञान से देखें तभी दिखते हैं। फिर भी वे दोष किसीको नुकसान नहीं करते हैं, वैसे सूक्ष्मतर और सूक्ष्मतम दोष हममें रहे हुए हैं। और वे भी इस कलिकाल की विचित्रता के कारण!

'ज्ञानी पुरुष' खुद देहधारी रूप में परमात्मा ही कहलाते हैं। जिनमें एक भी स्थूल भूल नहीं है और एक भी सूक्ष्म भूल नहीं है।

भीतरवाले भगवान दिखाएँ दोष...

जगत् दो तरह की भूलें देख सकता है, एक स्थूल और एक सूक्ष्म। स्थूल भूलें बाहर की पब्लिक भी देख सकती है और सूक्ष्म भूलें बुद्धिजीवी देख सकते हैं। ये दो भूलें 'ज्ञानी पुरुष' में नहीं होती है! फिर सूक्ष्मतर दोष वे ज्ञानियों को ही दिखते हैं। और हम सूक्ष्मतम में बैठे हुए हैं।

मेरी जो सूक्ष्मतर और सूक्ष्मतम भूलें होती हैं, वे केवलज्ञान को रोकती हैं, केवलज्ञान को रोकें, ऐसी भूलें होती हैं, वे भूल 'भगवान' 'मुझे' दिखाते हैं। तब 'मैं' जानूँ न, कि 'मेरा ऊपरी है यह।' ऐसा पता नहीं चलता? अपनी भूलें दिखाए, वह भगवान ऊपरी है या नहीं?

प्रश्नकर्ता : हाँ, ठीक है।

दादाश्री : इसलिए हम कहते हैं न कि, यह भूल जो हमें दिखाते हैं, वे चौदह लोकों का नाथ है। उन चौदह लोकों के नाथ के दर्शन करो। भूल दिखानेवाला कौन है? चौदह लोकों का नाथ!

और वे 'दादा भगवान' तो मैंने देखे हैं, संपूर्ण दशा में है अंदर!

उसकी गारन्टी देता हूँ। मैं ही उन्हें भजता हूँ न! और आपको भी कहता हूँ कि, 'भाई, आप दर्शन कर जाओ।' 'दादा भगवान' ३६० डिग्री और मुझे ३५६ डिग्री हैं। इसीलिए हम दोनों अलग हैं, वह प्रमाणित हो गया या नहीं?

प्रश्नकर्ता : हाँ, वैसा ही है न!

दादाश्री : हम दोनों अलग हैं। भीतर प्रकट हुए हैं, वे दादा भगवान हैं। वे संपूर्ण प्रकट हो गए हैं, परम ज्योति स्वरूप!

जगत् निर्दोष

भगवान ने देखा जग निर्दोष

प्रश्नकर्ता : भगवान महावीर ने पूरे जगत् को निर्दोष देखा।

दादाश्री : भगवान ने निर्दोष देखा और खुद की निर्दोष दृष्टि से निर्दोष देखा। उन्हें कोई दोषित नहीं लगा। वैसा मैंने भी निर्दोष देखा है और मुझे भी कोई दोषित दिखता नहीं है। फूलमाला चढ़ाए तो भी कोई दोषित नहीं और गालियाँ दें तो भी कोई दोषित नहीं। यह तो मायावी दृष्टि के कारण सब दोषित दिखते हैं। इसमें सिर्फ दृष्टि का ही दोष है।

प्रश्नकर्ता : निर्दोषता किस तरह प्राप्त होती है?

दादाश्री : पूरे जगत् को निर्दोष देखोगे तब! मैंने पूरे जगत् को निर्दोष देखा है, तब मैं निर्दोष हुआ हूँ। हित करनेवाले को और अहित करनेवाले को भी हम निर्दोष देखते हैं।

कोई दोषित नहीं है। दोष उसने किया हो, तब भी असल में उसके पिछले जन्म में किया होगा। पर फिर तो उसकी इच्छा नहीं होती, फिर भी अभी हो जाता है। अभी उसकी इच्छा के बिना हो जाता है न? भरा हुआ माल है, इसलिए उसमें उसका दोष नहीं है न, इसीलिए निर्दोष माना है।

कौन-सी दृष्टि से जग दिखे निर्दोष

पुद्गल को देखना मत, पुद्गल की तरफ दृष्टि मत करना। आत्मा की तरफ ही दृष्टि करना। कान में कीलें मारनेवाले, वे भी भगवान महावीर को निर्दोष दिखे। दोषित दिखता है, वही अपनी भूल है। वह एक प्रकार का अपना अहंकार है। यह तो हम बिना तनख्वाह के काज़ी बनते हैं और फिर मार खाते हैं। मोक्ष जाते हुए ये लोग हमें उलझाते हैं, ऐसा जो बोलते

हैं, वह तो व्यवहार से हम बोलते हैं। इस इन्द्रियज्ञान से जो दिखता है वैसा बोलते हैं। पर असल हक़ीक़त में तो लोग उलझा ही नहीं सकते हैं न! क्योंकि कोई जीव किसी जीव में किंचित् मात्र दख़ल कर ही नहीं सके ऐसा यह जगत् है। ये लोग तो बेचारे प्रकृति जो नाच करवाती है, उस अनुसार नाचते हैं, इसलिए उसमें किसीका दोष है ही नहीं। जगत् पूरा ही निर्दोष है। मुझे खुद को निर्दोष अनुभव में आता है। आपको वह निर्दोष अनुभव में आएगा, तब आप भी इस जगत् से छूट गए। नहीं तो कोई एक भी जीव दोषित लगेगा, तब तक आप छूटे नहीं हैं।

प्रश्नकर्ता : इसमें सभी जीव आ जाते हैं? मनुष्य ही नहीं, परन्तु चींटी-मकोड़े सभी आ जाते हैं?

दादाश्री : हाँ, जीव मात्र निर्दोष स्वभाव के दिखने चाहिए।

प्रश्नकर्ता : दादा, आपने जीव मात्र निर्दोष है ऐसा कहा है। अब नौकरी में मैंने कहीं भूल की और मेरा ऊपरी अमलदार ऐसा कहे कि तूने यह भूल की। फिर वह मुझे डाँटेगा, ठपकारेगा। अब यदि मैं निर्दोष होऊँ तो असल में मुझे नहीं डाँटना चाहिए न?

दादाश्री : किसीका डाँटना हमें देखना नहीं है। हमें, डाँटनेवाला भी निर्दोष है, ऐसा हमारी समझ में होना चाहिए। इसीलिए किसी पर दोष नहीं डाल सकते हैं। जितने निर्दोष आपको दिखेंगे, उतने आप 'समझ में आए' कहलाओगे।

मुझे जगत् निर्दोष दिखता है। आपको ऐसी दृष्टि आएगी तब यह पज़ल सॉल्व हो जाएगा। मैं आपको ऐसा प्रकाश दूँगा और इतने पाप धो डालूँगा कि जिससे आपका प्रकाश बना रहेगा। और आपको निर्दोष दिखता जाएगा। और साथ में पाँच आज्ञा में रहोगे, तो वह जो दिया हुआ ज्ञान है, उसे थोड़ा भी फ्रेक्चर नहीं होने देंगी।

तत्त्व दृष्टि से जगत् निर्दोष

हम पूरे जगत् को निर्दोष देखते हैं।

प्रश्नकर्ता : ऐसा पूरे जगत् को निर्दोष कब देख सकेंगे?

दादाश्री : आपको उदाहरण देकर समझाता हूँ। आप समझ जाओगे। एक गाँव में एक सुनार रहता है। पाँच हज़ार लोगों का गाँव है। आपके पास सोना है, वह सारा सोना लेकर वहाँ बेचने गए। तब वह सुनार सोना ऐसे घिसता है, देखता है। अब हमारा सोना वैसे तो चाँदी जैसा दिख रहा होता है, मिलावटवाला सोना होता है, फिर भी वह डाँटता नहीं है। वह क्यों डाँटता नहीं है कि ऐसा क्यों बिगाड़कर लाए हो? क्योंकि उसकी सोने में ही दृष्टि है। और दूसरे के पास जाओ, तो वह डाँटता है कि ऐसा क्यों लाए हो? इसलिए जो पारखी है, वह डाँटता नहीं है। इसलिए आप यदि सोना ही माँगते हो, तो इसमें सोना ही देखो न! उसमें दूसरा किसलिए देखते हैं? इतना मिलावटवाला सोना क्यों लाए हो? ऐसे डाँटे-करे, उसका कब पार आए? हमें अपनी तरह से देख लेना है कि इसमें कितना सोना है और उसके इतने रुपये मिलेंगे। आपको समझ में आया न? उस दृष्टि से मैं सारे जगत् को निर्दोष देखता हूँ। सुनार इस दृष्टि से चाहे जैसा सोना हो, फिर भी सोना ही देखता है न? दूसरा कुछ देखता ही नहीं है न? और डाँटता भी नहीं है। हम उसे बताने गए हों, तब अपने मन में होता है कि वह डाँटेगा तो? अपना सोना तो सारा खराब हो गया है! पर नहीं, वह तो डाँटता-करता नहीं है। वह क्या कहेगा, 'मुझे दूसरा क्या लेना-देना?' वे बिना अक्कलवाले हैं या अक्कलवाले हैं?

प्रश्नकर्ता : अक्लवाला ही कहलाएगा न?

दादाश्री : यह सिमिली ठीक नहीं है?

प्रश्नकर्ता : ठीक है। ऐसा उदाहरण दें, तो फिट जल्दी हो जाता है।

दादाश्री : अब यह उदाहरण कोई जानता नहीं क्या?

प्रश्नकर्ता : जानते होंगे।

दादाश्री : ना, किस तरह ख्याल में आए? सारा दिन ध्यान लक्ष्मीजी

में और लक्ष्मीजी का विषय पूरा हो कि वापिस घर पर मेमसाहब याद आती रहती हैं और मेमसाहब का विषय पूरा हुआ कि वापिस लक्ष्मीजी का विषय याद आता है! इसीलिए दूसरा कुछ खयाल में ही नहीं रहता है न! फिर दूसरे हिसाब निकालने के ही रह जाते हैं न?

हमने पारखी को देखा था, तब मुझे ऐसा होता था कि यह डाँटता क्यों नहीं कि आप सोना क्यों बिगाड़कर लाए हो? उसकी दृष्टि कितनी सुंदर है! कुछ डाँटता भी नहीं है। इसका अच्छा है वैसा भी बोलता नहीं है। पर ऐसा कहेगा, 'बेठो, चाय-पानी पीओगे न?' अरे, मिलावटी सोना है, तब भी चाय पिलाता है? ऐसा ही इसमें भी। क्या अंदर 'शुद्ध' सोना ही है न? तात्त्विक दृष्टि से देखें तो दोष किसीका भी नहीं है।

जगत् निर्दोष, प्रमाण सहित

हम जगत् पूरा निर्दोष देखते हैं। हमने जगत् निर्दोष माना है। वह माना हुआ कोई थोड़े ही बदल जानेवाला है? पल में बदल जाएगा क्या? हमने निर्दोष माना हुआ है, जाना हुआ है, वह कोई थोड़े ही दोषित लगनेवाला है?!

क्योंकि जगत् में कोई दोषित है ही नहीं। मैं एक्ज़ेक्टली (जैसा है वैसा) कह देता हूँ। बुद्धि से प्रूफ (प्रमाण) देने को तैयार हूँ। इस बुद्धिशाली जगत् को, यह जो बुद्धि का फैलाव हुआ है, उन्हें प्रूफ चाहिए तो मैं देना चाहता हूँ।

शीलवान के दो गुण

अभी हंड्रेड परसेन्ट (सौ प्रतिशत) शीलवान होते नहीं हैं। वैसे शीलवान इन पिछले पच्चीस सौ वर्षों में नहीं हुए हैं। पिछले पच्चीस सौ वर्षों के जो कर्म हैं, उनमें ऐसा शीलवान हो ही नहीं सकता मनुष्य। शील आता ज़रूर है, पर पूर्णता नहीं आती।

प्रश्नकर्ता : पर शील की दिशा में तो जा सकते हैं न?

दादाश्री : हाँ, जा सकते हैं।

प्रश्नकर्ता : तो वहाँ तक पहुँचने के लिए क्या करना चाहिए? मेरा एक सबसे बड़ा उलझनवाला प्रश्न है। उसके लिए क्या करना चाहिए, वह पता नहीं चलता है।

दादाश्री : छोटे वाक्य से काम लेना चाहिए कि किसी दुश्मन की तरफ भाव भी नहीं बिगड़े, और बिगड़ा हो तो प्रतिक्रमण से सुधार लो। बिगड़ जाना, वह कमज़ोरी के कारण बिगड़ जाता है, तो प्रतिक्रमण से सुधार लो उसे! ऐसे करते-करते वह चीज़ सिद्ध होगी।

और दूसरा, इस जगत् में कोई दोषित है ही नहीं। असल में हर एक जीव निर्दोष ही है, जगत् में। दोषित दिखता है, वह ही भ्रांति है। कोई दोषित नहीं है, वह 'उसके' लक्ष्य में रहना चाहिए।

प्रश्नकर्ता : पर उसे बुद्धि से समझना बहुत कठिन है।

दादाश्री : बुद्धि समझने देती ही नहीं है यह। कोई दोषित नहीं, वह बुद्धि समझने देती ही नहीं है।

प्रश्नकर्ता : तो उसके लिए क्या करना चाहिए?

दादाश्री : यह वाक्य तो आपके अनुभव में आए तो अनुभव ही आपको कह देगा। पहले इस वाक्य से शुरूआत करो। तो फिर उसका अनुभव आपको कह देगा। इसलिए फिर बुद्धि शांत हो जाएगी।

यह है ज्ञान का थर्मामीटर

इस जगत् के सार के रूप में आप पूछो कि, इस जगत् का सार क्या है? तब कहें, 'कोई भी व्यक्ति दोषित है ही नहीं जगत् में। मनुष्य भी दोषित नहीं है, बाघ भी दोषित नहीं है।' इसीलिए इस जवाब पर से पूरी रक़म ढूंढ निकालनी है।

यह जवाब क्या है कि यह जगत् पूरा निर्दोष स्वरूप है। जीव मात्र निर्दोष है। दोषित दिखता है, वह खुद की उस अज्ञानता से। बोलो, अब कितनी भूल में होंगे आप?

प्रश्नकर्ता : बहुत ही भूल में।

दादाश्री : जब जगत् निर्दोष दिखेगा, आपकी जेब काट रहा हो वही व्यक्ति आपको निर्दोष दिखे, तब जानना कि करेक्टनेस (यथार्थता) पर पहुँचे।

एक रकम आप मानोगे?

स्कूल में पढ़ते समय एरिथमेटिक (अंक गणित) में सिखलाते हैं न मास्टरजी कि कुछ नहीं होता तो सपोज़ (मानो कि) १०० ऐसा कहते हैं न? नहीं कहते, १०० मानो तो जवाब आएगा। तब अपने मन में ऐसा होता है कि मास्टरजी ने १०० पर कोई जादू किया लगता है। तब हम कहें कि नहीं, मैं तो सवा सौ मानूँगा। तब कहे, फिर तुझे मानना हो वह मान न! ऐसी धारणा से जवाब आए, वैसा है।

वैसी एक रकम मैं मानने का कहता हूँ आपको। 'इस जगत् में कोई दोषित ही नहीं है। जगत् पूरा ही निर्दोष है।' आपको दोष दिखते हैं?

प्रश्नकर्ता : देखें तो दिखते हैं।

दादाश्री : वास्तव में दोष हैं नहीं, फिर भी दोष दिखते हैं, वही अपनी नासमझी है। लोगों का किचिंत् मात्र दोष दिखता है वह अपनी नासमझी है।

यह रकम माने और वह रकम मानकर जवाब लाए तो जवाब आ जाए ऐसा है। कोई दोषित है ही नहीं जगत् में। आपके दोषों से ही आपको बंधन है। दूसरे किसीके दोष हैं ही नहीं। कोई आपका नुकसान करे, कोई गालियाँ दे, इन्सल्ट (अपमान) करे तो उसका दोष नहीं है, दोष आपका ही है।

दृष्टि के अनुसार सृष्टि

प्रश्नकर्ता : कभी ऐसा भी होता है कि एक ही व्यक्ति आज हमें अच्छा लगता है। दूसरे दिन तिरस्कारयुक्त लगता है। तीसरे दिन वह व्यक्ति

हमें मदद करनेवाला भी लगता है। तो ऐसा किसलिए होता है?

दादाश्री : उस व्यक्ति में बदलाव दिखता है, वह अपना रोग है। व्यक्ति में बदलाव होता ही नहीं है। इसलिए बदलाव दिखता है, वह अपना ही रोग है। और अध्यात्म वही कहता है न! अध्यात्म क्या कहता है? तुझे देखना ही नहीं आता है। बेकार ही, बिना काम के पत्नी का पति किसलिए बन बैठा है? इसीलिए हमें देखना नहीं आने से ऐसा सब होता है। बाकी यह फेक्ट चीज़ नहीं है।

खुद के लिए सामनेवाला व्यक्ति क्या मानता होगा, वह क्या पता चले? आपकी तरफ कोई व्यक्ति अभाव दिखाए तो आपको उसकी तरफ कैसा लगेगा?

प्रश्नकर्ता : अभाव दिखाए तो अच्छा नहीं लगता।

दादाश्री : तब वैसे ही आप दूसरे को अभाव दिखाओ तो क्या होगा?

प्रश्नकर्ता : वह एक पहेली है कि इसमें मुझे अच्छा भाव दिखता है और दूसरे में मुझे खराब भाव दिखता है।

दादाश्री : नहीं, वह पहेली नहीं है। हम समझते हैं कि क्या है यह, इसीलिए हमें पहेली नहीं लगता। एक व्यक्ति मुझे रोज़ पूछते कि मुझे इस आदमी के लिए उलटे भाव क्यों दिखते हैं? मैंने कहा, 'उस आदमी का दोष नहीं है, आपका दोष है।'

प्रश्नकर्ता : पर हम यदि खराब हों, तो सभी खराब दिखने चाहिए।

दादाश्री : हम ही खराब हैं, इसलिए ही यह खराब दिखता है। खराब कोई है ही नहीं। जो खराब दिखता है, वह आपकी खराबी के कारण खराब दिखता है। भगवान ने यही खोज की और आप जो अच्छा कहते हो, वह भी आपकी मूर्खता है अंदर, फूलिशनेस है। अच्छा-अच्छा कहते हो फिर हम पूछें तब कहेगा, 'मुझसे विश्वासघात किया।' तो तू अच्छा-अच्छा कह रहा था, वह किसलिए?! अच्छा कहता है और दस वर्ष बाद

कहता है कि मुझसे विश्वासघात किया। ऐसा होता है कि नहीं होता?

प्रश्नकर्ता : होता ही है न!

दादाश्री : और ऐसा जो गलत दिखता है, वह अच्छा है, ऐसा भी मत मानना।

जग निर्दोष अनुभव में...

प्रश्नकर्ता : सामनेवाला निर्दोष दिखे, वैसी जागृति सतत रहनी चाहिए न?

दादाश्री : निर्दोष दिखने में आपको बहुत समय लगेगा। पर आपको दादा ने कहा है, इसलिए आपको निर्दोष दिखेगा कभी, तो वह कहने मात्र से। पर आपको एक्जेक्ट नहीं दिखेगा।

प्रश्नकर्ता : वैसा अनुभव नहीं होगा हमें?

दादाश्री : अनुभव नहीं होगा, अभी आपको।

प्रश्नकर्ता : हम मन में मान लें कि हाँ, वह निर्दोष ही है, तो?

दादाश्री : यह ज्ञान हुआ पर वह अनुभव कभी न कभी होगा, पर अभी तो ऐसा पहले नक्की कर दिया है इसीलिए हमें परेशानी नहीं न! निर्दोष है ऐसा कहते हैं, इसीलिए अपना मन बिगड़ता नहीं है फिर। किसीको दोषित ठहराया कि आपका मन पहले बिगड़ता है और आपको दु:ख देता ही है। क्योंकि दोषित वास्तव में है ही नहीं। आपकी अक़्ल से ही आपको दोषित दिखता है और वही भ्रांति की जगह है। हाँ, अब आप मुझे कहते रहो पर मैं किसीकी शिकायत सुनूँगा?!

प्रश्नकर्ता : अभी आपने क्या कहा कि आप मुझे कहते रहते हो?

दादाश्री : हाँ, पर ऐसी सब बातें करते हो, कोई ऐसे कर रहा था, कोई ऐसे कर रहा था, ऐसा आपको समझ में आया कि यह सब गलत है?

प्रश्नकर्ता : हाँ।

दादाश्री : यह टाइम सब बेकार गया। सब निर्दोष हैं, ऐसा समझे कि हल आ गया।

प्रश्नकर्ता : हमारी कोई जेब काटे तो तुरन्त हम ऐसा कहते हैं कि यह मेरे कर्म का उदय हुआ, तो तुरन्त वह व्यक्ति निर्दोष दिखता है।

दादाश्री : इतना यदि ज्ञान में आ गया, यह मेरे ही कर्म का उदय है, तब वह निर्दोष दिखे वह ठीक है। वह अनुभवपूर्वक का कहलाता है।

प्रश्नकर्ता : वह अनुभवपूर्वक का कहलाता है?

दादाश्री : हाँ।

प्रश्नकर्ता : अपने कर्म का दोष है, ऐसा दिखे तो?

दादाश्री : हाँ, वही कि यह मेरे ही कर्म का उदय है, उसका दोष नहीं है यह। यह है, वह जागृति कहलाती है।

और वैसे ही आप बोलो कि जगत् पूरा निर्दोष है, वह अभी आपको पूरा अनुभव में नहीं आया है।

इसीलिए ये कुछ खास बातों में आपका ऐसा डिसाइड (नक्की) हो जाता है और कुछ बातें ऐसी रहेंगी कि जिसमें डिसीज़न (निर्णय) नहीं होता है। इसलिए आपको मान ही लेना है। फिर है, तो टाइम आएगा तब वह डिसाइड हो जाएगा। हम जवाब जानते हों, तो फिर हिसाब लिखते-लिखते आ जाता है, तब पता चल जाता है। जवाब जानते हों तो अच्छा है न?!

प्रश्नकर्ता : हाँ, अब कोई भी हमें फल मिले या कोई भी कार्य हो, प्लस या माइनस (अधिक या कम) पर वह अपने कर्म के अधीन ही है, ऐसा मान लिया जाता है...

दादाश्री : हाँ, दूसरा कुछ है ही नहीं। अपना ही है सब। माइनस

कहो तो भी अपना और प्लस कहो तो भी अपना। पर व्यवहार में हमें उसे कहना चाहिए कि भाई, आपने अच्छा काम कर दिखाया, ऐसा बोलना चाहिए और खराब किया हो तो उसे ऐसा नहीं कहना चाहिए कि आपने खराब किया।

प्रश्नकर्ता : तो उसे क्या कहना चाहिए?

दादाश्री : उसे कुछ भी नहीं कहना चाहिए। उसके प्रति मौन रहना चाहिए। क्योंकि अच्छा न कहे तो उसे एन्करेजमेन्ट (प्रोत्साहन) नहीं मिलता। उसके मन में ऐसा होता है कि यह सेठ तो कुछ बोलते ही नहीं। वह तो ऐसा ही समझता है न कि 'मैंने किया यह!' अपने कर्म के उदय से करता है, ऐसा वह जानता नहीं है। वह तो कहेगा, 'मैंने मेहनत करके किया है यह।' तो हमें 'हाँ' कहना पड़ता है।

अंतिम दृष्टि से जग निर्दोष

प्रश्नकर्ता : अब कोई मनुष्य वैसा नालायक दिखता नहीं है और पहले मुझे नालायक के सिवाय कुछ दिखता नहीं था।

दादाश्री : है ही नहीं। वह जाँच-पड़ताल करने के बाद ही तो मैंने कहा कि, पूरा जगत् मुझे निर्दोष दिखता है।

प्रश्नकर्ता : शुद्धात्मा न देखें तब ही दोषित दिखता है न?

दादाश्री : दोषित कब दिखता है कि शुद्धात्मा न देखें तब दोषित दिखता है और दूसरा उसका हिसाब नहीं निकाला उसने। एक्ज़ेक्टली (वास्तव में) यदि हिसाब निकाले तो वह खुद ही कहेगा, दोष देखनेवाला ही कहेगा, भाई मेरी ही भूल है यह तो। इसीलिए यों अकेला शुद्धात्मा देखने से ही कुछ खतम नहीं होता है। वह तो आगे ही आगे चलता रहता है। वह तो पद्धति के अनुसार निकाल होना चाहिए। इसलिए कुल हिसाब में से निकाल होना चाहिए कि किस तरह दोष नहीं है उसका। हाँ, उसका दोष है नहीं और यह दिखता है क्यों?

भगवान महावीर ने कहा है कि, 'पूरा जगत् निर्दोष है, जो कोई भूल

थी वह मेरी ही थी और वह पकड़ में आ गई।' और वह मुझे भी पकड़ में आ गई, मेरी भूल। और अब आपको क्या कहता हूँ? आपकी भूलें पकड़ो। मैं दूसरा कुछ कहता ही नहीं हूँ। जो पतंग की डोर मेरे पास है, वैसी पतंग की डोर आपके पास है। शुद्धात्मा का ज्ञान खुद प्राप्त किया, इसलिए पतंग की डोर हाथ में रही। पतंग की डोर हाथ में नहीं हो और गोता खाए और चीखें-चिल्लाएँ, कूद-फाँद करें, उससे कुछ मिलता नहीं है। पर हाथ में डोर हो और खींचें तो गोते खाना बंद हो जाता है या नहीं हो जाता? वह डोर मैंने आपके हाथ में दे दी है।

इसलिए आपको यह निर्दोष देखना है। निर्दोष दृष्टि से ऐसे शुद्धात्मा देखकर 'उसे' निर्दोष बनाना है। वह थोड़ी देर बाद फिर अंदर से चीखेगा-चिल्लाएगा। 'यह ऐसा-ऐसा करता है, उसे क्या निर्दोष देखते हो?' उस समय एक्ज़ेक्टली निर्दोष देखना है और जैसा है वैसा एक्ज़ेक्टली निर्दोष ही है।

क्योंकि यह जगत् जो है न, वह आपको दिखता है वह सब आपका परिणाम दिखता है, कॉज़ेज़ नहीं दिखते। अब परिणाम में किसका दोष?

प्रश्नकर्ता : कॉज़ेज़ का दोष।

दादाश्री : कॉज़ेज़ करनेवाले का दोष। यानी परिणाम में दोष किसीका नहीं होता है। जगत् परिणाम स्वरूप है। यह तो एक मैंने आपको बहुत ही छोटा हिसाब निकालना सिखाया है। और बहुत हिसाब हैं सारे। कितने ही हिसाब इकट्ठे हुए, तब मैंने एक्सेप्ट किया, जगत् निर्दोष है ऐसा। नहीं तो यों ही एक्सेप्ट होता है क्या? यह कोई गप्प है?

आप अपनी प्रतीति में ले जाना कि यह जगत् निर्दोष है, ऐसा सौ प्रतिशत है, निर्दोष ही है। दोषित दिखता है, वह ही भ्रांति है। और इसीलिए यह जगत् खड़ा हुआ है बस, खड़ा होने के कारण में दूसरा कोई कारण नहीं है। ज्ञानदृष्टि से देखने जाएँ तो जगत् निर्दोष है और अज्ञानता से जगत् दोषित दिखता है। जगत् जब तक दोषित दिखता है, तब तक भटकते रहना है। और जब जगत् निर्दोष दिखेगा, तब अपना छुटकारा होगा।

जान लिया तो उसका नाम....

जान लिया तो वह कहलाता है कि कभी भी ठोकर न लगे। जेब कट जाए तब भी ठोकर नहीं लगे। और तमाचा मारे तब भी ठोकर नहीं लगे, उसका नाम जान लिया कहलाता है। यह तो 'मैं जानता हूँ, मैं जानता हूँ', गाता रहेगा। इसीलिए हल्दी की गाँठ लेकर गांधी बन बैठे हैं। बाकी, जान लिया तो उसका नाम कहलाता है कि अहंकार नाम मात्र भी न रहे। जेब काट ले, तमाचा मारे, तो भी असर न हो, तब उसका नाम जान लिया कहलाता है। यह तो कोई जेब काट ले न तो 'मेरी जेब काट ली, पुलिसवाले को बुलाओ!' ऐसे शोर मचा देता है। अरे, किस आधार पर कटी, उसका तुझे कुछ पता है? ज्ञानी पुरुष जानते हैं कि किस आधार पर कटा है। जेब काटनेवाला उन्हें गुनहगार नहीं दिखता और इसे तो जेब काटनेवाला गुनहगार दिखता है। जो जेब काटनेवाला निर्दोष है, फिर भी आपको गुनहगार दिखता है, इसीलिए आप अभी तो कितने ही जन्म भटकोगे। जो देखना था वह नहीं देखा और उल्टा ही देखा! जो गुनहगार नहीं है उसे गुनहगार देखा। देखो ये उल्टा ज्ञान सीखकर लाए हैं!!

फिर भी वे जो धरम करते हैं, क्रियाकांड करते हैं वह गलत नहीं है। पर खरी बात, खरी हक़ीक़त तो जाननी पड़ेगी न? वह जेब काटनेवाला आपको गुनहगार दिखता है न? वह तो सभी पुलिसवालों को भी जेब काटनेवाला गुनहगार दिखता है और मज़दूरों को भी वैसा ही दिखता है, तो इसमें आप कौन-सा नया ज्ञान लाए? वह तो छोटे बच्चे भी जानता है कि इसने जेब काटी है! इसीलिए 'यह गुनहगार है', ऐसा छोटे बच्चे भी कहते हैं, स्त्रियाँ भी कहती हैं और आप भी कहते हैं। तो आपमें और इन सबमें फर्क क्या है? 'मैं जानता हूँ, मैं जानता हूँ' कहते हो, पर लोग कहते हैं वैसा ही ज्ञान आपके पास है न? उसे ज्ञान कहें ही कैसे? दूसरा नया ज्ञान आपके पास है ही कहाँ? 'ज्ञान' ऐसा नहीं होता न?

दोष दिखाएँ, कषाय भाव

एक क्षणभर कोई जीव दोषित हुआ नहीं है। यह जो दोषित दिखते

हैं, वह अपने दोष के कारण दिखते हैं। और दोषित दिखते हैं इसीलिए ही कषाय करते हैं। नहीं तो कषाय ही न करे न? दोषित दिखते हैं, इसीलिए गलत ही दिखता है। अंधा अंधे से टकराता है, उसके जैसी बात है यह। अंधे आदमी आमने-सामने टकराते, हैं वह हम जानें और दूर रहकर कहें कि यह अंधा लगता है! इतना अधिक टकराते हैं उसका क्या कारण है? दिखता नहीं है। बाकी जगत् में कोई जीव दोषित है ही नहीं। यह तो सब जो दोष दिखता है, वह आपका है। इसलिए कषाय खड़े रहे हैं।

दूसरों के दोष दिखाए वह कषाय भाव का पर्दा है। इसीलिए दूसरों के दोष दिखते हैं। सींग जैसे कषाय भाव होते हैं, वे मोड़ने से मुड़ते नहीं।

अब क्रोध-मान-माया-लोभ 'कम करो, कम करो' कहते हैं। वे कम कब होंगे? वे कम होते होंगे? वास्तविकता का ज्ञान हो कि कोई दोषित है ही नहीं, तब उन क्रोध-मान-माया-लोभ को कम करने का ही नहीं रहा न! दोषित दिखता है इसीलिए फिर प्रतिक्रमण करना पड़ेगा न?

प्रश्नकर्ता : हाँ।

दादाश्री : कभी पिछले क्रोध-मान-माया-लोभ के कारण दोषित दिखें तो प्रतिक्रमण करना पड़ेगा। ताकि वे फिर क्रोध-मान-माया-लोभ चले जाते हैं।

वहाँ किसे डाँटोगे?

अभी पहाड़ पर से एक ढेला लुढकता लुढ़कता आया और सिर में लगा और खून निकला, उस घड़ी आप किसे गाली देते हो? गुस्सा किस पर होते हो?

पहाड़ पर से इतना बड़ा पत्थर गिरा हो पर पहले देख लेता है कि किसीने लुढ़काया या क्या? कोई न दिखे या फिर बन्दर ने लुढ़काया हो, फिर भी कुछ नहीं। बहुत हुआ तो उसे भगा देता है। उसे क्या गालियाँ देता है? उसका नाम नहीं, निशान नहीं, कहाँ दावा करे? नामवाले पर दावा कर सकते हैं, पर बन्दरभाई का तो नाम ही नहीं, कुछ नहीं, कैसे दावा

करेगा? गालियाँ किस तरह देगा?!

ऐसे तो मूढ़मार खाता है, पर घर में एक ज़रा-सा इतना ऊँचा-नीचा हो गया हो तो उछल-कूद कर देता है! फिर भी भगवान की भाषा में सब निर्दोष हैं। क्योंकि नींद में करते हैं, उसमें उसका क्या दोष? नींद में कोई कहे, 'आपने मेरा यह पूरा घर जला दिया और सब मेरा नुकसान कर डाला?' अब नींद में बोले, उस पर हम किस तरह दोष मढ़ें?

नहीं कोई दुश्मन अब...

प्रश्नकर्ता : जगत् निर्दोष किस अर्थ में है?

दादाश्री : खुल्ले अर्थ में! इस जगत् के लोग नहीं कहते कि, 'यह हमारा दुश्मन है, मुझे इसके साथ अच्छा नहीं लगता, मेरी सास खराब है।' परंतु मुझे तो सब निर्दोष दिखते हैं।

प्रश्नकर्ता : पर आप तो कहते हैं आपको कोई खराब दिखता ही नहीं।

दादाश्री : कोई खराब है ही कहाँ? इसलिए खराब क्या देखना? हमें सामनेवाले का सामान देखना है! डिब्बी का क्या करना है! डिब्बी तो पीतल की हो या तांबे की हो या लोहे की भी हो! दुश्मन दिखे तब दुःख होता है न, पर दुश्मन ही नहीं देखें न? अभी तो आपकी दृष्टि ऐसी है। चमड़े की आँख है, इसलिए यह दुश्मन, यह अच्छा नहीं है और यह अच्छा है कहोगे। यह अच्छा है, पर दो-चार वर्षों बाद वापिस उसे ही खराब कहते हो। कहते हैं या नहीं कहते?

प्रश्नकर्ता : ज़रूर कहते हैं।

दादाश्री : और मुझे इस वर्ल्ड में कोई दुश्मन नहीं दिखता। मुझे निर्दोष ही दिखते हैं सब, क्योंकि दृष्टि निर्मल हो गई है। इस चमड़े की आँख से नहीं चलता, दिव्यचक्षु चाहिए।

साँप, बिच्छू भी हैं निर्दोष...

इस दुनिया में कोई दोषित है ही नहीं।

प्रश्नकर्ता : उदयकर्म से ही है, जो है वह, उसी कारण से न?

दादाश्री : हाँ, जगत् पूरा निर्दोष है ही। किस दृष्टि से निर्दोष है? तब कहे, यदि शुद्धात्मा देखें तो निर्दोष ही है न! दोषित कौन है? बाहर का पुद्‌गल न! यह जिसे जगत् मानता है। वह पुद्‌गल... हमें क्या जानना है कि वह पुद्‌गल उदयकर्म के अधीन है आज। वह खुद के अधीन नहीं है, खुद की इच्छा नहीं हो फिर भी करना पड़ता है यह। इसलिए वह निर्दोष ही है बेचारा। इसलिए हमें पूरा जगत् निर्दोष ही... जीव मात्र निर्दोष ही दिखता है। जगत् निर्दोष स्वभाव का है। पूरा ही जगत् निर्दोष है। आपको दूसरों के जो दोष दिखते हैं, वे आपमें दोष होने से ही दोष दिखते हैं। जगत् दोषित नहीं है, वह आपको यदि दृष्टि में आए तब ही आप मोक्ष जाओगे। जगत् दोषित है, वैसी दृष्टि आए तो आपको यहाँ आराम से पड़े रहना है।

कोई जप करता हो, तप करता हो, उसमें हमें उसका दोष क्या देखना है? ऐसा है, उसके 'व्यवस्थित' के ताबे में होता है, वैसा बेचारा करता है। उसमें हमें क्या लेना-देना? हमें टीका करने का कोई कारण है? हम उसके साथ नये करार किसलिए बाँधे? उसे जो अनुकूल आए, वैसा वह करता है। हमें तो मोक्ष के साथ ही काम है। हमें दूसरे के साथ काम नहीं है। और जगत् में हमें कोई दोषित दिखता नहीं है। जेब काटे वह भी दोषित नहीं दिखता है। यानी कि जगत् में कोई भी जीव दोषित नहीं दिखता है। साँप हो या बिच्छू हो या चाहे जो हो, जो आपको दोषित दिखता है न, उसका भय आपमें घुस जाता है। और हमें दोषित दिखता ही नहीं है। किस आधार पर दोषित नहीं है, वह सब आधार हम ज्ञान से जानते हैं। यह दोषित दिखता है, वह तो भ्रांत दृष्टि है, भ्रांति की दृष्टि! यह चोर है और यह साहूकार है, यह फ़लाना है, वह भ्रांति की दृष्टि है। हमारा लक्ष्य क्या होना चाहिए कि सभी जीव मात्र निर्दोष है। हमें दोषदृष्टि से दोषित

दिखते हैं। वह अभी अपनी देखने में भूल होती है, इतना समझना चाहिए। वास्तव में कोई दोषित है ही नहीं। भ्रांति से दोषित लगते हैं।

महावीर ने भी देखे स्वदोष!

चोर आपकी जेब काटे फिर भी वह आपको दोषित न दिखे, ऐसे कितने सारे कारण होंगे, तब मोक्ष होगा। आत्मज्ञान होने के बाद ऐसी दृष्टि होगी तभी मोक्ष होगा, नहीं तो मोक्ष होगा नहीं।

देखने जाएँ तो, यह तो जो दोष दिखता है वह आपकी बुद्धि आपको फँसाती है। बाकी दोषित कोई है ही नहीं इस जगत् में! हम में बुद्धि से ऐसा लगता है कि इसने तो सारी ज़िन्दगी में कोई ऐसा पाप किया नहीं है और इसके साथ ऐसा? तब कहे, ना, वह कितने ही जन्मों के पाप, अब गाढ़ पाप होते हैं न, वे पकते देर से हैं। आपने एक अभी ऐसा गाढ़ कर्म बाँधा, वह पाँच हज़ार वर्षों में पाप पकेगा। विपाक होने में तो बहुत टाइम जाता है। और कितने ही हल्के कर्म होते हैं, वे सौ वर्ष में पक जाते हैं, इसलिए हमारे लोग कहते हैं न सरल व्यक्ति है, अच्छा व्यक्ति है। सरल के कर्म सब गाढ़ नहीं होते हैं।

और कर्म विपाक हुए बिना फल देते नहीं हैं। आम के पेड़ पर आम इतने बड़े और रस नहीं निकलता? विपाक होना चाहिए। यह ज्ञान होने के बाद दोषित हमें भी कोई मनुष्य, कोई जीव दिखा नहीं है। जब यह दृष्टि मिलेगी, तब महावीर दृष्टि हो गई है ऐसा नक्की होगा। जिनकी दृष्टि में कोई दोषित दिखता नहीं था। भगवान को यहाँ कान में कीलें ठोकीं, तो कौन दोषित दिखा था?

प्रश्नकर्ता : स्वकर्म।

दादाश्री : स्वकर्म दिखे। देवों ने खटमल डाले, दूसरा किया, तीसरा किया, तब भी दोषित कौन दिखा? स्वकर्म।

महावीर भगवान को भी उन लोगों ने कीलें ठोकीं थीं, तब तुरन्त ही ज्ञान में देखा कि किसका परिणाम आया है! यानी कान में कीलें ठोकीं,

उसे भी निर्दोष देखा था!

किसीका दोष तो निकालने जैसा जगत् में है ही नहीं। हम कभी भी किसीका दोष निकालते नहीं है। किसीका दोष होता भी नहीं है। भगवान ने भी निर्दोष देखे हैं। तब फिर हम दोष निकालनेवाले कौन? उनसे भी अधिक समझदार हैं क्या? भगवान से भी समझदार?! भगवान ने भी निर्दोष देखे हैं।

जगत् में किसीको दोषित देखा नहीं, उसका नाम महावीर। और महावीर का खरा शिष्य कौन कि जिसे लोगों के दोष दिखने कम होने लगे हैं। संपूर्ण दशा तक नहीं होता है, पर दोष दिखने कम होने लगे हैं।

अभेद दृष्टि होने से बने वीतराग

ये आपको दोषित दिखते हैं उसका कारण क्या है कि आपकी दृष्टि विकारी हो गई है। मेरा-तेरा की बुद्धिवाली है। यह मेरा और यह तेरा, ऐसी मेरा-तेरा के भेदवाली है! जब तक दोषित दिखता है, तब तक कुछ भी प्राप्त नहीं किया है। हमें किसीके साथ जुदाई नहीं है। अभेद दृष्टि हुई, वह भगवान कहलाता है। यह हमारा और यह आपका, वे सामाजिक धर्म होते हैं सारे। इन सामाजिक धर्मों ने तो उलझनें खड़ी की हैं, और धर्म पालते जाते हैं और चिंता बढ़ती जाती है।

गच्छ-मत की जो कल्पना...

बाकी यह कृपालुदेव ने कहा है कि 'गच्छ-मत की जो कल्पना, वह नहीं सद्व्यवहार।'

कल्पना वह कल्पना ही नहीं है, पर वही है जो आवरण स्वरूप बन गया है। फिर भी भगवान ने उसे धर्म कहा है। वह उसकी जगह पर धर्म में ही है। आप अक़्लमंदी मत करना, वह जो कर रहा है वह उसकी जगह पर धर्म में ही है। इसीलिए आप अक़्लमंद मत बनना। तेरा गलत है, ऐसा किसीको कभी भी नहीं कहना चाहिए। उसका नाम - निष्पक्षपात।

'तेरा गलत है' ऐसा तो किसलिए हम कहते हैं कि आपको समझाने के लिए, यह दूसरे लोगों की बात करते हैं। दूसरे लोगों की टीका करने के लिए बात नहीं करनी है। टीका होती ही नहीं है किसी जगह पर और यदि टीका है तो वीतराग का विज्ञान नहीं है। वहाँ धर्म है ही नहीं, अभेदता है ही नहीं।

यह फलाने संप्रदाय का हो या यह फलाने संप्रदाय का हो, पर किसीकी टीका नहीं। भगवान क्या कहते हैं? निष्पक्षपाती को हम पूछें कि साहब, आपका क्या कहना है? ये लोग हमें अंधे लगते हैं। तब कहे, वह आपकी दृष्टि में चाहे जो हों, पर वे अपनी जगह पर सच्चे हैं। तब कहे, चोर चोरी करता है वह? तो वे अपनी जगह पर सच्चे हैं। आप किसलिए अक़्लमंदी करते हो? आप केवल उसे निर्दोष दृष्टि से देखो। आपके पास यदि निर्दोष दृष्टि हो, तो उससे आप देखो। नहीं तो दूसरा कुछ देखना मत! और दूसरा देखोगे तो मारे जाओगे। जैसा देखोगे वैसा हो जाएगा। जैसा देखोगे वैसे आप बन जाओगे। क्या गलत कहते हैं? ये वीतराग सयाने हैं न, ऐसा आपको लगता है न!

यहाँ तो ये वैष्णव धर्म के लोग वीतराग का धर्म प्राप्त करने आए हैं, तब उन्हें लगा कि वीतराग ऐसे थे! तब मैंने कहा, ऐसे थे वीतराग। तब कहे, ऐसा तो सुना ही नहीं था मैंने! इसीलिए इस मंदिर में आते हैं न, सीमंधर स्वामी के दर्शन करते हैं न, उल्लासपूर्वक!

प्रश्नकर्ता : यह तो आपने बहुत बड़ी बात कही, 'जैसा देखोगे वैसा बन जाओगे।'

दादाश्री : हाँ, वैसा देखोगे तो आप उस रूप हो जाओगे। इसीलिए मैंने दूसरा कुछ कभी भी देखा नहीं है। दोषित देख ही नहीं सकते। स्वरूप जो उल्टा दिखता है, हमें उसे पलट देना चाहिए कि ऐसा क्यों दिखा?

आज का दर्शन और गत भव का रिकॉर्ड

हमें जगत् पूरा निर्दोष दिखता है। पर वह श्रद्धा में है। श्रद्धा में यानी

दर्शन में, और अनुभव में आया है कि निर्दोष ही है। फिर भी वर्तन जो है, वह छूटता नहीं है अभी भी!!

अभी कोई फलाने संत की उल्टी बात आई। वे चाहे जैसे हों, फिर भी आपको तो वे निर्दोष ही दिखने चाहिए। फिर भी हम वैसा बोलते हैं कि यह ऐसे हैं, ऐसे हैं, वैसा नहीं बोलना चाहिए। हमारी श्रद्धा में वे निर्दोष हैं, ज्ञान में आ गया है कि निर्दोष हैं, फिर भी बोल निकल जाता है। वर्तन में बोल निकल जाता है। इसीलिए ये टेपरिकॉर्ड कहते हैं उसे!! टेप रिकॉर्ड हो गया, उसका क्या हो? पर टेपरिकॉर्ड इफेक्टिव है न सारी, इसीलिए उसे तो ऐसा ही होता है कि अभी ये दादा ही बोले।

प्रश्नकर्ता : और वह बोलते समय, यह भूल है, ऐसा अंदर होता है क्या?

दादाश्री : हाँ, बोलते समय, ऑन द मॉमेन्ट (तत्क्षण) पता होता है। यह गलत हो रहा है, यह गलत बोला जा रहा है।

प्रश्नकर्ता : वह ठीक है पर उस संत की यह भूल है, ऐसा जो बोला जा रहा है, उस समय ऐसा पता होता है न कि उनकी इस अपेक्षा से ऐसी भूल कहलाती है?

दादाश्री : हाँ, किस अपेक्षा से उनकी भूल कहलाती है वह जानते हैं, पर वह मान्यता तो पहले की थी न! यह सब, उससे पहले का ज्ञान था। इसलिए आज का टेपरिकॉर्ड नहीं है यह।

प्रश्नकर्ता : इसीलिए पहले का ज्ञान इस टेप में, बोलने में हेल्प करता है?

दादाश्री : हाँ, और अभी तो वह इस समय बोल ही रहा है। पर लोग तो ऐसा ही समझते हैं न कि आज दादा बोले, अभी दादा बोले पर मैं जानता हूँ कि यह पहले का है। इसलिए फिर भी हमें खेद तो हुआ करता है न! ऐसा नहीं निकलना चाहिए। एक अक्षर भी निकलना नहीं चाहिए।

प्रश्नकर्ता : अब ऐसा यदि जैसा है वैसा न बोलो, तो सुननेवाले सब गलत रास्ते पर जाएँगे, ऐसा हो सकता है न?

दादाश्री : सुननेवाले? पर वह बुद्धि की दख़ल ही है न! वीतरागता को दख़ल नहीं है कोई भी!!

प्रश्नकर्ता : पर सुननेवाले तो बुद्धि के अधीन ही होते हैं न?

दादाश्री : हाँ। पर मेरी बुद्धि में आया कि इसे सुननेवाले को नुकसान होगा इसलिए नुकसान और फ़ायदा, प्रॉफिट और लॉस देखा न? प्रॉफिट एन्ड लॉस तो बुद्धि दिखाती है कि सामनेवाले को नुकसान होगा! फिर भी अभी हम इन संत का बोले पर आज यह काम का नहीं है। पर उस समय हम ऐसा नहीं मानते थे कि यह जगत् पूरा निर्दोष है।

प्रश्नकर्ता : उस समय बुद्धि की दख़ल थी ऐसा हुआ न?

दादाश्री : हाँ, उस समय बुद्धि की दख़ल थी। इसीलिए यह दख़ल जाती नहीं है न जल्दी?

प्रश्नकर्ता : इसीलिए पूरा वर्तन पहले के ही ज्ञान को लेकर है न?

दादाश्री : पहले बुद्धि जब तक थी न, तब तक ये कोंचा था। पर बुद्धि के जाने के बाद कोंचते नहीं हैं न! नहीं तो बुद्धि हर एक को कोंचती ही रहती है। बुद्धि हमेशा ही जब तक है, तब तक कम्पेयर और कोन्ट्रास्ट चलता ही रहता है।

प्रश्नकर्ता : और सिद्धांत रखा है न कि यह निर्दोष है।

दादाश्री : इसीलिए है निर्दोष और किसलिए ऐसा होता है? हम यह खुला कह देते हैं कि जगत् पूरा निर्दोष है। और एक तरफ ये शब्द ऐसे निकले हैं।

आश्चर्यकारी, अद्‌भुत, अक्रम ज्ञानी का पद

यह तो सब साइन्स है। यह धर्म नहीं है। धर्म तो, सब बाहर चलते

हैं न, वे सब धर्म कहलाते हैं। वे रिलेटिव धर्म हैं। रिलेटिव यानी नाशवंत धर्म, और यह तो 'रियल', तुरन्त मोक्षफल देनेवाला। तुरन्त ही मोक्ष का स्वाद चखा देता है।

ऐसा मोक्षमार्ग चखा है, स्वाद में आ गया है, अनुभव में आ गया है। 'जगत् पूरा निर्दोष है' ऐसा आपको समझ में आया है, जब कि भगवान महावीर को वह अनुभव में था। किसी समय आपको समझ नहीं आए और किसी समय झंझट हो जाए, फिर भी तुरन्त वापिस ज्ञान हाज़िर हो जाता है कि उसका क्या दोष? 'व्यवस्थित' है वह समझ में आता है। निमित्त है, समझ में आता है। सब समझ में आ जाता है।

भगवान को अनुभव में था। हमें यह समझ में है। समझ हमारे जैसी रहे न! एक्ज़ेक्ट हाज़िर, शूट ऑन साइट समझ रहती है इसलिए हमारा यह 'केवलदर्शन' कहलाता है। आपका 'केवलदर्शन' अभी हो रहा है। 'केवलज्ञान' हो सके ऐसा नहीं है तो हम उसे किसलिए बुलाएँ? जो हो सके ऐसा नहीं हो उसे कहें 'पधारो-पधारो' तो क्या होगा? 'केवलदर्शन' कोई छोटा पद है? वर्ल्ड का अद्भुत पद है!!! इस दूषमकाल में 'केवलदर्शन' तो गज़ब का पद है। सुषमकाल में तीर्थंकरों के समय के पद से भी यह पद ऊँचा कहलाता है। क्योंकि अभी तो तीन प्रतिशत पर पास किए थे, महावीर भगवान के समय में तैंतीस प्रतिशत पर पास करते थे।

'जगत् पूरा निर्दोष है' ऐसा समझ में आ गया!

नहीं देखते दादा दोष किसीके

आपके दोष भी हमें दिखते हैं, पर हमारी दृष्टि शुद्धात्मा की तरफ होती है, उदयकर्म की तरफ दृष्टि नहीं होती। हमें सबके दोषों का पता चल जाता है, पर उसका हम पर असर नहीं होता है, इसलिए तो कवि ने लिखा है कि,

'मा कदी खोड़ काढे नहीं, दादाने य दोष कोईना देखाय नहीं।'

('माँ किसीके दोष नहीं निकालती है, दादा को भी किसीके दोष नहीं दिखते हैं।')

मुझे अभी कोई गालियाँ दे, फिर कहेगा, 'साहब मुझे माफ़ करो।' अरे भाई! हमें माफ़ करना नहीं होता है। माफ़ी तो हमारे सहज गुण में ही होती है। सहज स्वभाव ही हमारा हो गया है कि माफ़ी ही बक्शते हैं। तू चाहे जो करे, फिर भी माफ़ी ही बक्शते हैं। ज्ञानी का वह स्वभाविक गुण बन जाता है। और वह आत्मा का गुण नहीं है, न ही देह का गुण है, वे व्यतिरेक गुण हैं सारे।

इन गुणों पर से हम नाप सकते हैं कि आत्मा उतने तक पहुँचा। फिर भी ये आत्मा के गुण नहीं है। आत्मा के खुद के गुण तो वहाँ ठेठ साथ में जाते हैं, वे सब गुण आत्मा के। और व्यवहार में यह हम कहते हैं, वे लक्षण हैं उसके। यदि किसीको धौल मारें और वह अपने सामने हँसे, तब हम जान जाते हैं कि इन्हें सहज क्षमा है। तब अपने को समझ में आता है कि बात ठीक है।

आपकी निर्बलता हम जानते हैं। और निर्बलता होती ही है। इसीलिए हमारी सहज क्षमा होती है। क्षमा देनी पड़ती नहीं है, मिल जाती है, सहज भाव से। सहज क्षमा गुण तो अंतिम दशा का गुण कहलाता है। हमें सहज क्षमा होती है। इतना ही नहीं पर आपके लिए हमें एक समान प्रेम रहता है। जो बढ़े-घटे वह प्रेम नहीं होता है, वह आसक्ति है। हमारा प्रेम बढ़ता-घटता नहीं है, वही शुद्ध प्रेम, परमात्म प्रेम है।

तब प्रकट हो, मुक्त हास्य

प्रश्नकर्ता : एक अक्षर भी आपका पहुँचे तो निर्दोषता आ जाए।

दादाश्री : और हमारा अक्षर भी पहुँचते देर नहीं लगती। यह ज्ञान जो दिया हुआ है न, इसलिए एक अक्षर भी पहुँचने में देर नहीं लगती।

जगत् पूरा निर्दोष दिखेगा, तब मुक्त हास्य उत्पन्न होगा। भार बिना का मुक्त हास्य उत्पन्न होता ही नहीं, ऐसा नियम है। एक भी मनुष्य दोषित

दिखे न, तब तक हास्य उत्पन्न नहीं होता है। और मुक्त हास्य से मनुष्य कल्याण कर देता है। मुक्त हास्य के एक बार दर्शन करे न, तब भी कल्याण हो जाए। वह तो अब खुद उस रूप होना पड़ेगा। खुद हो जाए तो सारा ठीक हो जाए। हमेशा सिर्फ पर्सनालिटी ही कोई काम नहीं करती। खुद का जो चारित्र है वह बहुत बड़ा काम करता है। इसलिए ही तो शास्त्रकारों ने कहा है कि ज्ञानी पुरुष एक उँगली पर पूरा ब्रह्मांड उठा सकते हैं। क्योंकि चारित्रबल है। चारित्रबल मतलब क्या? निर्दोष दृष्टि। निर्दोष दृष्टि दादा के पास सुनी और अभी तो प्रतीति में आई है। हमें अनुभव में होती है। प्रतीति आपको बैठी है ज़रूर, पर अभी वर्तन में आते हुए देर लगेगी न? बाकी मार्ग यही है। मार्ग आसान है और कोई परेशानी आए ऐसा नहीं है।

जय सच्चिदानंद

मूल गुजराती शब्दों के समानार्थी शब्द

ऊपरी : बॉस, वरिष्ठ मालिक

कल्प : कालचक्र

गोठवणी : सेटिंग, प्रबंध, व्यवस्था

नोंध : अत्यंत राग अथवा द्वेष सहित लम्बे समय तक याद रखना, नोट करना

नियाणां : अपना सारा पुण्य लगाकर किसी एक वस्तु की कामना करना

धौल : हथेली से मारना

सिलक : राहखर्च, पूँजी

तायफ़ा : फज़ीता

उपलक : सतही, ऊपर ऊपर से, सुपरफ्लुअस

कढ़ापा : कुढ़न, क्लेश

अजंपा : बेचैनी, अशांति, घबराहट

दादा भगवान फाउन्डेशन के द्वारा प्रकाशित हिन्दी पुस्तकें

१. ज्ञानी पुरूष की पहचान
२. सर्व दु:खों से मुक्ति
३. कर्म का विज्ञान
४. आत्मबोध
५. मैं कौन हूँ ?
६. वर्तमान तीर्थंकर श्री सीमंधर स्वामी
७. भूगते उसी की भूल
८. एडजस्ट एवरीव्हेयर
९. टकराव टालिए
१०. हुआ सो न्याय
११. चिंता
१२. क्रोध
१३. प्रतिक्रमण
१४. दादा भगवान कौन ?
१५. पैसों का व्यवहार
१६. अंत:करण का स्वरूप
१७. जगत कर्ता कौन ?
१८. त्रिमंत्र
१९. भावना से सुधरे जन्मोंजन्म
२०. पति-पत्नी का दीव्य व्यवहार
२१. माता-पिता और बच्चों का व्यवहार
२२. समझ से प्राप्त ब्रह्मचर्य
२३. आप्तवाणी-१
२४. मानव धर्म
२५. सेवा-परोपकार
२६. निजदोष दर्शन से... निर्दोष
२७. अहिंसा
२८. प्रेम
२९. क्लेष बिना का जीवन

★ **दादा भगवान फाउन्डेशन के द्वारा गुजराती भाषा में भी ५५ पुस्तकें प्रकाशित हुई है। वेबसाइट www.dadabhagwan.org पर से भी आप ये सभी पुस्तकें प्राप्त कर सकते हैं।**

★ **दादा भगवान फाउन्डेशन के द्वारा हर महीने हिन्दी, गुजराती तथा अंग्रेजी भाषा में ''दादावाणी'' मैगेज़ीन प्रकाशित होता है।**

प्राप्तिस्थान

दादा भगवान परिवार

अडालज : त्रिमंदिर संकुल, सीमंधर सिटी, अहमदाबाद-कलोल हाईवे, पोस्ट : अडालज, जिला : गांधीनगर, गुजरात - ३८२४२१.
फोन : (०७९) ३९८३०१००,
email : info@dadabhagwan.org

अहमदाबाद : दादा दर्शन, ५, ममतापार्क सोसाइटी, नवगुजरात कॉलेज के पीछे, उस्मानपुरा, अहमदाबाद-३८००१४.
फोन : (०७९)२७५४०४०८, २७५४३९७९

राजकोट : त्रिमंदिर, अहमदाबाद-राजकोट हाईवे, तरघड़िया चोकड़ी, पोस्ट : मालियासण, जिला : राजकोट. फोन : ९९२४३४३४७८

भुज : त्रिमंदिर, हिल गार्डन के पीछे, सहयोगनगर के पास, एयरपोर्ट रोड, भुज (कच्छ), गुजरात. संपर्क : ०२८३२ २३६६६६

मुंबई : ९३२३५२८९०१ **पुणे** : ९८२२०३७७४०

वड़ोदरा : (०२६५)२४१४१४२ **बेंगलूर** : ९३४१९४८५०९

कोलकता : ०३३-३२९३३८८५

U.S.A. : **Dada Bhagwan Vignan Institue : Dr. Bachu Amin,** 100, SW Redbud Lane, Topeka, Kansas 66606.
Tel : 785-271-0869, E-mail : bamin@cox.net
Dr. Shirish Patel, 2659, Raven Circle, Corona, CA 92882, Tel. : 951-734-4715,
E-mail : shirishpatel@sbcglobal.net

U.K. : **Dada Centre**, 236, Kingsbury Road, (Above Kingsbury Printers), Kingsbury, London, NW9 0BH, **Tel. :** 07956476253,
E-mail: dadabhagwan_uk@yahoo.com

Canada : **Dinesh Patel,** 4, Halesia Drive, Etobicock, Toronto, M9W 6B7. **Tel. :** 416 675 3543
E-mail: ashadinsha@yahoo.ca

Canada : +1 416-675-3543 **Australia** : +61 421127947

Dubai : +971 506754832 **Singapore** : +65 81129229

Website : www.dadabhagwan.org, www.dadashri.org

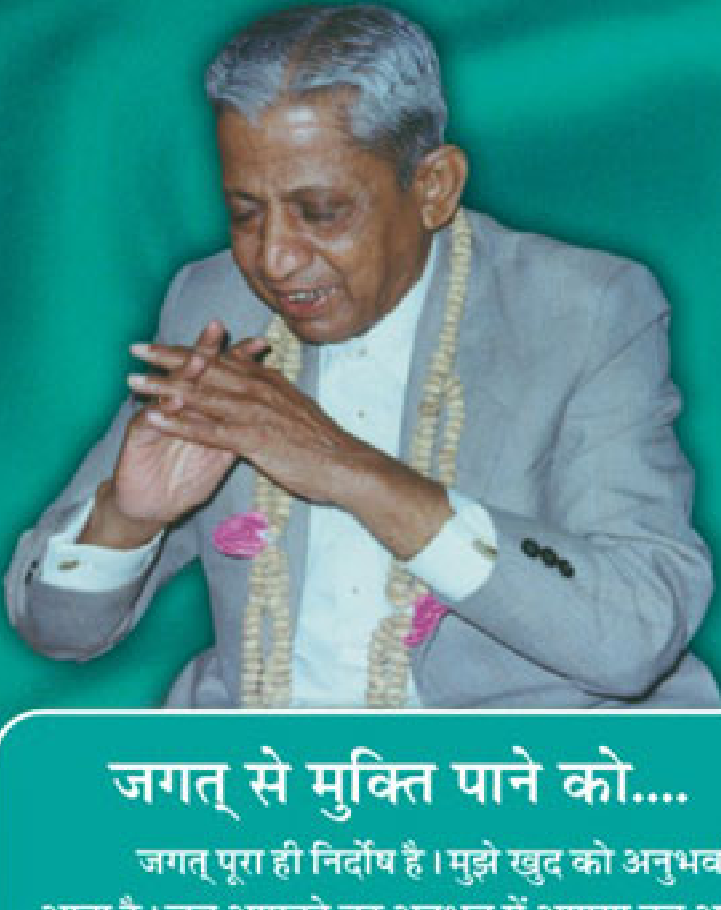

जगत् से मुक्ति पाने को....

जगत् पूरा ही निर्दोष है। मुझे खुद को अनुभव में आता है। जब आपको वह अनुभव में आएगा तब आप इस जगत् से मुक्त हुए। नहीं तो, कोई एक भी जीव दोषित लगेगा तब तक आप मुक्त नहीं हुए।

– दादाश्री